श्री महावीर ग्रंथ अकादमी—पंचम पुष्प

आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर

[१६ वीं शताब्दि के पांच प्रतिनिधि कवियों—आचार्य सोमकीर्ति, सांगु, ब्रह्म गुणकीर्ति, भ. यशःकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर के जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व के साथ में उनकी ३७ कृतियों के मूल पाठों का संकलन]

लेखक एवं सम्पादक

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

एम. ए., पी-एच. डी., शास्त्री

प्रकाशक

श्री महावीर ग्रंथ अकादमी, जयपुर

मूल्य 60/-

सरंक्षक की ओर से

श्री महावीर ग्रंथ अकादमी का पञ्चम पुष्प "आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर" को पाठकों के हाथों में देते हुए हमें अतीव प्रसन्नता है। इस प्रकार अका-दमी की २० भागों के प्रकाशन की योजना का २५ प्रतिशत कार्य पूरा हो चुका है। इस पुष्प के साथ अब तक जिन अज्ञात एवं अल्प-ज्ञात हिन्दी जैन कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला जा चुका है। उनका विवरण निम्न प्रकार है—

	कवि का नाम	समय	मूल कृतियों की संख्या	भाग
१	महाकवि ब्रह्म रायमल्ल	१६–१७वीं शताब्दी	४	प्रथम
२	भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति	"	१	"
३	कविवर बूचराज	१६वीं शताब्दी	८	द्वितीय
४	" छीहल	"	६	"
५	" ठक्कुरसी	"	१३	"
६	" गारवदास	"	१	"
७	" चतुरुमल	"	२	"
८	महाकवि ब्रह्म जिनदास	१५वीं शताब्दी	१४	तृतीय
९	भट्टारक रत्नकीर्ति	१७वीं शताब्दी	३७	चतुर्थ
१०	" कुमुदचन्द्र	"	६३	"
११	" अभयचन्द्र	"	१	"
१२	" शुभचन्द्र	"	३	"
१३	" रत्नचन्द्र	"	—	"
१४	" श्रीपाल	"	१	"
१५	" जयसागर	"	—	"
१६	" चन्द्रकीर्ति	"	—	"
१७	" गणेश	"	—	"
१८	आचार्य सोमकीर्ति	१६वीं शताब्दी	४	पञ्चम
१९	कविवर सांगु	"	१	"

२०	ब्रह्म गुणकीर्ति	१६वीं शताब्दी	१	पञ्चम
२१	भट्टारक यशःकीर्ति	,,	४	,,
२२	ब्रह्म यशोधर	,,	२६	,,
			१६०	

इस प्रकार १६वीं एवं १७वीं शताब्दी के ५२ प्रतिनिधि कवियों का मूल्याङ्कन एवं उनकी छोटी-बड़ी १६० कृतियों का प्रकाशन एवं महत्वपूर्ण उपलब्धि है, जिसके लिए अकादमी के निदेशक एवं प्रधान सम्पादक डॉ० कासलीवाल अभिनन्दनीय हैं। वास्तव में डॉ० कासलीवाल का यही प्रयत्न रहा है कि अज्ञात कोनों में से प्राचीन सामग्री एवं परम्पराओं का अन्वेषण कर उन्हें प्रकाश में लावें। प्रस्तुत ग्रन्थ भी उनकी इसी शुभवृत्ति का सुफल है। प्रस्तुत ग्रंथ के लेखक एवं प्रधान सम्पादक भी डॉ. कासलीवाल ही हैं। वैसे तो वे गत ३५ वर्षों से साहित्यिक कार्यों में संलग्न हैं लेकिन गत ४ वर्षों से तो उनका पूरा समय ही साहित्य देवता के लिए समर्पित है।

पंचम भाग के सम्पादक मण्डल के सदस्यों में डॉ० महेंद्रसागर प्रचंडिया अलीगढ़, श्री नाथूलाल जैन, मुख्य अभियन्ता राजस्थान सरकार, जयपुर एवं श्रीमती डॉ० कोकिला सेठी हैं। तीनों ही विद्वानों ने प्रस्तुत ग्रंथ के सम्पादन में जो परिश्रम किया है उसके लिए हम इनके आभारी हैं। आशा है अकादमी को सभी विद्वानों का भविष्य में भी सहयोग प्राप्त होता रहेगा।

अकादमी की लोकप्रियता में निरन्तर वृद्धि हो रही है। चतुर्थ भाग का विमोचन पूज्य क्षुल्लक रत्न १०५ श्री सिद्धसागर जी महाराज द्वारा भागलपुर में इन्द्रध्वज विधान महोत्सव पर हुआ था और उन्हीं की प्रेरणा से विमोचन समारोह में मैंने स्वयं ने देखा था कि, उपस्थित समाज ने अकादमी की साहित्यिक योजना में अपना पूर्ण सहयोग देने में प्रसन्नता प्रकट की थी। चतुर्थ भाग के प्रकाशन के पश्चात् अ. भा. दि. जैन महासभा के उत्साही अध्यक्ष एवं श्रावक रत्न श्री निर्मलकुमार जी सेठी, सरिया लखनऊ (बिहार) के प्रसिद्ध समाज सेवी श्री महावीर प्रसाद जी सेठी एवं जयपुर के उद्योगपति श्री कमलचन्द जी कासलीवाल ने अकादमी का संरक्षक सदस्य बनने की अतिकृपा की है उसके लिए हम तीनों ही महानुभावों के आभारी हैं। इसी तरह मूडबिद्री के भट्टारक एवं पण्डिताचार्य स्वस्ति श्री चारुकीर्ति जी महाराज ने अकादमी का परम संरक्षक बनने की स्वीकृति दी है। भट्टारक जी महाराज स्वयं साहित्य-प्रेमी, अच्छे वक्ता एवं लेखक हैं। अकादमी को आपके द्वारा जो संरक्षण प्राप्त हुआ है हम उसके लिये पूर्णाभारी हैं। वैसे अकादमी के पाँचों ही प्रकाशन मध्य काल में होने वाले भट्टारकों एवं उनके शिष्य प्रशिष्यों की अभूतपूर्व साहित्यिक सेवा के

परिचायक हैं। वास्तव में डॉ० कासलीवाल ने अपने इन प्रकाशनों द्वारा भट्टारकों के साहित्यिक एवं सांस्कृतिक योगदान को पुनः प्रकाश में लाकर समाज का प्रशस्त मार्गदर्शन किया है।

चतुर्थ भाग के विमोचन के पश्चात् हम सभी नये उपाध्यक्षों सर्वश्री तिलकचन्द बाकलीवाल, पद्मकुमार जैन नेपालगंज, सम्पतराय अग्रवाल कटक, रतनलाल गंगवाल यवंथा भागलपुर एवं डॉ० ताराचन्द बख्शी जयपुर का हार्दिक स्वागत करते हैं। सभी उपाध्यक्ष हमारे समाज के जाने माने सज्जन हैं तथा सामाजिक क्षेत्र में इनका महत्व-पूर्ण योगदान रहता है। इसी तरह संचालन समिति के सभी माननीय नये सदस्यों एवं विशिष्ट सदस्यों के प्रति आभार प्रकट करता हूं जिन्होंने अपना सहयोग देकर अकादमी को गति प्रदान की है। मैं सर्वश्री मागीलाल सेठी सुजानगढ़ एवं ताराचंद प्रेमी फिरोजपुर—झिरका का विशेष आभारी हूं जो स्वयं अकादमी के सदस्य बन गये हैं एवं अन्य महानुभावों को भी सदस्य बनाने में अपना पूर्ण सहयोग देते हैं। हम चाहते हैं कि षष्टम भाग के प्रकाशन के पूर्व अकादमी की सदस्य संख्या कम से कम ५०० तक पहुंच जाय। आशा है कि इस दिशा में सभी का सहयोग प्राप्त होगा।

पूनमचन्द गंगवाल

झरिया (बिहार)
दिनांक १०-८-८२

सम्पादकीय

वैदिक, बौद्ध और जैन साहित्य मिलकर भारतीय साहित्य के रूप को स्वरूप प्रदान करते हैं। वैदिक साहित्य के लिए वेद, बौद्ध-वाङ्मय के लिए पिटक और जैन साहित्य के लिये आगम शब्द का व्यवहार आरम्भ से ही होता रहा है। सम्पूर्ण आगम को (१) प्रथमानुयोग, (२) करणानुयोग, (३) चरणानुयोग, तथा (४) द्रव्यानुयोग इन चार भागों में विभाजित किया गया है।

प्रथमानुयोग के शास्त्रों में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष अथवा जिनेन्द्र देवों पर आधृत अनेक ज्ञानपूर्ण कथाएं तथा पुराणों का समावेश है। करणानुयोग के शास्त्रों में कर्म सिद्धान्त और लोक व्यवहार का विशद व्याख्यान है। चरणानुयोग के शास्त्रों में श्रावक तथा यति अर्थात् साधु-संगठन और आचार-संहिता का विशद विधान वर्णित है। द्रव्यानुयोग के शास्त्रों में चेतन-अचेतन, षट्द्रव्यों तथा तत्व लक्षणों का विस्तार पूर्वक विश्लेषण किया गया है।

प्राकृत भाषा अपने अनेक प्रांतीय रूपों को समेटती भारतीय-संस्कृति को शब्दायित करती रही है। मागधी, अर्द्धमागधी, पालि आदि रूपों को ग्रहण करती हुई उसका जो रूप घिस-पिस कर स्थिर हुआ वह अपभ्रंश के नाम से समाहृत हुआ। अपभ्रंश के वक्ष से पुरानी हिन्दी ब्रजभाषा का आदिम रूप उगा—अंकुरित और पल्लवित हुआ। इस प्रकार उकार बहुल ब्रजभाषा हिन्दी का आदिम रूप अपभ्रंश के क्रोड से उत्पन्न हुआ। संस्कृत हिन्दी की जननी है, यह धारणा भाषा-विज्ञान की दृष्टि से चिरञ्जीवी नहीं रह सकी।

राजस्थानी डिंगल और पिंगल स्वरूपा हिन्दी विविध कालों में अपने—अपने समुदाय और समाज के स्वरूप को अभिव्यक्ति देती रही है। राज्याश्रित कवियों द्वारा राज—सत्ता और महत्ता का सातिशय वर्णन शब्दायित हुआ। कहीं कहीं अमुक-अमुक काव्य—धाराओं से अनुप्रेरित कवियों ने तत्सम्बन्धी संकीर्ण विचारणाओं को व्यक्त किया है। इस प्रकार काल-क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए हिन्दी साहित्य का कलेवर वृद्धङ्गत होता गया।

पदयात्री संतों की अपनी एक परम्परा रही है। जैन सन्त इस परम्परा के नायक और उन्नायक रहे हैं। जैन मुनियों, आचार्यों तथा सिद्ध-साधकों, मनीषियों ने देश के प्रधान-उपप्रधान तथा क्षेत्रीय भाषा और उपभाषाओं में जनकल्याणकारी

विपुल साहित्य की आगम के अनुकूल रचना की है, फलस्वरूप इसमें शुभ, सत्य और सुखद सम्भावनाओं का समीकरण आरम्भ से ही परिलक्षित है। जैन साहित्य जिन-वाणी संग्रहों में सुरक्षित रहा जिसके स्वाध्याय की नियमित परम्परा जैन समुदाय में विद्यमान रही। देश में अनेक 'स्वाध्याय शैलियाँ' स्थिर हुयीं जिनके द्वारा शास्त्र-प्रवचन, शंका समाधान, तत्त्व चर्चा आदि दृष्टियों से साहित्य का अध्ययन-अनुशीलन चलता रहा।

कालान्तर में जब साहित्यिक इतिहास रचे गये तब हिन्दी भाषा में रची गई कृतियों की खोज-खबर ली गई। शक्ति और सामर्थ्यानुसार जिन-जिन साहित्याचार्यों ने काम किये वे अनुशंसित हुए परन्तु जैन हिन्दी साहित्य को प्रकाश में लाने और उसे हिन्दी साहित्य के सिंहासन पर प्रतिष्ठित करने-कराने का श्रेय महापण्डित राहुल सांकृत्यायन, नाथूराम प्रेमी, बाबू कामताप्रसाद जैन, मुनिश्वर जिनविजय जी महाराज आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, पंडित अगरचन्द नाहटा तथा डॉ० रामसिंह तोमर आदि अनेक अनुसंधित्सुओं और साहित्य-साधकों को रहा है परिणामस्वरूप आज साहित्यिक इतिहास नये सिरे से रचे जाने लगे हैं।

जैन कवियों ने हिन्दी में आरम्भ से ही लिखना आरम्भ कर दिया और बड़ी विशेषता यह है कि अभिव्यक्ति के अनेक रूपों को स्थिर करने में इन कवियों ने अगुवा बनकर जिस सृजनात्मक भूमिका का निर्वाह किया वह विद्वत् समाज में आज भी समादृत है। भाव-सम्पदा, भाषा अलंकार छन्द, व्याकरण, काव्य रूप तथा शैली शिल्प आदि अनेक काव्य शास्त्रीय दृष्टि से यदि जैन हिन्दी साहित्य को अन्वित और और समन्वित नहीं किया गया तो हिन्दी साहित्य कभी पूर्ण नहीं कहा जा सकता, यह वस्तुतः गवेषणात्मक सत्य है।

अनेक अब्दियों और दशाब्दियों पूर्व जब मेरी पहले-पहल अनुसन्धान की दृष्टि से राजस्थानी-यात्रा प्रारम्भ हुई थी उस समय हिन्दी जैन साहित्य को उजागर करने का प्रश्न सामने आया था। अनेक शोधार्थियों की समस्या और उसके समाधान पर आदरणीय प्रियवर डॉ० कस्तूरचन्द जी कासलीवाल, पं० अनूपचन्द जी शास्त्री आदि जयपुरिया साहित्यिक खोजियों से विचार-विमर्श हुए और तय हुआ कि लुप्त विलुप्त भांडारों में भरी पड़ी सामग्री को प्रकाशित कराया जाय। दशाब्दियों बाद यह सौभाग्य बन पाया कि श्री महावीर ग्रंथ अकादमी के माध्यम से हिन्दी साहित्य को इस रूप में व्यवस्थित और प्रकाशित किया जा रहा है। हर्ष का विषय है कि मुझ जैसे अनेक भाइयों के निर्देशन में अनेक विश्वविद्यालयों के अधीन, पी-एच० डी० उपाधि के लिए हिन्दी जैन कवियों पर अध्ययन हुआ है और कार्य चल रहा है।

इस कार्य सम्पादन में भाई कासलीवाल जी को कितने पापड़ बेलने पड़े हैं, इसकी प्रतीति मुझे है, वस्तुतः विचारणीय बात है। वे इस भागीरथ काम को पार लगा रहे हैं वस्तुतः बहुत बड़ी बात है।

सामाजिक श्रेष्ठियों को इस दिशा में सक्रिय सहयोग देना चाहिए ताकि जिनेन्द्र वाणी—हिन्दी साहित्य धारा में भी समवेत होकर कल्याणकारी मार्ग का प्रवर्तन कर सके।

अकादमी के प्रस्तुत पंचमी पुष्प में सोलहवीं शताब्दी के समर्थ कविमनीषी सोमकीर्ति, ब्रह्म यशोधर, सांगु, गुणकीर्ति तथा यशःकीर्ति का प्रामाणिक व्यक्तित्व तथा कृतित्व परक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी के समकालीन गुरु नानक, कबीरदास, चरणदास, अनन्तदास तथा पुरुषोत्तम आदि अनेक कवि उल्लेखनीय हैं जिनके साथ इन कवियों का तुलनात्मक तथा साहित्यिक मूल्याङ्कन होना चाहिए। मान्य शोध—निदेशक—बन्धुओं से निवेदन है कि वे कतिपय मेधावी शोधार्थियों का चयन कर जैन कवियों के साहित्य का स्तरीय अङ्कन और मूल्याङ्कन प्रस्तुत करावें।

इस प्रकार प्रस्तुत पुष्प के प्रकाशन की आवश्यकता-उपयोगिता असंदिग्ध है। आशा ही नहीं पूरा भरोसा है कि श्री महावीर ग्रंथ अकादमी की यह पुष्प-प्रकाशन की परम्परा चिरञ्जीवी रहेगी और हिन्दी साहित्यिक के कलेवर को अभिवृद्ध करेगी तथा साहित्यक कुलकरों की कुल-कीर्ति को सुरक्षित रख सकेगी। हम इस मूल्यवान योजना के सतत् साफल्य की हार्दिक मंगल कामना करते हैं।

आगरा रोड
अलीगढ़
२९.७.८२

महेन्द्र सागर प्रचंडिया
कृते सम्पादक मण्डल

लेखक की कलम से

राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा की पाण्डुलिपियों के लिये राजस्थान के जैन ग्रन्थागार विशाल भण्डार हैं जिनमें सैंकड़ों महत्वपूर्ण, अज्ञात एवं अल्प–ज्ञात कृतियों का संग्रह मिलता है । इस दृष्टि से जैनाचार्यों, भट्टारक गण एवं विद्वानों की साहित्यिक सेवाएं अत्यधिक उल्लेखनीय है । जिन्होंने विगत ६००–७०० वर्षों से अपनी सैंकड़ों कृतियां साहित्यिक जगत् को भेंट करके अपने हिन्दी प्रेम को प्रदर्शित किया है और आज भी कर रहे हैं । प्रस्तुत पञ्चम भाग में १६ वीं शताब्दि के पांच ऐसे ही कवियों को लिया गया है जो राजस्थानी/हिन्दी के लिये समर्पित रहे है तथा जिनका व्यक्तित्व एवं कृतित्व दोनों ही विद्वानों के लिए अज्ञात अथवा अल्पज्ञात रहा है ।

सोमकीत्ति १६ वीं शताब्दि के प्रथम चरण के कवि थे । राजस्थानी उनकी प्रिय भाषा थी जिसमें उन्होंने दो बड़ी एवं पांच छोटी रचनायें निबद्ध की थी । 'गुरु नामावली' में उन्होंने राजस्थानी गद्य का प्रयोग करके गद्य साहित्य की लेखन परम्परा को बहुत पीछे ला पटका है । राजस्थानी/हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिये गुरु नामावली एक महत्वपूर्ण कृति है । संवत् १५१८ (सन् १४६१) में निर्मित यह कृति गद्य पद्य मिश्रित है । यह संस्कृत की चम्पू कृति के समान है । कवि ने अपने गद्य भाग को बोली लिखा है जिसमें यह स्पष्ट है ऐसी ही भाषा उस समय बोलचाल की भाषा थी और उसे बोली कहा जाता था । बोलचाल की भाषा के लोकप्रिय शब्द कुण, आपणा, बोलता, ढीली, नयर, पालखी, इसी, इणी, का खूब प्रयोग हुआ है । सोमकीत्ति अपने युग के प्रभावशाली भट्टारक थे । काष्ठासंघ की भट्टारक गादी के सर्वोपरि साधु थे । साथ में वे भाषा शास्त्री भी थे । संस्कृत कृतियों के साथ ही राजस्थानी में कृतियों का लेखन उनकी राजस्थानी के प्रति गहरी रुचि का सफल है ।

सांगु इस काल के दूसरे कवि थे । अभी तक इनकी एक ही कृति 'सुकोसल राय चुपई' उपलब्ध हो सकी है लेकिन यह एक ही कृति कवि की काव्य प्रतिभा परिचय के लिये पर्याप्त है । यह एक लघु प्रबन्ध काव्य है जिसमें काव्य–गत सभी लक्षण विद्यमान है काव्य पूरा रोमाञ्चक है जिसमें कभी विवाह, कभी युद्ध, कभी

गृह त्याग, कभी तपस्या एवं कभी उपसर्ग के समय का वर्णन मिलता है।

महाकवि ब्रह्म जिनदास के शिष्य ब्रह्म गुणकीर्त्ति इस पुष्प के तीसरे कवि हैं जिनका परिचय भी साहित्य जगत् को प्रथम बार मिल रहा है। रामसीतारास एक खण्ड काव्य है जो राजस्थानी भाषा की अत्यधिक सुन्दर कृति है। महाकवि तुलसीदास के १४० वर्ष पूर्व रचित यह एक लघु रामायण है जो अपने गुरु महाकवि ब्रह्म जिनदास के रामरास का मानों लघु संस्करण है। रामसीतारास भाव, भाषा, शैली एवं विषय की दृष्टि से उत्तम कृति है।

चौथे कवि भ. यशःकीर्ति हैं जिनके दो पद एवं दो लघु रचनायें प्रस्तुत ग्रंथ में दिये गये हैं।

ब्रह्म यशोधर पांचवें कवि हैं जो भ. यशःकीर्ति के प्रशिष्य एवं विजयसेन के शिष्य थे। भ. यशोधर अपने युग के जबरदस्त प्रभावशाली कवि थे जिनका समस्त जीवन साहित्य सेवा में समर्पित रहता था। यद्यपि वे भट्टारक नहीं थे किन्तु उनकी ख्याति एवं सम्मान किसी भट्टारक से कम नहीं था। साहित्य रचना के क्षेत्र में तो वे अपने गुरु से भी आगे थे। उन्होंने चुपई संज्ञक काव्य लिखा, नेमिनाथ, वासुपूज्य एवं मल्लिनाथ पर स्तुति परक गीत लिखे, अपने गुरु की प्रशंसा में विजयकीर्त्ति गीत लिखा जिसे एक ऐतिहासिक गीत भी कहा जा सकता है, एवं विभिन्न राग रागनियों में नेमि राजुल से सम्बन्धित पद लिखे। बलिभद्र चुपई एक ऐसा प्रबन्ध काव्य है जिसमें कवि की काव्य प्रतिभा के स्थान २ पर दर्शन होते हैं। नेमिनाथ गीत में कवि ने गागर में सागर भरने जैसा कार्य किया है। वर्णन इतना रोचक है कि पढ़ते ही कवि के प्रति श्रद्धा के भाव जाग्रत होते हैं। भ. यशोधर द्वारा अपनी कृतियों में शब्दों का चयन भी पूर्ण विद्वत्ता के साथ किया है। कवि ने नेमिनाथ गीत में पान बीड़ी का उल्लेख किया है।[1] विवाह में पानों का बीड़ा देकर बरातियों का स्वागत करने की प्रथा है जो १५वीं शताब्दि में भी यथावत थी। इसी तरह 'लू' शब्द के लिये 'लूय' का प्रयोग किया है।[2] लूय शब्द ठेठ राजस्थानी भाषा का शब्द है।

भाषा के अध्ययन की दृष्टि से इन पांचों ही कवियों की रचनायें महत्वपूर्ण हैं। जैन कवि अपनी रचनायें सरल बोलचाल की भाषा में निबद्ध करते रहे हैं। यद्यपि वे काव्य गत लक्षणों के आधार पर रचनायें निबद्ध करने में विश्वास नहीं रखते थे लेकिन फिर भी उनकी कृतियों राजस्थानी हिन्दी की अमूल्य कृतियां हैं

---

१. चोउ चंदन छड़ां फूलड़ां रे पान बीडीय अमूल/सा./५०/पृष्ठ संख्या २०१.
२. उह्लालि लू उह्ली वाय, तपन ताप तनु सह्यु न जाय ॥ १७३/ ,, १६१.

और उनमें वे सभी तत्त्व उपलब्ध होते हैं जो किसी एक काव्य में मिलने चाहिये ।

प्रस्तुत पुष्प में पांच कवियों की अब तक उपलब्ध सभी ३७ कृतियों के पाठ दिये गये है जिनमें से अधिकांश कृतियां प्रथम बार सामने आयी हैं। वास्तव में जैन ग्रंथागारों में राजस्थानी/हिन्दी ने अभी तक सैंकड़ों कृतियां हैं जिनके अस्तित्व का हमें पता नहीं है परिचय मिलना तो बहुत दूर की बात है। राजस्थान एवं गुजरात के शास्त्र भण्डारों में इन पांच कवियों की और भी कृतियां मिल सकती है।

आभार

पुस्तक के सम्पादक में डा. महेन्द्रसागर जी प्रचंडिया अलीगढ़, भाषा-शास्त्री श्री नाथूलाल जी जैन एडवोकेट जयपुर एवं श्रीमती डा. कोकिला सेठी का जो सहयोग मिला है उसके लिये में उनका पूर्ण आभारी हूं। डा. प्रचंडिया जी ने सम्पादकीय लिखा है जो कितने ही दृष्टियों में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। मैं अकादमी के सम्पादक मंडल के प्रमुख सदस्य एवं सहयोगी पं. अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ का भी आभारी हूँ जिनका मुझे साहित्यिक कार्यों में पूर्ण सहयोग मिलता रहता है।

अमृत कलश; किसान मार्ग
बरकत कालोनी
टोंक फाटक जयपुर,
८ अगस्त १९८२

डा. कस्तूर चन्द कासलीवाल

विषय सूची

क्रम संख्या	पृष्ठ संख्या
१. श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी का परिचय	
२. संरक्षक की ओर से	
३. सम्पादकीय	
४. लेखक की कलम से	
५. पूर्व पीठिका	१–२
६. आचार्य सोमकीर्ति	३–३२
कृतियाँ : (१) त्रेपनक्रिया गीत	२८
(२) आदिनाथ विनती	२९
(३) मल्लिजिन गीत	३०–३२
(४) यशोधर रास	३४–७३
(५) गुरु नामावली	७४–८६
(६) रिषभनाथ की धूलि	८७–९१
(७) लघु चिंतामणी पार्श्वनाथ जयमाल	९२
७ कविवर साँगु	९३–१०३
(८) सुकोसलराय चुपई	१०४–११९
८. ब्रह्म गुणकीर्ति	१२०–१२९
(९) रामसीतारास	१३०–१५६
९. भट्टारक यशःकीर्ति	१५७–१५९
(१०-११) यशःकीर्ति के पद	१५९–६०
(१२) योगी वाणी	१६१
(१३) चौबीस तीर्थंकर भावना	१६१–१६३

१०. ब्रह्म यशोधर १६४–१७६

(१४) बलिभद्र चपई १७७–१८३

(१५) विजयकीर्ति गीत १८४–१८५

(१६) वासुपूज्य गीत १८५–१८६

(१७) वैराग्य गीत १८७

(१८-१९) नेमिनाथ गीत (२) १८७–२०३

(२०) मल्लिनाथ गीत २०३–२०४

(२१-३७) पद साहित्य (१७ पद) २०४–२१३

११. अनुक्रमणिकाएं २१४

पूर्व पीठिका

इस भाग में संवत् १५१५ से १५६० तक होने वाले पांच हिन्दी जैन कवियों का जीवन, इतिहास एवं उनका मूल्यांकन प्रस्तुत किया जा रहा है। ये कवि हैं आचार्य सोमकीर्ति, सांगु, यशःकीर्ति, गुणकीर्ति, एवं ब्रह्म यशोधर। इसके पूर्व दूसरे भाग में हमने संवत् १५४० से १६०० तक के प्रतिनिधि कवियों—बूचराज, छीहल, ठक्कुरसी, चतुरुमल एवं गारवदास का जीवन परिचय एवं उनकी कृतियों का मूल्यांकन प्रस्तुत किया था साथ ही में उन कवियों की सभी छोटी बड़ी कृतियों के के पाठ भी दिये थे जिससे सभी पाठक गण उनके काव्यों का रसास्वादन कर सके।

संवत् १५१५ से १५६० तक के काल को हिन्दी साहित्य के इतिहास में दो भागों में विभक्त किया है। मिश्रबन्धु विनोद ने संवत् १५६० तक के काल को आदि-काल माना जाता है तथा १५६१ से आगे वाले काल को अष्टछाप कवियों के नाम से सम्बोधित किया है। रामचन्द्र शुक्ल ने भी इस काल का अष्टछाप नामकरण किया है। लेकिन वास्तव में यह काल भक्ति युग का आदिकाल था। एक ओर गुरु नानक एवं कबीर जैसे संत कवि अपनी कृतियों से जन-जन को अपनी ओर आकृष्ट कर रहे थे तो दूसरी ओर आचार्य सोमकीर्ति, भट्टारक यशःकीर्ति, सांगु एवं ब्रह्म यशोधर जैसे हिन्दी भाषा के जैन कवि अपनी कृतियों के माध्यम से समाज में अर्हद् भक्ति, पूजा, एवं प्रतिष्ठाओं का प्रचार कर रहे थे। समाज में भट्टारक परम्परा की नींव गहरी हो रही थी। उनकी जगह-जगह गादियां स्थापित होने लगी थी। भट्टारक गण एवं उनके शिष्य भी अपने आपको भट्टारक के साथ-साथ मुनि, आचार्य, उपाध्याय, एवं ब्रह्मचारी सभी नामों से संबोधित करने लगे थे। साथ ही में वे सब संस्कृत के साथ-साथ राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बना रहे थे। देश पर मुसलमानों का राज्य था जो अपनी प्रजा पर मनमाने जुल्म ढा रहे थे। ऐसी स्थिति में भी भट्टारकों एवं उनके शिष्यों ने समाज के मानस को बदलने के लिए तत्कालीन लोक भाषा में छोटे बड़े रास काव्यों, का पद एवं स्तवनों का निर्माण किया। दूसरे भाग में निर्दिष्ट कवियों के अतिरिक्त इन ४५ वर्षों में १५ से भी अधिक जैन एवं जैनेतर कवि हुए जिनमें कुछ के नाम निम्न प्रकार हैं—

जैन कवि		जैनेतर कवि	
१. आचार्य सोमकीर्ति	सं. १५१८	१. गुरुनानक	सं. १५२६-१५९६
२. कनकप्रभसूरि	सं. १५३०	२. कबीरदास	,, १५७५ से पूर्व
३. उपाध्याय ज्ञान सागर	सं. १५३१	३. चरणदास	,, (१५३६)
४. भट्टारक यशःकीर्ति	सं. १५३८	४. अनन्तदास	,, (१५५८)
५. ब्रह्म यशोधर	सं. १५८५ से पूर्व	५. हरिराम	,, (१५५८)
६. सांगु कवि	सं. १५५०	६. पुरुषोत्तम	,, (१५५८)
७. गुणकीर्ति	सं. १५२०		
८. संवेग सुन्दर उपाध्याय	सं. १५४८		
९. वाचक मतिशेखर			

गुरु नानक एवं कबीरदास से सभी परिचित हैं। ये कवि भारतीय जन मानस के कवि बन चुके हैं। अनन्तदास कबीर के शिष्यों में से थे जिन्होंने रैदास की परिचई कबीरदास की परिचई एवं त्रिलोचनदास की परिचई जैसे काव्यों की रचना की। हरिराम की गीताभानु प्रकाश (सं १५५८) तथा पुरुषोत्तम की धर्माश्वमेध (सं. १५५८) रचनायें मिलती हैं। इसी समय कुतबन शेख ने मृगावती तथा सेन कवि ने भी अपनी कविताओं के माध्यम से भक्ति रस की धारा को प्रवाहित किया।[1]

जैन कवियों में ज्ञानसागर ने संवत् १५३१ में श्रीपालरास की रचना की थी[1] इसकी एक प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर में उपलब्ध है। संवेगसुन्दर उपाध्याय ने संवत् १५४८ में सारसिखामन रास की रचना की थी तथा रामचन्द्र सूरि ने रजर्षि चरित की संवत् १५५० में रचना की थी। यह समय महाकवि ब्रह्म जिनदास से प्रभावित युग था जिन्होंने पचास से भी अधिक रासकाव्यों की रचना करके एक नया कीर्तिमान स्थापित किया था। इसलिए अधिकांश जैन कवि उन्हीं के पद चिह्नों पर चलकर रास नामान्तक काव्यों की रचना करने में लगे हुए थे।

---

१. मिश्र बन्धु विनोद-प्रथम भाग-पृष्ठ संख्या 111-113

आचार्य सोमकीर्ति

आचार्य सोमकीर्ति इस काल के प्रमुख प्रतिनिधि कवि थे। वे अपने युग के उद्भट विद्वान प्रमुख साहित्य सेवी एवं सर्वोच्च सन्त थे। वे योगी थे। आत्म साधना में तल्लीन रहते और अपने शिष्यों एवं अनुयायियों को उस पर चलने का उपदेश देते थे। वे प्रवचन करते, साहित्य सर्जन करते एवं अपने शिष्यों को साहित्य निर्माण करने की प्रेरणा देते। सोमकीर्ति प्राकृत, संस्कृत, राजस्थानी, गुजराती एवं हिन्दी के प्रकांड विद्वान थे। उन्होंने संस्कृत एवं हिन्दी दोनों ही भाषाओं को अपनी रचनाओं से उपकृत किया। उनका राजस्थान एवं गुजरात दोनों ही प्रमुख क्षेत्र रहे तथा जीवन भर इन क्षेत्रों में विहार करके जन-जन के जीवन को आत्म-साधना एवं अर्हद् भक्ति की ओर मोड़ते रहे। उनकी प्रेरणा से कितने ही मन्दिरों का निर्माण संपन्न हुआ। बीसों पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठाएं उनके निर्देशन में संपन्न हुई तथा हजारों जिन प्रतिमाएं प्रतिष्ठित होकर राजस्थान एवं गुजरात के विभिन्न मन्दिरों में विराजमान की गई। आचार्य सोमकीर्ति श्रमण संस्कृति, साहित्य एवं शिक्षा के महान् प्रचारक थे। ऐसे सन्त पर किस समाज एवं राष्ट्र को गर्व नहीं होगा।

लक्ष्मीसेन के दो शिष्य थे। एक भीमसेन एवं दूसरे धर्मसेन। दोनों ने ही अपनी अलग-अलग भट्टारक गादियां स्थापित की थी। इन्हीं भीमसेन के सोमकीर्ति प्रमुख शिष्य थे। काष्ठासंघ की एक गुर्वनामावली में भीमसेन का परिचय निम्न प्रकार दिया गया है :—

श्री लक्ष्मसेन पट्टोधरण. पावपंक छिदिय नहीं।
जे नरह नरिंदे वंदियि, श्री भीमसेन मुनिवर सही ॥2॥
सुरगिरि सिरि को चढ़ पाउकरि प्रतिक्लवंतो
कोवि रयणायर तीर, पुहत वय तरंतो।
कोई आयास पमाण, हत्थ करि गाहि कमंतो ॥
कट्ठसंघ संघगुण परिलहि दुविह कोईलहंतो
श्री भीमसेन पट्टह धरण गच्छ सिरोमणि कुलतिलो
जाणांति सुजाणह जाण नर श्री सोमकीर्ति मुनिवर भलो ॥3॥

सोमकीर्ति भीमसेन के कब संपर्क में आये तथा प्रारम्भ में उनके पास कितने वर्षों तक रहे इसकी जानकारी नहीं मिलती। इसके अतिरिक्त सोमकीर्ति के माता-पिता, जन्मस्थान, एवं शिक्षा-दीक्षा के बारे में भी कोई इतिहास उपलब्ध नहीं होता। लेकिन इतना अवश्य है कि उन्हें संवत् १५१८ में काष्ठासंघ नन्दीतट गच्छ की भट्टारक गादी पर अभिषिक्त किया गया था। उस दिन आषाढ़ सुदी अष्टमी थी। वे

८७ में भट्टारक थे।[1] उनका पट्टाभिषेक गुजरात के सौजित्रा नगर में शांतिनाथ के मन्दिर में हुआ था। भट्टारक श्री भूषण ने सोजित्रा का वर्णन करते हुए लिखा है—

श्रीगुर्जरे प्यस्ति पुरं प्रसिद्ध सोजित्र नमाभिधमेवसार।[2] सोजित्रा जैनधर्म एवं संस्कृति का केन्द्र था तथा काष्ठा संघ के भट्टारकों की यहां गादी थी। सोमकीर्ति संवत् १५१८ से प्रकाश में आये और अपने अन्तिम जीवन तक समाज के जगमगाते नक्षत्र रहे। श्री जोहरापुरकर ने अपने भट्टारक सम्प्रदाय में इनका समय संवत् १५२६ से १५४० तक दिया है जो इस पट्टावली से मेल नहीं खाता। संभवतः उन्होंने यह समय इनकी संस्कृत रचना सप्तव्यसनकथा के आधार पर दिया मालुम देता है क्योंकि कवि ने इसे संवत् १५२६ में समाप्त की थी।

सोमकीर्ति ने भट्टारक गादी पर बैठते ही गुजरात एवं राजस्थान के विभिन्न भागों में विहार किया तथा जन-जन से सम्पर्क करके उन्हें अहिंसा धर्म के परिपालन पर जोर दिया। उस समय देहली पर लोदी वंश का राज्य था। बहलोल लोदी दिल्ली का सुलतान था। ये मुस्लिम शासक इतने धर्मान्ध एवं असहिष्णु थे कि उन्हें मन्दिरों, मूर्तियों एवं ग्रन्थों के विध्वन्स के अतिरिक्त कुछ भी अच्छा नहीं लगता था। हिन्दुओं एवं जैनों में इतना भय व्याप्त था कि उन्हें अर्हद् भक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं दिखता था। भट्टारक उनके संरक्षक थे जिनका सम्बन्ध इन बादशाहों से भी अच्छा था। भट्टारक सोमकीर्ति के लिये ब्रह्म श्रीकृष्णदास ने लिखा है कि वे "यवनपतिकरांभोज संपूजितांध्रि थे अर्थात् भट्टारक सोमकीर्ति का यवन बादशाह भी सम्मान करते थे। इससे सोमकीर्ति के प्रभाव एवं यश में और भी वृद्धि हो गई। पहिले सन्त फिर प्रकाण्ड विद्वान, वक्ता और फिर बादशाह पर हाथ। वे तो सर्वगुण सम्पन्न हो गये। वे अत्यधिक प्रभावशाली थे। जहां विहार होता वहीं उनके भक्त बन जाते। साहित्य रचना वे स्वयं करते और समाज से व्रत विधान एवं प्रतिष्ठा विधान कराते। राजस्थान के मन्दिरों में उनके द्वारा प्रतिष्ठित पचासों मूर्तियां मिलती हैं। मूलसंघ के क्षेत्र में काष्ठासंघ का इतना जबरदस्त प्रभाव उनके स्वयं के व्यक्तित्व का सुपरिणाम था।

---

१. पनरहसिअठार मास आषाढह जाणु
अक्कवार पंचमी बहुल पक्षयह परवाणु।
पुव्वाभद्द नक्षत्र श्री सोभीत्री पुरवरि
सन्यासी पर पाट तणु प्रबन्ध जिणि परि॥

प्रतिष्ठा विधान

संवत् १५१८ में वे भट्टारक पद पर आसीन हुए। इसके पश्चात् उन्होंने देश में पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठाएं सम्पन्न करवाने में रुचि ली।

डूंगरपुर जिले के सुरपुर (सुर्यपुर) के मन्दिर में शीतलनाथ स्वामी की ४०''×४८'' अवगाहना वाली श्याम पाषाण की भट्टारक सोमकीर्ति द्वारा संवत् १५२२ में प्रतिष्ठित प्रतिमा है। इस प्रतिष्ठा में आचार्य श्री वीरसेन उनके सहायक थे तथा प्रतिष्ठा कराने वाले पंडित पदमा, समधर, सेहूआ सा. लखमा भीमा आदि श्रावक थे। राजस्थान में यह प्रथम मूर्ति है जो सोमकीर्ति द्वारा प्रतिष्ठित प्राप्त हुई है।[1]

संवत् १५२५ में इन्हीं के द्वारा प्रतिष्ठित जयपुर के समीप जयसिंहपुरा खोर के मन्दिर में भगवान पार्श्वनाथ की श्वेत पाषाण की प्रतिमा है। जयसिंहपुरा खोर प्राचीन समय में जैनों का प्रसिद्ध केन्द्र था। पहाड़ियों के मध्य में स्थित होने के कारण यह साधुओं के लिए चिन्तन मनन का अच्छा केन्द्र था। जयपुर का क्षेत्र मूल-संघ के भट्टारकों का गढ़ रहा है। इसलिए काष्ठासंघ के भट्टारकों द्वारा प्रतिष्ठित मूर्ति को विराजमान करना सोमकीर्ति एवं उनके शिष्यों के प्रभाव को सूचित करता है।

इसके पश्चात् संवत् १५२७ वैशाख सुदी ५ को इन्हीं भट्टारक द्वारा प्रतिष्ठित चौबीसी की प्रतिमा जयपुर के सिरमोरियों के मन्दिर में एवं दि० जैन मन्दिर संभव-नाथ उदयपुर में विराजमान हैं। दोनों चौबीसियों में आदिनाथ स्वामी की मूलनायक प्रतिमा है। यह प्रतिष्ठा नरसिंहपुरा जातीय श्रावक द्वारा सम्पन्न करवायी गयी थी। आचार्य वीरसेन भट्टारक सोमकीर्ति के सहयोगी थे।[2]

---

१. संवत् १५२२ वर्षे पौष सुदी ५ तिथौ श्री काष्ठासंघे भट्टारक सोमकीर्ति प्रतिष्ठितं श्री शीतलनाथ बिम्बं पंडित पदमा समधर सेहुआ सा० लखमा भीमा कारापितं शिष्य आचार्य श्री वीरसेन युक्तैः।

२. संवत् १५२७ वर्षे वैशाख बदी ५ गुरौ श्री काष्ठासंघे नन्दीतटगच्छे विद्यागणे भट्टारक श्री सोमकीर्ति आचार्य श्री वीरसेनयुग के प्रतिष्ठितं नरसिंहपुरा जातीय पडनहरगोत्रे सा. मोहनपी भार्या तेजु पुत्र ५ कडुआ भार्या २ ढाकुआ, रूपा। भार्या रूपा पुत्र भाऊ पुत्र जूठा नांदू पुत्र २ संवरु। सी. डुलुवी भार्या लक्ष्मी पुत्र सरवण सा. मुदरा भार्या भासु मो. सहदूराम भार्या लालू साकडआ, सेमाभा काकण श्री आदिनाथ बिम्बं करापितं।

भट्टारक सोमकीर्ति ने संवत् १५३३ फागुण शुक्ला ७ बुधवार को फिर एक पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा का नेतृत्व किया। जयपुर के ठोलियों के मंदिर में भगवान पार्श्वनाथ की धातु की उक्त पञ्चकल्याणक में प्रतिष्ठित मूर्ति विराजमान है।[1] इसके एक वर्ष पूर्व संवत् १५३२ में भी वीरसेन सूरि के साथ एक शीतलनाथ की मूर्ति का प्रतिष्ठा करवायी थी।[2]

संवत् १५३५ माघ सुदी ५ को सोमकीर्ति अहमदाबाद गये। वहां विशाल स्तर पर ५२ जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा की गयी। इस प्रतिष्ठा में भी सोमकीर्ति के साथ आचार्य वीरसेन और उनके शिष्य ब्र. नाना प्रमुख थे। प्रतिष्ठा कराने वाले थे प्रागवाट जातीय..........राणीसुत जोगदास।[3]

यद्यपि भट्टारक सोमकीर्ति का काल मुस्लिम काल था जिसमें मन्दिर एवं मूर्ति को तोड़ना जिहाद समझा जाता था लेकिन सोमकीर्ति का अपना प्रभाव था। वे श्रावकों के लिये रक्षक का कार्य करते थे तथा धार्मिक विधि विधानों को बड़े ठाट से सम्पन्न कराया करते थे। संवत् १५३६ में इन्होंने दो प्रतिष्ठाओं को अपना आशीर्वाद प्रदान किया। सर्व प्रथम बैशाख सुदी १० बुधवार को चतुर्विशति तीर्थंकर प्रतिमा की प्रतिष्ठा करायी इसमें प्रतिष्ठाकारक थे हूंबड जातीय वध्र गोत्र वाले गांधी भूपा भार्या राज सुत गांधीमना। मनागांधी की धर्मपत्नी का नाम काऊ था तथा पुत्र एवं पुत्र वधु का नाम हडा एवं जाडिकी था। वर्तमान में चौबीसी की प्रतिमा जयपुर के पाण्डे लूणकरण जी के मन्दिर में विराजमान है। जयपुर के पहिले यह प्रतिमा संभवत: आमेर में होगी। इससे यह पता चलता है कि बागड प्रदेश में सम्पन्न इस प्रतिष्ठा में आमेर, सांगानेर के जैन बन्धु भी सम्मिलित हुए थे। इस प्रतिष्ठा में भी भट्टारक सोमकीर्ति के प्रमुख शिष्य आचार्य वीरसेन साथ थे। इसी वर्ष दूसरी प्रतिष्ठा माघसुदी १५ गुरुवार को नरसिंह जातीय सापडिया

---

१. संवत् १५३३ वर्षे फागुण शुक्ला ७ बुधे श्री काष्ठासंघे नंद्याम्नाये भ. भीमसेन तत्पट्टे भ. श्री सोमकीर्ति प्रणमति।

२. संवत १५३२ वर्षे वैसाख सुदि ५ रवौ काष्ठासंघे नंदीतट गच्छे भ. श्री भीमसेन तत्पट्टे सोमकीर्ति आचार्य श्री वीरसेनसूरी युक्त प्रतिष्ठितं नरसिंह जातीय बोरहेक गोत्रे चापा भार्या परमू। भट्टारक सम्प्रदाय-पृष्ठ २६५

३. संवत् १५३५ वर्षे माघसुदी ५ गुरौ श्री काष्ठासंघे नंदितट गच्छे विद्यागणे भट्टारक श्री भीमसेन तत्पट्टे भ. श्री सोमकीर्ति शिष्य आचार्य श्री वीरसेन युक्तैः प्रतिष्ठितं अहमदाबाद वास्तव्ये श्री प्राग्वाट जातीय.......... राणी सुत जोगदासेन आचार्य श्री वीरसेन।

गोत्र वाले साह खेभारा भांभु के पुत्र सीवा ने सम्पन्न करायी थी। नरसिंहपुरा जाति प्रतापगढ़ की ओर रहती है। इसलिए सोमकीर्ति ने उधर ही किसी स्थान पर यह प्रतिष्ठा सम्पन्न करायी होगी। इस प्रतिष्ठा में उनके शिष्य वीरसेन प्रमुख थे। चौबीसी की एक प्रतिमा जयपुर के ही चौधरियों के मन्दिर में विराजमान है। चौबीसी में श्रेयान्स नाथ स्वामी की मूलनायक प्रतिमा है।[5]

प्रतिष्ठाओं का यह क्रम बराबर चलता रहा। भट्टारक सोमकीर्ति ने अपने जीवन में कितनी प्रतिष्ठाएं सम्पन्न करायी इसकी निश्चित संख्या बतलाना तो कठिन है क्योंकि राजस्थान के अभी सैंकड़ों मंदिर ऐसे हैं जिनके मूर्ति लेखों पर कार्य नहीं हो सका है लेकिन इतना अवश्य है कि अपने २५ वर्ष के भट्टारक काल में सोमकीर्ति ने ५० से अधिक पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं सम्पन्न करायी होंगी। अंतिम प्रतिष्ठा जिसका हमें उल्लेख मिला है वह है संवत् १५४० की बैशाख बुदी १० के शुभ दिन की प्रतिष्ठा जिसको नरसिंहपुरा जातीय मोकलवाड़ सा. महिपा एवं उसके परिवार के सदस्यों ने सम्पन्न करायी थी। इस प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठित भगवान संभवनाथ की एक प्रतिमा उदयपुर के दि. जैन मन्दिर संभवनाथ में विराजमान है। ऐसा मालुम होता है कि इस मंदिर का नामकरण इसी प्रतिष्ठा के साथ जुड़ा हुआ है।

विहार—

भट्टारक सोमकीर्ति कभी एक स्थान पर जम के नहीं रहे। उनका अधिकांश समय एक नगर से दूसरे नगर में विहार करने में ही समाप्त हुआ। राजस्थान एवं गुजरात प्रदेश के ग्राम एवं नगर उनके विहार के प्रमुख स्थान थे। कभी वे विधान सम्पन्न कराने जाते तो कभी प्रवचन के लिये उन्हें जाना पड़ता। कभी समाज पर आने वाली विपत्तियों को निवारणार्थ वे जाते तो कभी अपनी कृतियों के विमोचन समारोह में सम्मिलित होते। उनके विशाल व्यक्तित्व के सहारे समाज अपने आपको आश्वस्त मानता था। 'सोजित्रा' नगर उनका प्रमुख केन्द्र था। यहां उनकी गादी थी और पट्टाभिषेक हुआ था। मारवाड़ का गुढली नगर भी उनकी गतिविधियों का केन्द्र था। वहां शीतलनाथ स्वामी का मंदिर था जिसमें उनकी भट्टारक गादी थी। यशोधर

---

१. संवत् १५३६ वर्षे माघ सुदी १५ गुरौ श्री काष्ठासंघे नंदितटगच्छे विद्यागणे भट्टारक श्री भीमसेन तत्पट्टे भट्टारक श्री सोमकीर्ति शिष्य आचार्य श्री वीरसेन युक्तैः प्रतिष्ठितं नरसिंह जातीय सापडिया गोत्रे सा. पेभारा भांभु पुत्र लीबा भार्या लाडी पुत्र ४ मोइण रणधीर शिवादेवा सा. शिवा श्री श्रेयान्स नित्यं प्रणमति।

राम एवं यशोधर चरित्र दोनों को उन्होंने उसी नगर एवं मन्दिर में समाप्त किया था।

स्वागत

आचार्य सोमकीर्ति का जब विहार होता तो समाज में आनन्द का वातावरण छा जाता। हजारों स्त्री-पुरुष नगर के बाहर उनके स्वागत के लिए एकत्रित होते और बड़े समारोह पूर्वक उनको अपने यहां ले जाते। विविध वाद्य यंत्र बजाये जाते और बधावा गाये जाते। स्त्रियां कलश लेकर उनका स्वागत करती। उनकी आरती उतारी जाती। इस प्रकार सोमकीर्ति का विहार समाज में एक नये उत्साह को लेकर आता।

व्यक्तित्व

वे स्वयं विशाल व्यक्तित्व के धनी थे। उनके दर्शन मात्र से ही विरोधियों का मद गल जाता। जब वे प्रवचन करते तो श्रोताओं को अध्यात्म रस में डुबो देते। कथाओं के माध्यम से अपनी बात कहते तो लोगों को अर्हद पूजा, दर्शन एवं स्तवन का महात्म्य बतलाते। जीवन को सप्त व्यसनों से रहित बनाने पर जोर देते। भट्टारक रामसेन एवं भट्टारक भीमसेन दोनों का ही उन्हें आशीर्वाद प्राप्त था। वे संस्कृत, प्राकृत, गुजराती, राजस्थानी एवं हिन्दी के प्रकाण्ड विद्वान थे। वे वक्ता एवं लेखक दोनों ही थे। एक ओर वे संस्कृत में काव्य रचनाएं करते तो वहीं राजस्थानी में उससे भी अधिक काव्य कृतियां लिखना उनके लिए बहुत सरल कार्य था। वे किसी भी क्षेत्र में अपने आपको योग्यतम सिद्ध करते। यही कारण है कि तत्कालीन मुस्लिम शासक भी उनका पूर्ण सम्मान करते थे और उनका गुणानुवाद करते। समाज पर उनका वर्चस्व स्थापित था इसलिए जो भी कार्य चाहते उसे वे सरलता से सम्पन्न करा देते।

कृतित्व—

आचार्य सोमकीर्ति संस्कृत एवं राजस्थानी दोनों के ही प्रकाण्ड विद्वान एवं लेखनी के धनी थे इसलिए दोनों ही भाषाओं में उन्होंने रचनायें निबद्ध की है। उनकी संस्कृत एवं राजस्थानी कृतियों के नाम निम्न प्रकार है—

संस्कृत रचनाएं

१. सप्तव्यसन कथा समुच्चय
१. प्रद्युम्न चरित्र
३. यशोधर चरित्र।

४. अष्टान्हिका व्रत कथा ।
५. समवसरण पूजा ।

राजस्थानी रचनाएं

१. यशोधर रास ।
२. गुरु नामावली ।
३. रिषभनाथ की धूल ।
४. त्रेपन क्रिया गीत ।
५. आदिनाथ विनती ।
६. मल्लिगीत ।
७. चिन्तामणी पार्श्वनाथ जयमाल ।

सोमकीर्ति की संस्कृत रचनाओं का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

१. सप्तव्यसन कथा समुच्चय

यह कथा साहित्य की अच्छी कृति है। कथा समुच्चय में सात व्यसनों के आधार पर सात कथाएं दी हुई हैं। सात व्यसनों में जुआ खेलना, चोरी करना, शिकार खेलना, वेश्या सेवन, परस्त्री सेवन, मद्यपान, एवं मांस खाने को गिनाया गया है। इसमें सात सर्ग हैं। पूरी कृति दो हजार सडसठ श्लोकों में बनाकर समाप्त की गयी है। कथा समुच्चय भट्टारक रामसेन की कृपा से रचित ग्रन्थ है। कवि ने इसे संवत् १५२६ में समाप्त किया था। संभवतः कवि की यह संस्कृत में निबद्ध प्रथम रचना है। राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों में सप्तव्यसनकथा की पचासों प्रतियां मिलती है जो इसकी लोकप्रियता की ओर संकेत करती हैं। सबसे प्राचीन प्रति डूँगरपुर के शास्त्र भण्डार में हैं जो संवत् १६०५ की लिखीहुई है।[1] कथा समुच्चय का अन्तिम भाग निम्न प्रकार है—

> नन्दीतटाके विदिते हि संघे श्रीरामसेनस्य पदप्रसादत् ।
> विनिर्मितो मंदधिया ममायं विस्तारणीयो भुवि साधुसंघैः ॥६९॥
>
> यो वा पठति विमृश्यति भव्योपि (शु) भवनायुक्तः ।
> लभते स सौख्यमनिशं ग्रन्थं (श्री) सोमकीर्तिनारचितं ॥७०॥

१. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूची भाग पञ्चम-पृष्ठ संख्या ४९२।

रसनयनसमेते बाणयुक्तेन चन्द्रे (१५२६)
गतवति सति नूनं विक्रमस्यव काले ।
प्रतिपदि धवलायां माघ-मासस्य सोमे ।
हरिभदिनमनोज्ञे निर्मितो ग्रन्थ एषः ॥७१॥

सहस्राद्वयसंख्योऽयं सप्तषष्ठिसमन्वितः (२०६७) ।
सप्तैव व्यसनाद्यश्च कथासमुच्चयो ततः ॥७२॥

यावत्सुदर्शनो मेरुर्यावच्च सागराधरा ।
तावन्नन्दत्वयं लोके ग्रन्थो भव्यजनाश्रितः ॥७३॥

इति श्री इत्यार्षे भट्टारक-श्री धर्मसेनाभः श्री भीमसेन देवशिष्य-आचार्य सोमकीर्ति-विरचिते सप्तव्यसनकथासमुच्चये परस्त्रीव्यसनफलवर्णनो नाम सप्तमः सर्गः । इति सप्तव्यसनचरित्रकथा संपूर्णा ।

२. प्रद्युम्न चरित्र

प्रद्युम्न का जीवन चरित्र जैन कवियों के लिये बहुचर्चित रहा है । अब तक अपभ्रंश, संस्कृत, राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा में २५ कवियों के प्रद्युम्न चरितों का पता लगाया जा चुका है[1] इस काव्य में श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न के जीवन का वर्णन किया गया है । प्रद्युम्न की माता रुक्मणी थी । प्रद्युम्न की गिनती पुण्य पुरुषों में की जाती है । प्रस्तुत प्रद्युम्न चरित्र १६ सर्गों में विभक्त है जिसका रचनाकाल संवत् १५३१ पौष बुदी १३ बुधवार है । यह काव्य कवि ने अपने गुरु भट्टारक भीमसेन के प्रसाद से लिखा था ।

श्री भीमसेनस्य पदप्रसादात् सोमादिसत्कीर्तियुतेन सूमौ ।
रम्यं चरित्रं विततं स्वभक्त्या संशोध्य भव्यैः पठनीयमेतत ॥१६८॥

संवत्सरे सत्तिथिसंज्ञके वै वर्षेऽत्र त्रिंशैकयुते (१५३१) पवित्रे ।
विनिर्मितं पौषसुदेश्च तस्यां त्रयोदशी या बुधवारयुक्ता ॥१६९॥

३. यशोधर चरित्र

भट्टारक सोमकीर्ति ने यशोधर के जीवन पर संस्कृत एवं हिन्दी दोनों में

---

१. देखिये—प्रद्युम्न चरित्र की प्रस्तावना पृष्ठ—१३ ।
साहित्य शोध विभाग श्री दि. जैन अ. क्षेत्र श्रीमहावीरजी की ओर से प्रकाशित ।

रचनायें निबद्ध की हैं। इससे पता चलता है कि यशोधर की कथा उस समय बहुत ही लोकप्रिय थी। प्रस्तुत यशोधर चरित्र आठ सर्गों में विभक्त काव्य है जिसका रचना काल संवत् १५३६ है। इसकी रचना कवि ने गोढिल्ल मेदपाट (मेवाड़) के भगवान शीतलनाथ के सुरम्य मन्दिर में की थी। कवि ने इसको निम्न प्रकार लिखा है:—

नन्दीतटाख्यगच्छे वंशे श्री रामसेनदेवस्य।
जातो गुणार्णवैकश्च (वश्चैक:) श्री मांश्च (मान्) श्रीभीमसेनेति ॥६१॥

निर्मितं तस्य शिष्येण श्रीयशोधरसंज्ञकं।
श्रीसोमकीर्तिमुनिना विशोध्याऽधीयतां बुधा: ॥६१॥

वर्षे षट्त्रिशसंख्ये तिथि परिगणनायुक्तसंवत्सरे (१५३६) वै।
पंचम्यां पौषकृष्णे दिनकरदिवसे चोत्तरास्थे हि चन्द्रे।
गोढिल्यां मेदपाटे जिनवरभवने शीतलेन्द्रस्य रम्ये।
सोमादिकीर्तिनेदं नृपवरचरितं निर्मितं शुद्धभक्त्या ॥६२॥

कवि की अष्टाह्निकाव्रत कथा एवं समवसरण पूजा लघु रचनाएं हैं तथा कथा एवं पूजा विषयक हैं।

राजस्थानी कृतियां

भट्टारक सोमकीर्ति की राजस्थानी भाषा में निबद्ध सात रचनाओं की खोज की जा चुकी है। लेकिन राजस्थान एवं गुजरात के सभी कुछ ग्रन्थ-भण्डारों का सूचीकरण होना शेष है इसलिए संभव है कवि की और भी कृतियों की उपलब्धि हो सके। फिर भी जो कृतियां उपलब्ध हो चुकी है वे कवि की राजस्थानी भाषा पर अगाध विद्वत्ता की द्योतक है। सोमकीर्ति के पास संस्कृत एवं हिन्दी जानने वाले दोनों ही तरह की समाज आती थी इसलिए उन्होंने दोनों ही भाषाओं में काव्य रचना करना श्रेयस्कर समझा। वैसे उस युग में इस तरह की परम्परा भट्टारक सकलकीर्तिने डाली थी और उसका अनुकरण किया महाकवि ब्रह्म जिनदास, भट्टारक ज्ञानभूषण एवं भट्टारक शुभचन्द्र ने। सोमकीर्ति ने भी अपने पूर्ववर्ती मूलसंघ में होने वाले भट्टारकों का अनुसरण किया और अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त की।

कवि द्वारा राजस्थानी भाषा में निबद्ध सात रचनाओं में यशोधर रास सबसे बड़ी कृति है। इस काव्य का रचना काल नहीं दिया हुआ है। हाँ रचना स्थान का अवश्य उल्लेख किया हुआ है जो मेवाड़ का गुढली नगर है। जहां आपने

संवत् १५३६ में संस्कृत में यशोधर चरित्र की रचना की थी इसलिये यह सम्भव है कि इस काव्य की रचना भी संवत् १५३६ के आसपास ही हुई होगी ।

१. यशोधर रास

राजा यशोधर का जीवन जैन साहित्यकारों के लिए अत्यधिक रुचिकर रहा है। प्राकृत संस्कृत, अपभ्रंश, राजस्थानी एवं हिन्दी सभी भाषा के कवियों ने यशोधर के जीवन पर खूब लिखा है । महाकाव्य, चम्पूकाव्य, खण्ड काव्य, रास काव्य, चौपईबन्ध काव्य, बेलि, फागु एवं चरित नामान्तक सभी तरह के काव्य मिलते हैं । यशोधर के जीवन ने श्रावक समाज को इतना अधिक प्रभावित किया कि जब तक कोई कवि यशोधर के जीवन पर कलम नहीं चला ले तब तक उसे कवियों की कोटि में स्थान मिलना कठिन है । यही कारण है कि अपभ्रंश के महाकवि पुष्पदन्त ने भी जसहरचरिउ छन्दोबद्ध किया तथा आचार्य सोमदेव ने संस्कृत में यशस्तिलक चम्पू लिखकर विद्वानों के समक्ष प्रस्तुत किया । हिन्दी, राजस्थानी में तो बीसों यशोधर चरित लिखे गये हैं जिनमें ब्रह्म जिनदास का यशोधर रास विशेषतः उल्लेखनीय है । आचार्य सोमकीर्ति तो यशोधर के जीवन वृत्त से इतना अधिक प्रभावित थे कि उन्होंने पहले संस्कृत में यशोधर चरित्र एवं फिर राजस्थानी में यशोधर रास की रचना करके जैन कवियों के समक्ष एक अनोखा उदाहरण प्रस्तुत किया ।

रचना काल एवं स्थान

राजस्थानी भाषा में इस रास काव्य को आचार्य सोमकीर्ति ने गुढली नगर में शीतलनाथ स्वामी के मन्दिर में कार्तिक बुदी प्रतिपदा बुधवार के शुभ दिन समाप्त करके जन-जन के समक्ष स्वाध्याय के लिए प्रस्तुत किया ।[1] कवि ने रास काव्य के समाप्ति काल का महिना, वार एवं स्थान तो दिया है लेकिन संवत् का उल्लेख नहीं किया । कवि ने संस्कृत के यशोधर चरित्र की रचना संवत् १५३६ पौष बुद्धि पंचमी रविवार को समाप्त की थी । रचना स्थान दोनो का समान है अर्थात् संस्कृत काव्य को भी गुढली नगर एवं शीतल नाथ स्वामी के मन्दिर में ही लिखा गया था । संस्कृत भाषा में कवि ने काव्य की रचना को अधिक प्राथमिकता

---

१. कातीए उजली पाखि पडिया बुधवार कीउ ए ।
सीतलूए नाथ प्रासादि गुढली नगर सोहामणुं ए ।
रिधि वृद्धिए श्री पास पोसाउ हो जो निति श्री संघह घरिए ।
श्री गुरुए चरण पसाउ श्री सोमकीरति सूरि भण्यू ए ।।

की थी इसलिए ऐसा लगता है कि संस्कृत में यशोधर चरित्र की रचना करने के पश्चात् राजस्थानी में यशोधर रास की रचना की थी। इस आधार पर रास की रचना संवत् १५३६ के बाद की मानी जा सकती है।

यशोधर रास को कवि ने सर्गों एवं अध्यायों में विभक्त, नहीं करके ढालों में विभक्त किया है। जिनकी संख्या १० है। इससे दो प्रयोजन सिद्ध हो गये। एक तो काव्य में १० प्रमुख छन्दों—रागों में निबद्ध करना तथा दूसरा ढालों के माध्यम से अध्यायों में विभक्त करना। हिन्दी के अधिकांश जैन कवियों ने इसी परम्परा को अपनाया है। कवि ने ढाल के अन्त में वस्तुबन्ध छन्द का प्रयोग किया जो ढाल समाप्ति का सूचक माना जाता है।

कवि ने रास का प्रारम्भ मंगलाचरण से किया है जिसमें पंच परमेष्ठियों को नमस्कार करने के पश्चात् यशोधर रास रचने का संकल्प व्यक्त किया गया है।

कथा सार

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में यौध देश था। वहां राजपुर नगर एवं मारदत्त उसका राजा था। जो सुन्दरता में तथा दान देने में इन्द्र के समान लगता था। वह छह दर्शन के सिद्धांतों पर विचार करता लेकिन कौनसा दर्शन तारने वाले तथा कौनसा डुबाने वाला है इसको वह नहीं जानता था। उसी नगर के दक्षिण दिशा की ओर देवी का मठ था। जहां देश विदेश के स्त्री-पुरुष दर्शनार्थ आते थे। देवी का नाम चण्डमारि था। उसका रूप कज्जल के समान काला था। भक्तगण आसोज, एवं चैत्रमास में, नवरात्रा में उसकी विशेष पूजा करते थे। लोग पशु पक्षियों को लेकर आते थे।

जब चैत्र मास आया सभी पेड़ पौधे पल्लवित एवं पुष्पित हो गये। तभी वहां एक जोगी आया। उसके वहां कितने ही शिष्य शिष्याएं बन गये। मूर्ख लोगों को वह कितनी ही तरह से बहकाने लगा तथा कहने लगा उसको राम, लक्ष्मण, ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि दिखायी देते हैं। यह सुनकर राजा ने भी उसे दरबार में बुलाया। जोगी अपने सात शिष्यों के साथ वहां आया। राजा ने सम्मान पूर्वक उसे आसन दिया। परस्पर में चर्चा हुई और उस जोगी ने कहा कि वह मोहनी, वशीकरण एवं स्तम्भन मन्त्र जानता है, आकाश गामिनी विद्या जानता है, यही नहीं सभी रसायन मन्त्र तन्त्र का वह ज्ञाता है। राजा उसकी बात सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ। और उससे आकाश गामिनी विद्या देने की प्रार्थना की। जोगी ने उसे आशीर्वाद दिया और अपना शिष्य घोषित कर दिया तथा कहा कि चण्डमारी देवी के आगे जितने भी जलचर, थलचर एवं नभचर जीव हैं उनके युगल लाये जावें। इतना सुनते ही राजा ने अपने सेवकों द्वारा सैंकड़ों जीवों के युगल देवी के मन्दिर में लाकर

एकत्रित कर दिये इसमें हरिण, रोझ, हाथी, घोड़े, बकरी, भैंस, गाय, बैल, बगुला, सारस चकवा आदि न जाने कितने जीव थे। राजा मन्दिर में गया और सिंहासन पर बैठ गया। वहां आने पर जोगी ने राजा से कहा कि वह बत्तीस लक्षण युक्त नर युगल का अपने हाथों से बलिदान कर सके तो उसे उसी क्षण देवी की कृपा से आकाशगामिनी विद्या सिद्ध हो जायेगी। राजा ने फिर अपने सेवकों को चारों ओर भेजा।

तीन दिन पूर्व ही दिगम्बर मुनि सुदत्ताचार्य का संघ वहां आया था और वन में ठहर गया था। मुनि के प्रभाव व वह जंगल सघन हो गया। फूल खिल गये और कोयल मधुर गान गाने लगी। इसको देखकर वह मुनि ध्यान के लिये श्मशान में चले गये। श्मशान की विभीत्सता देखते ही डर लगता था। स्थान स्थान पर अस्थियों के ढेर लगे हुए थे। लेकिन मुनि प्रासुक भूमि देखकर वहीं ध्यानस्थ हो गये। उस दिन चैत्र सुदि अष्टमी थी इसलिए उपवास ले लिया। इतने में ही एक क्षुल्लक एवं एक क्षुल्लिका गुरु के पास आये और दोनों प्रोषधोपवास व्रत लेने की प्रार्थना करने लगे। मुनि ने उनकी लघु आयु देखकर नगर में जाकर आहार लेने के लिए कहा। वे दोनों आहार के लिये नगर की ओर चल दिये।

राजा के सेवक भी ऐसे ही नर युगल की तलाश में थे। वे दोनों को देखते ही प्रसन्न हो गये और उनको चण्डमारी देवी के मठ में ले गये। राजा ने उन दोनों को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की लेकिन उनके सलोने रूप को देखकर आश्चर्य प्रगट किया और क्रोधित होकर अपनी तलवार सम्हालने लगा। लेकिन जैसे ही दोनों क्षुल्लक, क्षुल्लिका युगल ने राजा को शुभाशीर्वाद दिया, उसके यश की कामना की तथा करोड़ वर्ष तक जीने का आशीर्वाद दिया इससे राजा का क्रोध कम हुआ। उन दोनों के रूप को देखकर वह दंग रह गया और इतनी छोटी उम्र में साधुवेष अपनाने का कारण जानना चाहा लेकिन क्षुल्लक ने कहा कि वह जानकर क्या करेगा। वह तो पाप बुद्धि में फंसा हुआ है। उसके हाथ में तलवार है। संसार को पाने की उसकी इच्छा है। लेकिन राजा ने उससे फिर निवेदन किया। राजा की प्रार्थना को सुनकर क्षुल्लक ने अपने जीवन का इतिवृत कहना प्रारम्भ किया।

उज्जयिनी का राजा यशोध था। चंद्रमती उसकी रानी थी। दोनों ही सुन्दरता की मूर्ति, सम्यक्त्वी एवं श्रावक धर्म को पालने वाले। जब चन्द्रमती के पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ तो उसका नाम यशोधर रखा गया। नगर में विभिन्न उत्सव किये गये। पांच वर्ष का होने पर उसे उपाध्याय के पास पढ़ने भेजा गया।

तथा वहां उसने सभी विद्याओं में पारंगता प्राप्त की। काव्य, अलंकार, तर्कशास्त्र, सिद्धांत, नाटक, ज्योतिष, वैद्यक, आदि सभी शास्त्रों का अध्ययन किया। यही नहीं संगीत, नृत्य आदि में प्रवीणता प्राप्त की। उपाध्याय को इस उपलक्ष में एक लाख दीनार भेंट की तथा अपना पूरा आभूषण उतार करके दिया। यौवन प्राप्त करते ही विवाह के प्रस्ताव आने लगे। एक दिन कैशक राजा के यहां से विवाह का प्रस्ताव लेकर एक दूत आया। राजा ने विवाह का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया तथा अपने पुत्र का विवाह कर दिया। विवाह के उपलक्ष में नगर को सजाया गया। बिन्दोरियां निकाली गयी। तेल चढ़ाया गया। तथा गीत गाये गये। उद्यान में जाकर विवाह किया गया। जब वधु का रूप देखा गया तो सभी प्रसन्न हो गये। वधु को लेकर राजमहल में गये और सब सुख से रहने लगे। बहुत वर्षों तक राज्य सुख भोगने के पश्चात् राजा यशोध अपने पुत्र यशोधर को राज्य देकर स्वयं ने जिन दीक्षा धारण करली।

यशोधर एवं रानी यशोवती राज्य करने लगे। जीवन आनन्द से बीतने लगा। एक तो यौवन, फिर सुन्दरता, राज्य वैभव एवं परस्पर में घना प्रेम, सब कुछ दोनों के पास था। इसलिए वैभव में दिन व्यतीत होने लगे। एक रात्रि को जब राजा-रानी एक पलंग पर सो रहे थे। अर्धरात्रि का समय आते ही रानी अपने पलंग से उठी और पूरे आभूषण पहिन कर महलों से नीचे चलने लगी। राजा को जब जाग हुई तो वह भी तलवार लेकर रानी के पीछे-पीछे चलने लगा। राजा ने देखा कि रति के समान रानी एक कोढ़ी के पास गयी तथा उसके चरण पकड़ कर जगाने लगी। कोढ़ी के हाथ-पांव गल गये थे। शरीर से दुर्गन्ध आ रही थी। उस कोढी ने रानी को देर से आने पर उसे खूब मारा लेकिन रानी ने ऊफ भी नहीं कहा और देर से आने के लिए क्षमा मांगने लगी। राजा ने जब यह सब अपनी आंखों से देखा तो क्रोधित होकर उसे तलवार से मारने लगा लेकिन फिर सम्भल गया। और वापिस अपने महल में जाकर सो गया। जिस रानी के साथ जीवन बिताने में राजा को आनन्दानुभूति होती थी अब उसे वह जहर के समान लगने लगी।

प्रातः काल होने पर जब उसकी माता जिन पूजा आदि से निवृत होकर राजमहल में आयी तो राजा ने रात्रि स्वप्न की बात कही तथा स्वप्न की भयंकरता को देखते उसने वैराग्य लेने की इच्छा प्रगट की। लेकिन माता ने उसे कायरता बतलाया तथा कहा कि कुलदेवी के आगे बलि चढ़ाने से सारे उपद्रव दूर हो सकते हैं। लेकिन यशोधर ने किसी भी जीव की बलि देने से साफ इन्कार कर दिया। माता

ने उसे पुनः समझाया तथा जगत में जीवों के जन्म मरण की बात कही लेकिन यशोधर ने एक भी नही सुनी। अन्त में आटे का कुकुडा बनाकर देवी के मन्दिर में गया और देवी के आगे उसे मार दिया और इस प्रकार हिंसा का बन्ध कर लिया।

जब रानी को राजा के दीक्षा लेने की बात मालूम पड़ी तो वह शीघ्र राजा के पास गयी। कहने लगी कि एक बार उसके हाथ का प्रिय भोजन करके वैराग्य लेना वह भी उन्हीं के साथ तपस्विनी बन जावेगी। तथा 'तप करसां दोउं' इस प्रकार अपनी मार्मिक रीति से भावना व्यक्त की। राजा ने रानी की बात मानली। राजा जिन पूजा के पश्चात् रानी के महल में गया। रानी ने सोने के थालों में राजा के लिए भोजन परोसा। विविध प्रकार के व्यञ्जन परोसे गये लेकिन उनमें विष मिला दिया गया। तभी रानी ने कहा कि एक आवश्यक कार्यवश उसे अपने पीहर जाना है। सात दिन बाद वापिस आजावेगी। रानी ने दो विष मोदक बनाये। एक माता के लिये और एक राजा के लिए। दोनों को विष के लड्डू खिला दिये। माता चन्द्रमती तो तत्काल ही मर गयी और राजा भी वैद्य-वैद्य करता मर गया। रानी ने फिर त्रिया चरित्र दिखलाया।

> इम बोली हा हा करी छोडीय केश कलाप।
> मूरछ मसि उपरि पडी हीयडलि आणीय पाप ॥

दोनों का दाह संस्कार किया गया। ब्राह्मणों को दान दिया गया। इसके पश्चात् राजा यशोधर एवं माता चन्द्रमती के भवों का क्रम प्रारम्भ होता है—

राजा यशोधर मर कर श्वान हुआ और चन्द्रमती मोर हुई। एक शिकारी ने उस श्वान को पकड़ लिया और उज्जैनी नगरी में आकर राजा के पास ले गया राजा ने श्वान को देखकर प्रसन्नता व्यक्त की तथा कुत्ते को सोने की जंजीर से बांध दिया। एक दिन कुत्ते ने रानी को कुबड़े के साथ कुकर्म करते हुए देख लिया। देखते ही कुत्ते को जाति स्मरण हो गया। वह अत्यधिक क्रोधित होकर तथा सांकल को तोड़ कर मोर का गला पकड़ लिया। राजा ने तत्काल श्वान को मार दिया। मोर भी मर गया। मोर मर कर काला सांप हुआ तथा श्वान सेहलु हुई। दोनों ने जब एक दूसरे को देखा तो फिर लड़ मरे और दोनों ही मर गये। अगले भव में सेहलु मर कर बड़ा मगर हुई तथा सांप रोही हो गया। एक दिन राजा की दासी उस तलाब पर नहा रही थी तभी उस मगर ने दासी को पकड़ लिया और जब राजा को खबर लगी तो उसने धीवर से मगर को पकड़ने का आदेश दिया। रोही ने जाल डाल कर उसे पकड़ लिया और उसे खूब मारा गया। अंत में वह मर

कर बकरी हुई। रोही मर कर बकरा हुआ। जब वह बकरा दूध पीने लगा तो उसे देखकर बड़ा क्रोध आया और उसे मार डाला गया। लेकिन वह फिर बकरा हो गया। बकरा मर कर पुनः भैंसा हो गया। जिस को वरदत्त बणजारा भार लादने का काम लेने लगा। उसके पश्चात् वे दोनों मर कर मुर्गा मुर्गी की योनि में पैदा हुए। उस मुर्गा मुर्गी ने मुनिराज से व्रत लिये। लेकिन राजा उनके बोलने से अप्रसन्न हो गया इसलिये दोनों को शब्दवेधी बाण से मार दिया। वे दोनों फिर रानी के गर्भ में आकर पुत्र-पुत्री हुए, जिनका नाम अभयरुचि एवं अभयमति रखा गया।

एक दिन राजा यशोमति बसंत ऋतु आने पर अपनी रानी के साथ वन भ्रमण को गया। उसी वन में सुदत्त मुनि ध्यानस्थ थे। मुनि को देखकर वे भी उनके पास जाकर बैठ गये और अपने पूर्व भवों का वृतान्त जानने की इच्छा प्रकट करने लगे। मुनि ने जगत की असारता, पापों की भयानकता एवं अहिंसा धर्म पालन की महत्ता बतलाई साथ ही आटे के कुक्कुट युगल को मारने की भाव हिंसा करने से यशोधर को कितने भवों तक जन्म धारण करके दुःख सहन करने पड़े इस बारे में विस्तार से कहा।

एक दिन वह शिकारियों को साथ लेकर वन में गया। वहां ध्यानस्थ मुनि को देखकर क्रोधित हो गया तथा मुनि के ऊपर जंगली कुत्ते छोड़ दिये। उधर से एक कल्याण नामक बणजारा अपने बैलों के साथ जा रहा था। जब उसने मुनि को ध्यानस्थ देखा तथा उस पर राजा द्वारा छोड़े हुए कुत्तों को देखा तो उसने राजा से मुनि महात्म्य के बारे में कहा। तो राजा ने मुनि के शरीर की ओर संकेत करते हुए कहा कि जो कभी स्नान नहीं करता, दांत साफ नहीं करता वह कैसे पवित्र हो सकता है। बणजारे ने इसके पश्चात् विस्तार से मुनि जीवन की विशेषताएं बतलायी तथा कहा कि "मुनिवर सदा पवित्र मंगल परमण जाण जे।" साथ में यह भी कहा कि ये मुनि कलिंग राजा सुदत्त हैं। कल्याण बणजारा मुनि के चरणों के समीप बैठ गया। मुनि के वचनों के प्रभाव से राजा को भी वैराग्य हो गया। जब उसके दो पुत्रों को राजा के वैराग्य की मालूम पड़ी तो तो उन दोनों ने भी वैराग्य धारण कर लिया और वे अभयरुचि एवं अभयमति के रूप में सामने हैं। कल्याण ने भी जिन दीक्षा धारण करली।

मुनि सुदत्ताचार्य ने कषायों, लेश्याओं की उग्रता, नरक योनि के दुःख के बारे में विस्तार से बतलाया तथा जिन पूजा, पात्रदान, णमोकार मन्त्र का जाप, सत्य भाषण, आदि की जीवन में उपयोगिता के बारे में बतलाया।

बारह् समाज के व्रतों, दस धर्मों, अनुप्रेक्षाओं पर विस्तृत प्रकाश डाला और उन्हें जीवन में उतारने पर जोर दिया। राजा मारिदत्त यशोधर के पूर्व भवों की कथा को सुनकर जगत से भयभीत हो गया और क्षुल्लक क्षुल्लिका के पांव पड़ गया। उधर सुदत्ताचार्य भी वहां आ गये। अभयरुचि ने उनसे राजा को दीक्षा देने के लिये निवेदन किया। मारिदत्त ने मुनि दीक्षा लेकर स्वर्ग प्राप्त किया। योगी ने भी हिंसावृत्ति को छोड़ कर जिनदीक्षा धारण कर ली। देवी के मन्दिर को स्वच्छ कर दिया गया और जीव हिंसा सदा के लिये बन्द हो गयी। अभयरुचि एवं अभयमति तपस्या करते हुए मर कर स्वर्ग में इन्द्र प्रतीत हुए। बणजारा कल्याण ने भी जिन दीक्षा धारण कर स्वर्ग प्राप्त किया। इस प्रकार यशोधर रास में सूक्ष्म हिंसा से भी कितने भवों तक कष्ट सहने पड़ते हैं, इसका विस्तृत वर्णन किया है। इस रास काव्य को जो पढ़ता है अथवा सुनता है उसे अपूर्व पुण्य की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार का यशोधर रास के कथानक को कवि ने बहुत ही सीधी सादी एवं तत्कालीन बोलचाल की भाषा में निबद्ध किया है। कवि ने काव्य के मूल कथानक में यद्यपि कोई परिवर्तन नहीं किया है किन्तु अपने काव्य को लोकप्रिय बनाने के लिये उसके वर्णन में नवीनता लाने का अवश्य प्रयास किया है। उसमें सामाजिक पुट स्थान स्थान पर मिलता है तथा तत्कालीन जन भावनाओं की अभिव्यक्ति भी मिलती हैं। प्रकृति वर्णन, नगर वर्णन, शासन वर्णन आदि भी स्थान स्थान पर मिलते हैं। उस समय की अध्ययन अध्यापन स्थिति का भी काव्य से पता लगाया जा सकता है साथ ही में राजा एवं प्रजा के सम्बन्धों पर भी कहीं कहीं प्रकाश डाला गया है। काव्य के अन्त में हिंसा से मुक्ति पाने के लिये उसके अवगुणों का विस्तृत वर्णन मिलता है तथा जीवों की स्थिति, उत्पत्ति, एवं विविध योनियों का अच्छा वर्णन किया गया है।

कवि ने श्मशान एवं देवी मंडप की विभित्सता का बहुत अच्छा वर्णन किया है जिसे पढ़ते ही मन में ग्लानि होने लगती हैं। राजपुर के श्मशान का चित्र प्रस्तुत करते हुए कवि ने लिखा है—

ठामि ठामि सब तणीय गंधि अति अस्थि असंख।
काक सेह सीयाल स्वान सिहा आदि पंख ॥ २६ ॥

इसी तरह् देवी के मठ का वर्णन देखिये—

देवीय मंडप विषभु दीठउ, भूप तरणु भय मन माहिं पिठउ
ठामि ठामि श्रीहामरणए ।। ३१ ।।

अछिय तरणा को हो डूंगर वीसि
अछिय सिधासरिण जोगी बइसि
अछिय डंड ते कर लेइए ।। ३२ ।।

अमिष तणा ढगला अति पुरण ।
अमिष ठाम दीसिहि अति घरण ।
अमिष भर्या पंखी चुरिणए ।। ३३ ।।

लेकिन जब प्राकृतिक छटा का वर्णन करने लगता है तो कवि उसमें भी जीवन डाल देता है---

कोइल करइ टहूक भमरा रुण झुण ध्वनि करि रे
सखी फूल्या केसु फूल. सहकारे मांजिर घणी रे ।[1]

इसी तरह उसने क्षुल्लक क्षुल्लिका के सन्दौर्य का वर्णन किया है—

कइ इन्द्र इन्द्राणी बेहू ।
यस कीरति धुरि आवि देहू ।
चन्द्रा रोहिरणी सुं मिलिए ।। ४३ ।।

सुरथरना बेव सरीसु मारणस ।
रूपन हुइ ईसु ।
कामि सहित सुं रति हुइए ।। ४४ ।।

सामाजिक स्थिति में कवि ने तत्कालीन विवाह विधि का विस्तृत वर्णन किया है—

कुमार यशोधर के विवाह का प्रस्ताव लेकर ऋथकैशक राजा के यहां से दूत आता है। दूत का प्रस्ताव सुनकर राजा उससे उज्जयिनी आकर ही विवाह करने का प्रस्ताव रखता है। दूत राजा के प्रस्ताव को स्वीकार कर लेता है। तथा राजा, राजपरिवार एवं कन्या सहित वन में आकर ठहर जाते हैं।

---

१. काल आठमी ।

विवाह का प्रारम्भ बिन्दोरी से होता है। घर-घर बिन्दोरियां निकलती हैं तथा मंगलगीत गाये जाते हैं। सौभाग्यवती स्त्रियां तेल चढ़ाती हैं। शांति विधान करती हैं। यशोध राजा नपरिवार तोरण मारने के लिये बरात सजा कर चलते है। उस समय खूब दान दिया जाता है। जब राजा बेला आती है तो तोरण की विधि पूरी की जाती है। वर कन्या का मुख देखता है। वर कन्या का हाथ से हाथ मिलाया जाता है। हथलेवा होता है। जब हथलेवा छोड़ते हैं तो श्वसुर आशीर्वाद देता है। विवाह के पश्चात् वर वधु मन्दिर जाते है। इस प्रकार विवाह के सामाजिक दायित्व को पूरा किया जाता है।

इसके पश्चात् जब वर-वधु घर आते हैं तो सास श्वसुर उन्हें अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य एवं परिग्रह व्रत के पालन की शिक्षा देते हैं। इसके साथ ही रात्रि को भोजन नहीं करने पर जोर दिया जाता है।

धर्म अहिंसा मनि धरिए, मा० बोलिम कूडीय साखि ॥ ११० ॥
चोरीय आल उ' मां करे से मा० परिनारी सहौ टालि।
परिग्रह संख्या नितु करिए, गुरुवाणी सदा पालि ॥ १११ ॥
स्याथ पाले लोकह सहूए, रमणीय भोजन वारि ॥

शिक्षा—अध्यापकों को उपाध्याय कहा जाता था। जैन उपाध्याय होते थे। पांच वर्ष का होते ही यशोधर को पढ़ने भेज दिया गया था और पन्द्रह वर्ष की अवस्था तक वह पढ़ता रहा था। उपाध्याय के पास उसने किन किन विषयों का अध्ययन किया इसका निम्न पंक्तियों में विवरण देखिये--

वृत्तनि काव्य अलंकार तर्क सिद्धान्त प्रमाण।
भरह नई छंद सुपिंगल नाटक ग्रन्थ पुराण ॥ ६६ ॥

आगम यौतिष वैदिक हय नर पसुयनु जेह।
चैत्य चैत्याला गेहनी गढ मढ करवानी तेह ॥ ६७ ॥

माहो माहिं विरोधीइ कला भनावीद जेम।
कागल पत्र समाचरी रसोयनी पाईइ केम ॥ ६८ ॥

इन्द्रजाल रस भेदजे रूपनइ भूम्भनु कर्म।
पाप निवारण बावन नत्तन माहि जे मर्म ॥ ६९ ॥

नारी निन्दा

१६ वीं १७ वीं शताब्दि में हिन्दी कवि नारी निन्दा अनेक पद्य अवश्य लिखते थे। आचार्य सोमकीर्ति ने भी अपने काव्य यशोधर रास में नारी निन्दा निम्न शब्दों में की है—

नारी विसहर वेल. नर वंचेवाए घडी ए।
नारीय नामज मेल्हि, नारी नरक प्रतोलडीए।
कुटिल पणानी खाणि, नारी नीचह गामिनीए।
सांचु न बोलि वाणि, वाघिए सापिण अगनि शिखा।
नर भोलवीय एह दोष निधाने पूरीउए ॥

लेकिन एक दूसरे प्रसंग में कवि ने नारी की प्रशंसा भी की है—

सखी नारी बहु गुणवंत कुल लक्षण दाखि भली रे।
सात भूमि जे गेह राज दिधि मोरिम धणी रे ॥

मृत्यु के समय

आचार्य सोमकीर्ति के समय मृत्यु के पहिले गाय, भूमि, एवं स्वर्ण दान में देने की प्रथा थी। राजाओं का दाह संस्कार चन्दन से किया जाता था। ब्राह्मणों को भोजन एवं दान दक्षिणा देने की प्रथा भी थी।[1] राज परिवार में श्राद्ध होता था और उसमें ब्राह्मणों को भोजन कराया जाता था।[2]

हिंसा दो प्रकार की होती है। एक भाव हिंसा एवं दूसरी द्रव्य हिंसा। मन में हिंसा का विचार मात्र ही भाव हिंसा कहलाती है फिर चाहे उसमें अपने हाथ से जीव हिंसा मरें या नहीं मरें। द्रव्य हिंसा—साक्षात् प्राणिघात का ही नाम है। प्रस्तुत यशोधर रास की रचना छोटी से छोटी हिंसा के कितने भयानक परिणाम भुगतने पड़ते हैं इसी बात को दर्शाने के लिये की गयी है। राजा यशोधर स्वयं हिंसा में विश्वास नहीं करता। वह हिंसा कार्य से बचना चाहता है लेकिन अपनी मां के आग्रह से वह आटे का कुकडा कुकडी बनाकर उनकी हत्या कर डालता है। इसलिये चाहे उसने वास्तविक जीवित कुकडा कुकडी को नहीं मारा हैं किन्तु आटे में कुकडा कुकडी की स्थापना करके उन्हें मारने का उपक्रम

१. ढाल छट्ठी
२. ढाल सातवीं

अवश्य किया था। इसी हिंसा के कितने परिणाम अनेक जन्मों तक भुगतने पड़ते हैं यही यशोधर रास के कथानक की मूल वस्तु है।

२. गुरु नामावली

सोमकीर्ति की यह दूसरी रचना है जिसमें उसने अपने संघ की पट्टावली नामोल्लेख किया है तथा उसका ऐतिहासिक परिचय दिया है। काष्ठा संघ की उत्पत्ति एवं उसमें होने वाले अपने पूर्व भट्टारकों के नाम, किसी किसी भट्टारक की विशेषता साथ ही में नरसिंहपुरा जाति एवं भट्टपुरा जाति की उत्पत्ति का वर्णन भी दिया गया है। गुरु नामावली की पूरा विवरण निम्न प्रकार है—

संस्कृत में मंगलाचरण के पश्चात् सोमकीर्ति अपनी शक्ति अर्थात् ज्ञान के अनुसार अपने गुरुओं की नामावली कहने की इच्छा प्रकट करते हैं।

भगवान आदिनाथ के ८४ गणधर हुए और महावीर स्वामी के ग्यारह। भरतेश्वर जिस प्रकार चक्रवर्तियों के शिरोमणि थे उसी प्रकार काष्ठासंघ अन्य सभी संघों में शिरोमणि था। लाड बागड गच्छों में नन्दी तट संज्ञक संघ प्रसिद्ध है। अर्हद्वल्लभसूरि उस गच्छ के प्रथम आचार्य थे। उस गच्छ में पांच गुरु हुये। वे हैं गंगसेन, नागसेन, सिद्धान्तदेव, गोपसेन, नोपसेन।

दक्षिण देश में नन्दी तटपुर में नोपसेन मुनि रहते थे। उनके पांचसौ शिष्य थे उनमें चार शिष्य प्रमुख थे। रामसेन प्रथम शिष्य थे जो वाद एवं शास्त्रार्थ करने में पटु थे। अपने शिष्य की विद्वत्ता एवं शास्त्रार्थ पटुता को देखकर नोपसेन ने कहा कि यदि वह नरसिंहपुरा जाकर वहां के निवासियों में व्याप्त मिथ्यात्व को दूर कर सके तब उसकी शास्त्रार्थ पटुता को समझी जावेगी। नागड देश में मथुरा नगरी में तथा लाड देश में मिथ्यात्व फैला हुआ है। गुरु की वाणी को मन में धारण कर वहाँ से वे चारों शिष्य चले।[1]

मुनि रामसेन नरसिंहपुरा नगर में आये। नगर के बाहर सरोवर के किनारे मासोपवासी बन कर ध्यान करने लगे। उसी नगर में भाहड नामक श्रीमन्त था जिसके सात पुत्र थे लेकिन पौत्र एक भी नहीं था। सेठ मुनि की वन्दना करने वहां आया और हाथ जोड़कर बैठ गया। तथा महामुनि के आदेश की प्रतीक्षा करने लगा। मुनि ने मिथ्यात्व दूर करके जिनधर्म फैलाने की इच्छा प्रकट की

---

१. रामसेन के अतिरिक्त तीन शिष्यों का नाम नहीं दिये गये हैं।

तथा मन्दिर बनवा कर उसमें भगवान की प्रतीमा की प्रतिष्ठित करने की बात रखी। मुनि ने उत्तर बाडुपुर जाने को कहा तथा अपनी तपस्या के प्रभाव से नरसिंहपुरा एवं उत्तर बाडुपुर के निवासियों को सम्बोधित किया और जैन धर्म में दीक्षित कर नरसिंहपुरा जाति की स्थापना की तथा उसे २७ गोत्रों में विभक्त किया

रामसेन वहां से चित्तौड़ आये। रामसेन के साथ उनके शिष्य नेमिसेन मुनि भी थे। जो प्रायश्चित् स्वरूप छह महिने का उपवास कर रहे थे। रामसेन ने अनशन करने की बात छोड़ने के लिये कहा। गुरु की बात को ध्यान में रख कर वहां से वे जावर नामक प्रसिद्ध स्थान पर आ गये तथा अन्न, जल त्याग करके ध्यानस्थ हो गये। इस प्रकार सात दिन व्यतीत हो गये। एक दिन मुनि नेमसेन के ऊपर से पद्मावती देवी निकल गयी। उधर से कैलाश से सरस्वती देवी भी सामने आती हुई मिल गयी। दोनों में भेंट हुई तथा बातचीत हुई। नेमिसेन मुनि अपनी काया को क्यों कष्ट दे रहा है। यह कह कर दोनों देवियां मुनि के सामने जाकर खड़ी हो गयी। मुनिवर ने दोनों को देखकर कहा कि वे क्यों कष्ट कर रहीं हैं इस पर दोनों देवियां उससे प्रसन्न हुई। सरस्वती की प्रसन्नता के कारण उसे शास्त्रों का अपार ज्ञान प्राप्त हुआ तथा पद्मादेवी के कारण, आकाश गामिनी विद्या प्राप्त हुई। प्रातःकाल नेमसेन ने अनशन तोड़ दिया। मुनि ने उसके पश्चात् प्रतिदिन शत्रुंजय, रैवताचल, तुंगेश्वर, पावागिरी, एवं तारंगा क्षेत्र की यात्रा करने के पश्चात् ही आहार ग्रहण करने का नियम ले लिया।

नेमसेन वहां से चित्तौड़ आये। वहां आकर अपने गुरु की वन्दना की। गुरु ने आशीष देते हुये कहा कि मेवाड़ देश में भट्टपुरा नगर है वहां के लोगों में मिथ्यात्व फैला हुआ है तथा वे धर्म के मर्म को नहीं समझते। तुम विशेष ज्ञान के धारक हो इसलिये वहां जाना चाहिये। नेमसेन ने गुरु की आज्ञा शिरोधार्य की। चित्त में उस कार्य का चिन्तन किया तथा शीघ्र ही भट्टपुर नगर में पहुंच गये। वे नगर में गये और लोगों में फैले हुए मिथ्यात्व को देखा तब उसे नष्ट करने का संकल्प किया। वहां के नागरिकों को अपने ज्ञान से सम्बोधित किया। एक भट्टपुरा जाति की स्थापना की। भट्टपुरा में चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमाओं को भ० नेमसेन ने प्रतिष्ठापित किया।

नेमसेन भट्टपुरा से चल कर अपने गुरु के पास आये। भक्ति पूर्वक वन्दना की। तथा भट्टपुरा के सम्बन्ध में पूरा विवरण सुनाया। इसके पश्चात् सोमकीर्ति नेमसेन के पट्ट में भट्टारकों के नामोल्लेख करते हैं जो निम्न प्रकार है—

१. अर्हद् बल्लभ सूरी
२. गंगसेन
३. नागसेन
४. गोपसेन
५. नोपसेन
६. रामसेन
७............
८............
९............
१०............[1]
११. नेमसेन
१२. नरेन्द्रसेन
१३. वासवसेन
१४. महेन्द्रसेन
१५. आदित्यसेन
१६. सहस्त्रकीर्ति
१७. श्रुतकीर्ति
१८. देवकीर्ति
१९. विजयकीर्ति
२०. केशवसेन
२१. महासेन
२२. मेघसेन
२३. कनकसेन
२४. विजयसेन
२५. सूरसेन
२६. चारित्रसेन
२७. वीरसेन
२८. ऋषभसेन
२९. मेरसेन
३०. शुभंकरसेन
३१. नयकीर्ति
३२. चन्द्रसेन
३३. सहस्त्रकीर्ति
३४. महाकीर्ति
३५. यशःकीर्ति
३६. गुणकीर्ति
३७. पद्मकीर्ति
३८. त्रिभुवनकीर्ति
३९. विमलकीर्ति
४०. मदनकीर्ति
४१. मेरूकीर्ति
४२. गुणसेन

४२ वे भट्टारक गुणसेन महा मुनीश्वर थे। एक रात्रि को जब वे ध्यानस्थ थे तब सर्पाधिराज ने प्रत्यक्ष होकर वचन दिया कि वे बड़े शक्तिशाली हैं इसलिये उनके वचन व पीछी जिस पर फेर दी जावेगी उसके सर्प का विष कभी नहीं चढ़ेगा। मुनीश्वर ध्यान से, विद्या से, तप से, इतने प्रभावशाली थे कि स्वयं बृहस्पति भी उनसे हार मान लेता था।

---

१. चार के नाम नहीं लिखे हुये हैं।

४३. रत्नकीर्ति
४४. जयसेन
४५. कनककीर्ति
४६. भानुकीर्ति
४७. संयमसेन
४८. राजकीर्ति
४९. विश्वनन्दि
५०. चारुकीर्ति
५१. विश्वसेन
५२. देवभूषण
५३. भूषणकीर्ति
५४. लभकीर्ति
५५. श्रुतकीर्ति
५६. उदयसेन
५७. गुणदेव
५८. विशालकीर्ति
५९. अनन्तकीर्ति
६०. महसेन
६१. विजयकीर्ति
६२. जिनसेन
६३. रविकीर्ति
६४. अश्वसेन
६५. श्रीकीर्ति
६६. चारुसेन
६७. शुभकीर्ति
६८. भवकीर्ति
६९. भवसेन
७०. लोककीर्ति
७१. त्रिलोककीर्ति
७२. अमरकीर्ति
७३. सुरसेन
७४. जयकीर्ति
७५. रामकीर्ति
७६. उदयकीर्ति
७७. राजकीर्ति
७८. कुमारसेन
७९. पद्मकीर्ति
८०. भुवनकीर्ति
८१. भावसेन
८२. वासव सेन
८३. रत्नकीर्ति
८४. लक्ष्मसेन
८५. धर्मसेन
८६. भीमसेन
८७. सोमकीर्ति

सोमकीर्ति के पूर्ववर्ती भट्टारक रत्नकीर्ति, लक्ष्मसेन भी बड़े प्रभावशाली भट्टारक थे। उनके बारे में सोमकीर्ति ने निम्न पंक्तियां लिखी हैं—

> कहि कहि रे संसार सार। म जाण तहने असार।
> कहि प्रति असार। सेव करि। पूजु पूजु रे रे अरिहंत देव।
> सुरनर करि सेव। हवि मसाउ येन भावधरी।
> पालु पालु रे अहिंसा धम्म। मणयनु लाध जम्म।

म करइ कुटिसल कम्म । भवह भरणे ।
तरु तरु रे उत्तम जन अवर म आणु मनि ।
ध्याउ सर्वज्ञ धर्म । लखमसेन गुरु एम भरणे ॥४॥
दीठि दीठि रे अति आणंद । मिथ्यातना टालि कंद ।
गयरण विहुरणउ चंद । कुलहिं तिलु ।
जोइ जोइ रे रयणी दीसि । तस्य पद लहो कीशि ।
धरि आदेश सीसि । लेहु भलु । तरि तरि रे संसार ।
करतिम गुरु मूकिइ मूकिइ मोकलु कर दान भणी ।
छंडि छंडि रे रुडी बाल । लेइ बुद्धि विशाल ।
वाणीय अति रसाल । लखमसेन मुनिराउ तणी ॥५॥ ६७ ॥

उक्त भट्टारकों में ८० वें भट्टारक भुवनकीर्ति ने दिल्ली के बादशाह महमूद शाह के सभा में अपनी विद्यावश पालकी आकाश में चला दी थी। जिस कारण महमूदशाह ने उन्हें बड़ा सम्मान दिया था। भुवनकीर्ति ने बादशाह की सभा मध्य सभी मिथ्यात्वियों को शास्त्रार्थ में जीत लिया तथा जैन धर्म के यश को द्विगुणित किया था।

८२ वें भट्टारक वासवसेन ने यद्यपि मलिन गात्र वाले थे लेकिन उनके नाम-करण से तथा पिच्छी के स्पर्श मात्र से कुष्ट का रोग दूर हो जाता था।

८३ वें भट्टारक रत्नकीर्ति भी निर्मल चित्त वाले तथा कामदेव पर विजय पाने वाले थे।

रचना काल :—

"गुरु छन्द" को सोमकीर्ति ने संवत् १५१८ आषाढ सुदी पंचमी रविवार को समाप्त किया था। रचना स्थान सोझिन्नापुर था जो भट्टारक सोमदेव का केन्द्र स्थान था। वहीं उनकी गादी थी तथा वहीं उनका पट्टाभिषेक भी हुआ था।

रचना की विशेषता—

गुरुछन्द ऐतिहासिक कृति तो है ही साथ में भाषा की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। सोमकीर्ति ने छन्द के प्रथम तीन पद्य संस्कृत में निर्मित किए है। फिर राजस्थानी भाषा में पद्य एवं गद्य दोनों निर्मित हैं। राजस्थानी गद्य को कवि ने बोली लिखा है जो तत्कालीन बोलचाल की भाषा थी।

उस समय १५ वीं शताब्दी में इस प्रकार की रचना स्वयं में ही महत्वपूर्ण है। १५ वीं शताब्दी में निबद्ध राजस्थानी गद्य-पद्य का नमूना अच्छी तरह से देखा जा सकता है। पूरा छन्द १०४ पद्यों में पूर्ण होता है इसके अतिरिक्त बोली वाला भाग अलग है।

दूहा बंध, दूहा पाथडी अर्ध-त्रोटक, छन्द हवि दूहा, छन्द त्रिवलय, आदि छन्दों का प्रयोग किया गया है। कवि को दूहा छन्द प्रिय था इसलिए उसने दूहा बंध, दूहा, हवि दूहा के नाम से प्रयोग किया है। इसी तरह बोली हवि बोली इन दो नामों से राजस्थानी गद्य का प्रयोग अपने आप में ही उज्जवल पक्ष है।

(३) रिषभनाथ की धूल

यह एक लघु काव्य कृति है जिसमें भगवान आदिनाथ के पांचों कल्याणकों का वर्णन किया गया है। इसमें चार ढाल हैं। यद्यपि कवि ने इस लघु कृति की रचना आदिनाथ की जीवन गाथा वर्णन करने के उद्देश्य से की थी लेकिन कहीं-कहीं उसके अपने काव्य कौशल का परिचय मिलता है। प्रारम्भ में नाभि राजा की रानी मरुदेवी की परिचर्या में देवियां किस प्रकार लगी हुई थी इसका एक वर्णन देखिये—

केवि सिर छत्र धरंति करंति केवि धूपणाए।
केविड गह देइ अंगि, सुवंगी पूजा घणी ए।।
केवि सपन अनि आसन, भोजन विधि करिए।
केवि खडगधरी हाथि सो, सायइ नितु फिरिए।।

तीर्थंकर ऋषभ को पाण्डुक शिला पर स्नान कराने के पश्चात् इन्द्राणी बड़े भाव से उनका शृंगार करती है। उन्हें सोलह प्रकार के आभूषण पहिनाती है। इन्द्र स्वयं तीर्थंकर के अंगूठे में अमृत डाल देता है। खूब उत्सव होते हैं तथा देव एवं देवियां तथा अयोध्या के नर नारी खुशी से नाच उठते हैं।

इन्द्र इंद्राणीय करि अभिषेक, आप आपणि रंगि रचियां विवेक।
स्नान करावित्र सोल विभूषण, भूषर्यां ते जिनवर सहि जु सुलक्षण।
इन्द्र अंगूठि अमृत देइ, आनीय वर्मंवन नवि लेइ।।

कवि ने रचना के अन्त में अपने नाम का उल्लेख किया है लेकिन कृति का रचना काल नहीं दिया है—

राजा राणिम सवि सुख सहुए,
श्री सोमकीरति कहि विउ बहुए ।
मूल श्री ऋषभनु गाइसिग,
तहां चितत फल सहु पाइसिए ।।

(४) त्रेपन क्रिया गीत

इस लघु गीत में श्रावकों द्वारा त्रेपन क्रियाये पालने पर जोर दिया गया है। इन क्रियाओं के पालन करने से मनुष्य का जीवन सात्विक बनता है तथा उसे स्वर्ग एवं मुक्ति की प्राप्ति होती है। पूरे गीत में ६ अन्तरे हैं तथा गीत के अन्त में कवि ने अपने नाम का भी उल्लेख किया है। पूरा गीत निम्न प्रकार है—

त्रेपन क्रिया गीत

सरसित स्वामिणि मह निशि समरी जिण चुवीस नमी जि ।
सहि गुरु चलण कमल प्रणमीनि किरीया त्रिपन लीजि ।।

सहिए त्रिपन किरिया पालु पाप मिथ्यातज टालु ।
साचु समकित हृदय धरीनि आचिकुल अजूयालु सही ।।१।।

रूडु समकित ते एक कीजि तेस उपमा कुण दीजि ।
ईग्यार प्रतिमा निरमल भणीइ, ते साचि चित कीजि ।।सही।।२।।

दर्शन ज्ञान चारित्रि चाहु, मुगती जु उमाहु ।
रत्नत्रय भंडार करीनि निज मन निश्चल साहु ।।सही।।३।।

आठ मूलगुण निश्चल जाणु व्रत बारि बखाण्उ ।
बाह्याभितर तपविहु भेदे, सुछुते मनि आणु ।।सही।।४।।

च्यार दान विहु पात्रा सारु जल गालण तिणि वार ।
एक अणथमी अति घणु सूधी, तु तिरसु संसार ।।सही।।५।।

सोमकीर्ति गुरु केरी वाणी, भवकि जीव मनि आणी ।
त्रिपन किरिया जे नर गाइ, ते स्वर्ग मुगति पंथ थाई।।सही।।६।।

गुटका पत्र संख्या १३७

आदिनाथ गीत

गागर में सागर भरने के समान प्रस्तुत गीत में आदिनाथ स्वामी के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इस प्रकार के गीत लिखने में जैन कवि बड़े चतुर थे। छोटे-छोटे गीतों के माध्यम से वे विविध विषयों पर अपनी काव्य शक्ति का प्रदर्शन करते थे। आचार्य सोमकीर्ति भी इस प्रकार के गीत लिखने में सिद्ध-कवि थे। प्रस्तुत गीत भी इस प्रकार का एक गीत है। इसमें २१ पद्य है। गीत निम्न प्रकार है—

आदिनाथ विनती

नाभि नरिंद मल्हार, मुरा देवी राणी उर रयण।
त्रिभुवन तारणहार, हेलां जिणि जीतउ मयण ॥१॥
नयर अजोध्यां वास, कुल इख्याकह मंडणु ए।
सुर नर सेवि तास, वर्णं सुवर्णह जास सवे ॥२॥
पंचसइ धनु देह, रूप रंग रस श्यडु ए।
गुणह न लाभि छेह, लक्ष चुरासी आयु कही ॥३॥
पूरव तेह विचारि, सत्तिर लक्षह कोडि तिहा।
छपन सहस मझारि, इणी परि वरसासु एक हुउ ॥४॥
पूरव तेह ज भेउ, जे मिथ्याति वाहीया ए।
किम करी जाणि तेह, वीस लक्ष बाला पणइ ॥५॥
त्रिसिठ राज अभ्यास, एक पूरव चारित्र धरीय।
भवयां पूरीय आस, अपछरा देखि वैराग भउ ॥६॥
छोड़ीय तब निज राज, च्यार सहस नरपति समुय।
कीधु तब निज काज, वरस दिवस पारणु भउए ॥७॥
घरि श्रेयासह आइ, इंधु रसि आहार लीउ।
अंजलि अट्ठठ प्रमाण, सहस्र वरस गयां उपनुए ॥८॥
निरमल केवलज्ञान, प्रातिहार्य आठि हूया ए।
अंनत चतुष्टय च्यार, अतिसिदीस विराजमू ए ॥९॥
त्रिहू आगलि सविचार, समोसरण स्वामी तणउं।
दीसि जोयण बार, वीस सहस पग थारीयां ए ॥१०॥

वेदी अतिहि विसाल, सिंघासन हीरे जड्यूं ये।
ते पुण अतिहि विसाल, छत्रत्रण सिर झगमगियां ॥११॥
चुसठि चमर बीजंत, सुरनर गण गंध्रुव मिलीया।
जन्म सफल कीजंति, नाटक नाचि वेवीयां ए ॥१२॥
तुंबर गेह करंति, वापी वन अति धातिका ए।
पोल प्रवेस राजंति, चुरासी गणधर हूया ए ॥१३॥
वाणीय सप्तविभंग, दिन दिन उच्छव इम हुइये।
पूजीय मन तणि रंगि, भावना भाविसुं आपणीयां ॥१४॥
सुण स्वामी मुझ वात, दुःख निवारण तुं धणीया।
तुं माता तुं तात, तुं बांधव तु जगह सुरो ॥१५॥
भवि भवि भम्यु अपार, जन्म जरा मरणादिघूय।
सहियां दुःख सविचार, इन्द्री पांचे निरजय्यु ए ॥१६॥
मनह सरिरे विनाण, मयण पापी घणुरो सव्यु ए।
मोह माया नि मान, गर्भवास दुख बहु सह्या ए ॥१७॥
थावर त्रसह मझारि, नरक सात निगोदीयां ए।
मानव देव संसार, पंचमिथ्याति वाहीउ ए ॥१८॥
कुगुरु कुदेव अनंत, अवरदेव सवे जोयतां ए।
मितुं दीठु माहंत, तिणि कारणि तुझ पय कमलो ॥१९॥
सरण पयट्ठउ देव, राखि क्रिया करे माहरीये।
राव करूं किकेवि, नव निधि जस घरि संपजिए ॥२०॥
अहनिशि जपतां नाम, आदि तीर्थंकर आदि गुरु।
आदिनाथ आदिदेव, श्री सोमकीर्त्ति मुनिवर भणिए।
भवि भवि तुझ पाय सेव, चरणकमल वंदन करूं ॥२१॥

इति श्री आदिनाथ वीनती समाप्तः

मल्लि जिनगीत

प्रस्तुत गीत में तीर्थंकर मल्लिनाथ का स्तवनात्मक वर्णन किया गया है। यह एक लघु गीत है। इसलिये उसे अविकल रूप से पाठकों के पठनार्थ यहां दिया जा रहा है—

मल्लिजिन गीत

स्वामीय श्रीय मल्लि जिणवर देव तोरा गुण गाउं
तोरा नित नित पायवी सेव अति घणु भाउ ।।चडाल्
ध्याउं अति घणु तह्म पामे सेवा चिहुं गति माहि भमीउ।
कुगुरु कुदेव पासांइ रुलीउ जु जिण धर मन रमीउ
राग द्वेष मनमथमय भोल्यु बुधि करीय घणु लामी।
जोतां जोतां मिलु लाधु मल्लिनाथ जिन स्वामी ।।१।।
चुरासीय लक्ष जीवा योनि भमी भमी भागु
वली पुण्यतणि परिमाण ठाकुर तह्म पीये लागु ।।
तह्म पाइ कमले लागु अवरन मांगु भावेर तम्ह पाइ सेव लेहुं
तोरा गुण अद्धि अनंता एक जीव करि केम कहुं ।
थावर त्रसह् नगोदि भमीउ गति सबलीयमि वासी ।।२।।
पंच महाव्रत पंच सुमति मति गुपति न पाल्यां
चारित्र दूषण जे ते स्वामी न टाल्या ।।
नवि टाल्यां दूषण करम मूसाइ मूढ पणि अति भोल्यु
इंद्री मनह् विकारि अमीउ मोहि अति झंखाल्यु
समकित रयण चारित्र नवि आण्यां धुरि न सुधु संच।
महि गुरु पाय कमल घणु सेव्यां पाल्या महाव्रत पंच ।।३।।
देव दया करु स्वामी संभाल सेवकनीय कीजि।
जिम२ जिणवर वीय वाणि सांभलि मोरू मन भीजि ।।
मोरू मन भीजि ते परि की जिलु गिरि पुरवा राज।
वैराग्य रंग रसि घणुं रातु अवर नहीं मुझ काज।
आठ मद ते मनि था छांडी वीनवु छु हेव।
श्री सोमकीरति गुरु इणी परि बोलि भवि भवितुं मुझ देव ।।४।।

गुटका पत्र संख्या ५४-५५

लघु चिंतामणि पार्श्वनाथ जयमाल

आचार्य सोमकीर्ति का यह चिंतामणि पार्श्वनाथ जयमाल स्तवनात्मक है। इसकी एक विशेषता यह है कि जयमाल अपभ्रंश भाषा में है। १५ वीं शताब्दि में अपभ्रंश का प्रचलन था तथा कविगण कभी-कभी अपभ्रंश में भी अपनी कृतियों की रचना करते थे। इसलिये सोमकीर्त्ति ने भी अपना अपभ्रंश के प्रति प्रेम प्रदर्शित करने के लिये इसकी रचना की हो अथवा पार्श्वनाथ के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित करने की दृष्टि से कवि ने इस जयमाल का निर्माण किया गया दिखता है।

आचार्य सोमकीर्ति की कृतियाँ

१. यशोधर रास
२. गुरु छन्द
३. रिषभनाथ की धूलि
४. त्रेपन क्रिया गीत
५. आदिनाथ विनती
६. मल्लिजिन गीत
७. लघु चितामणि पार्श्वनाथ जयमाल

यशोधर रास

श्री जिनइ स्वामी श्री जिनइ स्वामी पाउ प्रणमेवि ।
सिद्धह आचारिय नमु उवज्झाय वली साधु मुनिवर ।
सरसइ जिनमुख निर्गइ गुरुह जिन पयकमल मधुकर ॥
राय यसोधर जणाणिसु रचु रास मन सुधि ।
भवीयण जण तह्मे संभलु जिम पामु घणु रिद्धि ॥१॥

योध देश का वर्णन :

जंबूदीविह भरहषेत महीयल भलि सोहि ।
योधे देश सोहामणुए, तिहां जण मण मोहि ।
वाडी वन सरोवर अपार, नद नदीय विशेष ।
ठामि ठामि जिहां दानसाल, नर रूपडा वेष ॥२॥

अति मोटां दकडां गाम, सुर नगर समान ।
जे जे आगर वस्तु तणां सर्व रत्नह्वान ।
नयर मनोहर **राजपुर**[1] ते देश मझारे ।
जु वर्णहुं जिसु अछइ तउ लागि वारे ॥३॥

मारदत्त[2] नरनाह तिहां सोहि अति सुन्दर ।
दान मान जस रूप रिधि अभिनवउ पुरंदर ।
छह्रं दरसनना शास्त्र जिके ते करइ विचार ।
किम तिरीइ किम बूडीइए ते जाणि न सार ॥४॥

देवीय मठ[3] दिक्षिण दिशि तिहां नयर सोहावि ।
देश विदेश तणा ज लोक यात्रा सवे आवि ।
जाणे कज्जल घडीय एह तस भीषम रूप ।
चंडिमारि[4] तस तणउं नाम प्रणमि सवे भूप ॥५॥

आसोज **चैत्रीय** नुरताए तिसु पूज करेवा ।
जीव सहित आवीज लोक तस करइज सेवा ।

---

१. नगर का नाम, २. राजपुर के राजा का नाम ३. देवी का मठ, ४. देवी का नाम

चैत्र वसंतज आवीउए वनसपती फूली ।
कामिनि काम विआकुलीए पति देषीय भूली ।।६।।

भैरव जोगी का आगमन :

तिणि अवसर जोगीय एक तिहां आवि पहूत ।
चेला छेली भगति करि आनि राउ बहूत ।
सेरी सेरीय भमइ सहू अनि चरीया गांइ ।
मूरष लोकां भोलवि वली सीगी वाइ ।।७।।

लोकह आगिल ते कहि अह्म वरस बहूत ।
दीठउ राम ज लषमण अनि अंजनि पूत ।
ब्रह्मा विष्णु महेस सवे पांडव अह्मे दीठा ।
रोगि ग्रसीया राय जिके मुझ सरण पईठा ।।८।।

सेव कराउ संभालीउ ए स्वामी सुणि वात ।
भैरव राउल[1] आवीउ ए चेलां सहु सात ।

राजसभा में जोगी का आगमन :

जोगीराइ तेडावीउ ए ते आव्यु ताम ।
उठी भूपति मानीउ ए वली करीय प्रणाम ।।९।।

आसीस देईय भूप सहित निज बिठा आपणि ।
वात पूछेवा राउ ताम वली करइ चिमासिणि ।
जोगीय बोलि राय निसुणिहूं प्रत्यक्ष देव ।
आपुं संगा राज रिद्धि बे करि मुझ सेव ।।१०।।

तुझसुं तु हरउं राज वली करउं जगहितु ।
जिणि काजि तेडीउ ए ते कहि मुझ चिहितु ।
कामण मोहण वसीयकरण थंभण घणा जाणुं ।
विद्या गयणह गामिनी ए वली मंथ वषाणुं ।।११।।

सहू रसायण मंत तंत ते सघला सूझूं ।
मद्य मांस अनि छोति धोति ते किमहि न सूझंऊ ।
राजा मन माहि हरषीउ ए जोगी प्रति बोलि ।
कोइ न दीठउ सृष्टमाहि जोगी तुझ तोलि ।।१२।।

---

१. जोगी का नाम

तिह्यां गयगाह गामनी ए तह्यौं मुझनि आपु ।
देई हाथ मो मस्तकि चेलु करी थापु ।
जोगीय बोलि राउ निसुणि चंडमारी देवी ।
न आमास घणा जीव हणी अंई पूजा करेसी ॥१३॥

देवी के सामने बलिदान के लिए जीवों का लाना

जलचर खेचर भूमिचर जे जीव कहीजि ।
तेह तणां जे युगल मलिते ते आणीजइ ।
कोटवाल तेडीउ राइ आदेश ज दीध ।
आणु अति घणा जीवरासि प्रणाम ज कीधु ॥१४॥

गउ कोटवाल देश माहि बहु जीव अणावि ।
अति घणा जुगलज आवीयां ए कोइ नाम न जाणि वि।
हरिण रोभ गज अश्व छाग महिषी वृष मेष ।
बक सारस अनइ चक्रवाक जे जीव असंख ॥१५॥

देवी मठ सहू पूरीउ ए तेहे जीवे आणी ।
राजा वेगि पधारीउ ए तेहे आव्यां जाणी ।
जोगीय आव्या ताम सवे बिठा निज आसणि ।
राजा देवी पाय पडी ए बली साह्यि सिंघासणि ॥१६॥

त्रिसी मंत्री प्रति भणि तुह्मो राउल पूछउ ।
कांइ न हणीआ जीव अजी किपिअछि उछव ।
पूछयउ जोगी कहिय ताम संभलि तुं भूप ।
बत्तीस लक्षण नरह युगमये हुइ सरूप ॥१७॥

ते आणी आपणि हाथ लई हुंस करेवु ।
पूजीय देवि संतोष करी सहू विघन हरेवु ।
तिह्यां गयगाह गामनीए तुझ ततक्षण तूसि ।
इम कीधा पाषिकहुं मुझ देवी रूसि ।
सुणीय बात तिहां भूमिपाल, तलवर हकार ।
बत्तीस लक्षण नरह युगम आणेला इम बार ॥१८॥

आपणि तलवर चालीउ ए नृप करीय प्रणाम ।
सेवक सवे तिणि दहदिशि ए पाठवीया ताम ।

संघ सहित सुव्रत मुनि का आगमन :

तिणि दिनि मुनिवर संघ सहित सुव्रतह नाम ।
आवी पुहुतु वनह मझि दिन चडिउ याम ॥१९॥

कोइल करइं टहूकडा ए मधुकर झंकार ।
फूली जातज वृक्ष तणीये वनह मझार ।
वनदेवी मुनिराउ भणि इहां नहीं मुझ काज ।
ब्रह्मचार यतिवर रहितु आवि लाज ।।२०।।
इम जाणी मुनिराउ सही समसान पहूत ।
मुनिवर आणी तास तणि ते अछइ बहूत ।
ठामि ठामि सव तणीय गंधि अनि अस्थि असंप ।
काक सेह सीयाल स्वान तिहां आवि पंथ ।।२१।।
फासूय भूमि वलोक करी मुनिराउ बइठउ ।
वैराग्य सरीपु ठाम देषि मनमाहि संतुठ ।
चैत्र मास सुदि आठमि सहूनइ उपवास ।
ब्रह्मचार अनिषुडीय एक आव्यां गुरु पास ।।२२।।
गुरु प्रणामी कर जोडि दोइ मागि ने औषध ।
संसार दुख निवारवाए ए अछइ औषध ।।
मुनिवर बोलि सुणउ वत्स तम्हे अछउ बालां ।
नयर मझि आहार लिउ वली पुहुचु पालां ।।२३।।

।। वस्तु ।।

ताम षलिकषलिक सुणीय गुरुवाणि ।
प्रणमीय तव बेहु चालीयां रूपवंत पुण्य अछिवालां ।
लखण सवहु विभूषीयां हंस गमण करि जाइ पालां ।
तव ते तलवर मूलगु मारगि मलीउ जाम ।
देषी दोइ मन चीतवि सरीयां सवि मुझ काम ।।

अथ ढाल बीजी

क्षुल्लिका युगल का माना : (२)

क्षुल्लक युगल दीठउं जाम । तलवर मनमाहि हरष्या ताम ।।
देवी पूजा होइसि ए ।
इम बोली पाषलि फरिवरीया तलवर सवि भूमि परिवरीया ।
बह्म ते पुछी प्रतिभणिए ।।२४।।
मम कंपि सतुं बहिन लगार, अथिर असार अछइ संसार मरण, तणु अह्म भय किस ए ।।२५।।

बहिन हसी भाई प्रति बोलि ।
इसे वयणे मन किमहिन डोलि ।
जउ जिनवर हीयडि वसिए ।।२६।।

कहि तुं राज सरीरह कास ।
मुनिवर न करि कहिनी आस ।
राजा रूठउ सुंकरि ए ॥२७॥

निश्चल हीयडुं बिहुं जणकीधुं ।
सावधि अनसन ततक्षण लीधुं ।
ते तलवरह सुं भणि ए ॥२८॥

रह वेगला तह्मे अह्म आभडसु ।
मुनिवर छबतां नरय पडेसु ।
जिहां देइ तिहां आवसु ए ॥२९॥

दूर थका तलवर सविजाइ ।
बालिक जूडी आगलि थाइ ।
देवीमंडप आवीयां ए ॥३०॥

देवी मन्दिर की दशा :

देवीय मंडप विषमु दीठउ ।
धूम तणु भर उलगाहि पिठउ ।
ठामि ठामि बीहामणु ए ॥३१॥

अस्थितणा कीहीं डुंगर दीसि ।
अस्थि सिंघासणि जोगी बाइसि ।
अस्थि दण्ड ते कर लेइ ए ॥३२॥

अमिष तणा कगला अति पुण ।
अमिष ठाम दीसिह्यि अतिघण ।
अमिष भखी पंखी चुणिए ॥३३॥

रुधिर तणा तिहां जल आधार ।
रुधिर करी लीपि तिणीवार ।
रुधिर जु कुंकुम मंडणु ए ॥३४॥

मस्तक तणी दीसि रूंडमाल ।
जिह्वक तणा तिहां चंदरमाल ।
आंतर तोरण अति घणा ए ॥३५॥

तिणि मंडपि दोइ बालिक लेइ ।
तलवर राउ प्रणाम करेइ ।
करजोडी इम वीनविए ॥३६॥

मंड्यां छइ दोइ सबले लक्ष्यण ।
रूपवंतनि अतिहि विचक्षण ।
स्वाम आदेशि आणीयां ए ॥३७॥

राजा रीसि खड़गजु तोलि ।
अवरह् माणस फेरि भोलि ।
ततक्षण सनमुख जोईउं ए ।।३८।।

राजा का तलवार उठाना तथा साधु द्वारा आशीष देना :

ब्रह्मचार तव देइ असीस ।
राजन जीवे कोडि वरीस ।
जस तोरु अति उजलु ए ।।३९।।

जे ये महियल अतिघण निर्मल ।
ते ते जाणे धर्म तणु बल ।
तिणि धर्मि तो जय घणु ए ।।४०।।

जे तलि राजा सुणी आसीस ।
ते तलि मन थी उतरी रीउ ।
वली वली साम्हुं जोइ ए ।।४१।।

राजा द्वारा परिचय पूछना :

सनमुख जोतांही इ विमासी ।
अवली बात होइ मोवासि ।
कुण थाणक थी आवीयां ए ।।४२।।

कइ इंद्र इन्द्राणी बेहू ।
यसकीरति धुरि आविदेहू ।
चंदा रोहिणि सुं मिलिए ।।४३।।

सूरयना देव सरीसु ।
माणस रूप न हूइ ईसु ।
कामि सहित सुंरति हुइए ।।४४।।

भाणेज युगल ते कारण जाणी ।
सहि गुरु केरी संभलि वाणी ।
लीधी दीक्षा तेहुइए ।।४५।।

एसा निरदय मोरू चित्त ।
पुण्यवंत घरे ये सुचित्त ।
स्नेह उपनु अतिघणु ए ।।४६।।

राज चिन्हि दीसि सवे अंगि ।
सामुद्रक बोलिन वररंगि ।
ते ते सवि इहा अछिए ।।४७।।

राजरिषि सघली कोइ छांडी ।
बालपणि दीक्षाकाइ मांडी ।
एवडु' साहस कोइ कीउं ए ॥४८॥

अथवा एवडी कोइ विमासणि ।
विसारी सनमुख थली भासणि ।
एक इणकी [illegible] सह ए ॥४९॥

राजा वलिक साहामु' जोव ।
पाप बुधि सघली ते धोइ ।
विनि करीनि पूछीउं ए ॥५०॥

कवण कुल केले तह्मे अवतरीयां ।
सूरज जिमि तेजि परिवरियां ।
कुणि कारणि दीक्षा लेइ ए ॥५१॥

जे कारण छि मनमाहि मोरा ।
सम देउं छुं गुरु तोरा ।
जु तुम्हे कांई उलखु ए ॥५२॥

क्षुल्लक द्वारा उत्तर देना

क्षुल्लक[1] बलतुं इम बोलि । जाणे सुरगुरु केरि तोलि ।
कांई करू ब्रह्म पूछीउए ॥ ५३

पाप बुधि छि राजन तोरी । धर्म कथा छि निश्चल मोरी ।
तु आपणउं किम मलिए ॥ ५४

येह विमास्यु' छि निज चित्ते । तेति जाण्यु' छइ पुण तत्त्वे ।
हवि विमासणसी करिए ॥ ५५

चडग कोप तव थकु' राइ । दृष्ट टली छि वलिक पाइ ।
कर जोडी ए सु' भणिए ॥ ५६

कहु स्वामि तह्म तणएं चरित्त । सहू सांभलयो एकि चित्त ।
कोलाहल को मां करूए ॥ ५७

लोक सर्वेनि जोगी नाम । देवी पुण चित्त कीधु' ठाम ।
ब्रह्मचार तव इम भणिए ॥ ५८

पुण्य तथा सहूइ सांभलयो । पाप वात माहि छि टलयो ।
सवि सुख पामउ तु सहूए ॥ ५९

1. मूल पाठ—ब्रह्माचार

जे जै मई निज नयणे दीठउ । कर्मज जाणी अति घण मीठउं ।
ते पुण अंगि भोगव्युए ।। ६० ।।

वस्तु—कहि षुल्लिक सुणउ सहू वात ।
जिणि कारणिमि दुख सह्यां । जेणि कर्म्मि वहु जोणि फिरियां ।
जिणि जिणि भवि जिम भोगव्यउं । जेम जेम वली पाप भरीया ।
ते ते परि सघली कहूं, सहू सांभलयो सार ।
कुमत्र विमारुण सांभ त्यजीय, जिम तिरसु संसार ।। ६१ ।।

अथ ढाल त्रीजो

(३)

उज्जयिनी के राजा यशोधर का वर्णन

जंबूदीप वखाणीइ भारत क्षेत्र मझारे ।
मालव देश[1] सोहामणु, नयरी **उजेणीय**[2] सारे ।। ६२ ।।

गढ मठ मंदिरउ रुडा देउल संख न पारे ।
वाजिय वन सर वर घणां धाईय कूप अपारे ।। ६३ ।।

नयर नवेश नदी वहि सिप्रा नामि गंभीरे ।।
राय **यसोधर**[3] नामि तिहां राज करि अति सूरो ।। ६४ ।।

दाता धर्मी ववेकीय भोगीय गुणह भंडारो ।।
समकित रयण विभूषी श्रावक तणउ आचारो ।। ६५ ।।

चन्द्रमती[4] राणी तिसु जाणे नारि अनंगो ।।
भोगवि सौख्य विवधि परितेहसु नव नव रंगो ।। ६६ ।।

चडतिगो वनराउनि राणीनी पूगीय आसो ।
उदर तणि दुख वसतोलां पूरा मुझ नव मासो ।। ६७ ।।

पुत्र जन्म

दसमि मासहं जनमीउ उत्सव हुइ अनन्त ।
जिनवर बिंबज पूजीनि दान सु दीधां बहुत ।। ६८ ।।

जे जिणि याचक वांछीउ ते ति सुदीधो लु दान ।
कुटंब लोक सजन तिणि आपीय वस्त्रनि पान ।। ६९ ।।

सातमइ दिवस सजन मिली मिसी दीधु तव मुझ नाम ।
पुत्र यशोधर एहज करसि तातनु काम ।। ७० ।।

---

1. मालवा प्रदेश
2. उज्जयिनी नगर
3. राजा का नाम
4. रानी का नाम ।

जिम रहु तिहां उछरू तिम तिम राउ प्रवास ।
आथि सोवन गयवर हयवर केरडा ह्लास ॥ ७१ ॥
पंच वरस इणी परि गयां अुलपंड बालपणु जाम ।
राइ जिणेसर पूजीनि भणवा मूकीउ ताम ॥ ७२ ॥

उपाध्याय के पास पढ़ने जाना

कैस उपाध्या भणावतां भणीयमि विद्याले सार ।
पनरवरस लगि हुं भण्यु पाम्यु भणवानु पार ॥ ७३ ॥
राउ काह्निं मुझ लेई गउ पंडित नीपनु जाणी ।
राइ पंडित मानीउ बोलीउ मधुरीय वाणी ॥ ७४ ॥
राइ तवहूं पूछीउ कहु वरस भणवानी वात ।
कुण कुण ग्रंथ ज जोईया कुण कुण शास्त्रनी जात ॥ ७५ ॥
राउ प्रति तव मइ कह्यु सुणाउ नरेसर आज ।
पंडित जे हुं भणावीउ कीधो लुं जे मुझ काज ॥ ७६ ॥

पढ़े हुए विषयों का नाम

वृत्तनि काव्य अलंकार तर्क सिद्धांत प्रमाण ॥
भरह नइ छंद सुपिगल नाटक ग्रन्थ पुराण ॥ ७७ ॥
आगम योतिष वैवक हय नर पशूयनु भेह ।
चैत्य चैत्याला गेहनी गढ मढ करवानी तेह ॥ ७८ ॥
माहो माहि विरोधीइ रुठा मनावीइ जेम ।
कागल पत्र समाचरी रमोवनी पाईइ केम ॥ ७९ ॥
इन्द्रजाल रस भेद जे जूयनइ भूमनु कर्म ।
पाप निवारण वादन नत्तन नाह्नि जे मर्म ॥ ८० ॥
वली वली काह्नु पूछसूं जे जे विद्या विसेष ।
ते जे यहुंय भणावीउ नही पंडित थोडनी रेष ॥ ८१ ॥
पंडितनि तूठउ दिइ लाष दीनार ।
वस्त्र ते मोलतणां सबे आपीय सार शृंगार ॥ ८२ ॥
किम करी शास्त्र जमुकीय आलीय अंगने वार ।
छत्रीस आयुधजे अछिते परिजाणीय सार ॥ ८३ ॥
इम करी यौवन पामीय वुल्यु बालपणु जाम ।
विवाह करवा कारणि राउ विमासिह्नि ताम ॥ ८४ ॥

राउ जे कथ कैशकि तणि तीरि। पाठवीउ जे दूत ।
देश विदेश छांडी करी नयरी उजेणी पहूत ।। ८५ ।।

राज सभा माहिं आवीय बहूठउ करीय प्रणाम ।
आदर राइ पूछीउ आव्यु तू कुण ठाम ।। ८६ ।।

कर जोडी ते वीनवि सुणउ नरेसर काम ।।
कथ कैशक नरपति अछि भूपाल तेहनु नाम ।। ८७ ।।

नारीय रूपि आगली राणी श्रीमती जास ।
अमृत महादेवी अछि किन्या रतन ते तास ।। ८८ ।।

यशोधर कुमार का विवाह

कुमर यशोधर कारणि देवा किन्या ते सार ।
मोकल्यु राइ तह्य तणु देववा घरहु आवार ।। ८९ ।।
दूत तणी भूपति सुणी बोलिव राय उछाह ।
यहां आणी कन्या तुम्हे करउतु सहीय वीवाहु ।। ९० ।।
दूति फोफल पालवां राइ संतोषवा तेह ।
वस्त्र विभूषण आपीनइ मोकल्यु कैशक एह ।। ९१ ।।
पहिलु लगन पठावीनइ बहु दल मेल्यु छि राइ ।
सजन लोक सोल्लासणि नाचि गीति ते गाइ ।। ९२ ।।
राउ राणी सजन सहू मेली बहु दल जाम ।
कन्यां सहित महोत्सवि आव्या ऊजेणीय नाम ।। ९३ ।।

वस्तु—ताम नयरी ताम नयरी भउ उत्साह
पुरहु लोक तब सवि मिल्यु घरिहि घरिहि प्रकाशणीय ।
ल्यावीया राउ जसोधज हरषीउ वनहु मझि सुणीयान आवीय
तलीया तोरण उतीयाँ गूडी ते वसरवाल ।
कन्या वरहु वधावीइ भरी करी मोती थाल ।। ९४ ।।

अथ ढाल चउथी

(४)

वधोला घरि घरि हुइए मालंसके उछव सहित अपार ।
सुणि सुंदरे उछव सहित अपार । तेल चडावि कामनीए मा०
गीत गांइ अति सार ।। सु० ।। ९५ ।।

नाहीय धोईय उठीउए । मा० । आणीय सवि सिणगार । सु० ।।
पहिरीय उठीय नीसरयु ए । हूउ तिहां
जय जयकार । सु० ।। ९६ ।।

शांतिक पौष्टक सत्रि करीए । मा० । चउखीउ गय वर पूठि । सु० ॥
राउ राणी सहू चालीयाए । मा० । दान देउ भरी मूठ ॥ सु० ॥ ९७ ॥

वनह् माहे तव आवीया ए । मा० । हुई यछि लगन नी वार ॥ सु० ॥
तोरणि पहु तुहुं वरू ए । मा० । कौषु मंगल चार ॥ सु० ॥ ९८ ॥

जब कन्या मि पेखीइ ए । मा० । अपतु अतिहि आणंद ॥ सु० ॥
रूपनी ऊपमा किम कहुं ए । मा० । मुख जिसु पूनिम चंद ॥ सु० ॥ ९९ ॥

हाथ वालुभलीउ ए । मा० । चापीउ पाणि सु पाणि ॥ सु० ॥
किन्या मुरकलु देई हसीए । मा० । बोलीय अमृत वाणि ॥ सु० ॥ १०० ॥

हाथे वालु मूकलां ए । मा० । सुसरि आपीय रिद्धि ॥ सु० ॥
पाये लागी आसीस देइए । मा० । बहू वर पामयो वृद्धि ॥ सु० ॥ १०१ ॥

वीवाह उत्सव वरतीउ ए । मा० । दीधोलु दान बहूत ॥ सु० ॥
कन्या लेई सजन सु ए । मा० । मंदिर वेगि पहूत ॥ सु० ॥ १०२ ॥

वेवाहीय बुलावीया ए । मा० । जसहर करीम पसाउ ॥ सु० ॥
नुलर्या जन सहू परिगर्या ए । मा० । पूजीया धरीय बहुभाव ॥ सु० ॥
॥ १०३ ॥

सुख सागर भीलु सदा ए । मा० । जातु न जाणु दीह ॥ सु० ॥
अमृत महादेवी लहीए । मा० । सिंहनी पामीउ सहि ॥ सु० ॥ १०४ ॥

इणी परि राज करंतडां ए । मा० । बुलीउ अति घणु काल ॥ सु० ॥
राइ सिरणगारज पहिरीउए । मा० । तिलक ते
रचीयो लुभालि ॥ सु० ॥ १०५ ॥

बइठउ राजा जसोहरु ए । मा० । सघली सभायते पुरि ॥ सु० ॥
सुरतर सरीषु दान गुणिए । मा० । दालिद्र करइ ते दूर ॥ सु० ॥ १०६ ॥

यशोधर द्वारा दीक्षा ग्रहण का विचार

आरीसि मुख जोयतां ए । मा० । कान मथा शिरराउ ॥ सु० ॥
पलीउवाल पेषी करीए । मा० । हीयइ बहु उपनु भाउ ॥ सु० ॥ १०७ ॥

जरा इवि गोउ लोक सहू ए । मा० । कीजि आपणु काज ॥ सु० ॥
दीक्षा लेउं हुं जिनतणी ए । मा० । बेटा देईव राज ॥ सु० ॥ १०८ ॥

हुं तब राइ हकारीउ ए । मा० । देवा लागु सीष ॥ सु० ॥

पुत्र को शिक्षा देना

आपणि कुल जे उपजिए । मा० । वडपणि लेइ ते दीष ॥ सु० ॥ १०९ ॥

समकित रयण तुं पालजे ए। मा०। टालीय सयल मिथ्यात ।। सु० ।।
धर्म अहंसा मनि धरी ए। मा०। बोलिम कूडीय साषि ।। सु० ।। ११० ।।
चोरीय वात तुं मां करे से। मा०। परनारी सही टालि ।। सु० ।।
परिग्गह संख्या नितु करि ए। मा०। गुरुवाणी सदा पालि
।। सु० ।। १११ ।।
न्याय पालें लोकह सहू ए। मा०। रयणीय[1] भोजन वारि ।। सु० ।।
वली वली बेटउ सीषविए। मा०। राउ ते कुलहू अचार
।। सु० ।। ११२ ।।
इणी परि पुत्रह सीषव्युए ।। मा० ।। दीधुं तव मुझ राज ।। सु० ।।
राइ तब दीक्षा लेई ए। मा०। कीधुं आपणुं काज ।। सु० ।। ११३ ।।
राउ राणी सवि बिस कीया ए। मा०। करीयनि युध बहूत ।। सु० ।।
देश विदेश जीपी[2] करीए। मा०। आपणि गामि पहूत ।। सु० ।। ११४ ।।
आण.न लोपि मुझ तणीए। मा०। राजनुं एह ज सार ।। सु० ।।
तव मुझ राणी पुत्र जण्यु ए। मा०। उद्धरवा कुल भार ।। सु० ।। ११५ ।।
आगि राणी वल्लही ए। मा०। पुत्र करीय विसेष ।। सु० ।।
रूपरंगिरस रूपडी ए। मा०। कर इछइ नितु नवा वेष ।। सु० ।। ११६ ।।
जाणे सो निसुं घड्यु ए। मा०। राणी केरडु देह ।। सु० ।।
दिन दिन वाधि अति घणु ए। मा०। राणीय सरिसु देह
।। सु० ।। ११७ ।।
पुत्र जसोमति[3] वाधतु ए ।। मा०। आप्यु पद्मा हाथि ।। सु० ।।
शास्त्र सवे भणावीया ए ।। मा० ।। आवीउ पंडित साथि
।। सु० ।। ११८ ।।
अति घणुं धनमि आपीउ ए ।। मा० ।। पंडित निमि रीझ
।। सु० ।। ११९ ।।
जु मुझ पुत्र पढ़ावीउ ए ।। मा० ।। काज अह्मारउं सीझ ।। सु० ।।
योवन करीय विभूषीउ ए ।। मा० ।। मांगीय किन्या म ।। सु० ।। १२० ।।
सुकिन्या परणावीउ ए ।। मा० ।। लगन हुए कि ठाम ।। सु० ।।
यसोमति कुमरज रूपडुए ।। मा० ।। मुझ सुं अतिहि सनेह
।। सु० ।। १२१ ।।
बेटउ किम नवि वल्लहु ए ।। मा० ।। आपणु बीजु देह ।। सु० ।।
इणी परि राज करंतडां ए ।। मा० ।। दिवसहू पश्चिम भाग
।। सु० ।। १२२ ।।

---

1. रात्रि भोजन मत करना
2. विजय
3. रानी का नाम

हुं बिठउ सभा पूरी करीए । मा० । चित्त लागु बरि राग ।। सु. ।।
तव राणी गुण सांभरयाए । मा० । मोहनु बडउं विनाए ।। सु. ।। १२३ ।।
राणी गुणि रस भेबीउ ए । मा० । मूकी सघलु माण ।। सु. ।।
राणी विण जे जीवीइ ए । मा० । ते विण किसउं ममाण ।। सु. ।। १२४ ।।
जे घडी जू जूयां बिसीइ ए । मा० । तिणि खिणि श्रावि हाणि ।। सु. ।।
श्राज विहाणि देइसु ए । मा० । यसोमति नीयराज ।। सु ।। १२५ ।।
राणी विण जु खिण रहुं ए । मा० । तु मुझ श्रावि लाज ।। सु. ।।
पहुर एक रमणी गई ए । मा० । बिठोलां सभाहा मझार ।। सु ।। १२६ ।।
श्रारती अवसर तव हूउए । मा० । मालतडे बोलाव्यु पडीहार ।। सु. ।।
पान देईनि मोकल्याए । मा० । नरपति सहूय श्रवास ।। सु. ।।
सभाह विसर्जी ऊठिउए । मा० । हुउ मंदिर पासि ।। सु. ।। १२७ ।।

वस्तु

साम पुहुतु २ गेह द्वारंति
तिहां ऊभी वर कामनी, तेह मझि जय शब्द बोलि ।
परि २ पगथीहुं चडयु, तेह गेह सुर भवन तोलि ।
सातमी भूमि बुली करी, आठमी भूमि मझारि ।
तिहां थी राणी उत्तरी, करती जय जयकार ।। ४ ।। १२८ ।।

अथ ढाल पंचमी

पगि लागी राणीयिणि लीए, नारे सूया राइ साही हाथि ।
राजभवन माहे गयांए, नारे सूया राइ साही हाथि ।। १२९ ।।
अवरस बीजी साथि, बिठउ राजा सेजतलिए ।
राणीय श्रंकि बिसारि, हसि रमि राजा रसिए ।। नरे ।। १३० ।।
व्याप्यु काम विकार, कामरंग सुख भोगवीए ।
पुहुयु हुं मरनाह, मुज पंजरि राणि करीए ।। नरे ।। १३० ।।
मन माहि उपनी तात, च्यार जात नारी तणीए ।
ते माहि पद्मनी जाति, चंद्र मकु मुख रूपडुए ।। नरे ।। १३१ ।
नयणे अतिहि विशाल, श्रष्ठिय चंद्र सरीषडुए ।
दीसि सुंदर भाल, जसु सोनु तापव्युए ।। नरे ।। १३२ ।।

जाणे नारि अनंग, राणी गुणे अति मोहीउए।
नींद न आवि जाम, मनह कमालिङ्ं पडयुए ।। नरे ।। १३३ ।।

हूईमविमासरण ताम, जु चंपासि हाथ मुझ।
चायूय पूडसि अंगि, जु जाणु तु जगसिए ।। नरे ।। १३४ ।।

रूप तणु होसि भंग, इम जाणी मिज सास धरीए।
कुवीयं नीदज कीध, येम रंगस्स आकुलीए ।। नरे ।। १३५ ।।

तब राणी मन दीध, हूं सउ राणी जाणीउए।
राणी विमासिए मा, मुज मीठी किम नीसउए ।। नरे ।। १३६ ।।

रानी का चुपचाप कोढी के पास जाना

सेज थ छाडु कम काय संकाची कामिनीए।
शिनि शिनि नीशरी हेवि, जिम सापिए छांड़ि कांचलीए ।। नरे ।।
।। १३७ ।।

नीसरी बार उघाडि, जु स्त्री मारग छांडीउए।
नथी कहिनि पाडि, इम देखीहुंउ पठीउए ।। नरे ।। १३८ ।।

खडगज हाथ धरेवि, अंधार पछेडउ उठीउए।
पूठि नीसरीउ एव, तव ति राणी उतरीए ।। न ।। १३९ ।।
पुहुती बोलि बार, कैत्रि थकु हुं चालीउए।
आतां न लागी बार, तिहां सूतउ छि पोलीउए ।। न ।। १४०।।
तेहनी कुष्टी देह, हाथ पाय सवे गलि गयाए।
दुःसह भाषरण एह, उंडीय आंखिज रातडीए ।। न ।। १४१ ।।
अंगि कुलक्ष्यरण जाम, राणी मेमवि आकुलीए।
पग तिल बिठी ताम, गोडि अंगूठउ जगावीउए ।। न ।। १४२ ।।
साहीय झूंटे तेरा, जु तुं मुडी आवीयए।
तुं तुं तेडीय केरा, सांजलि घाइ ताडीइए ।। न ।। १४३ ।।
जीय जीय जंपि ताम, पापी राउ न छुंटीउए।
किम कटि आवुं स्वामि, कोप्यु जु मुझ उपरिए ।। न ।। १४४ ।।
विहिली आवे सनाह, हसउ रमउ करूणा कसए।
मींयतुं वांहिडी साहि, इसुं चरितमि पेखीउंए ।। १४५ ।।

खडगउ लास्युं ताम, खडगज तव ते गडमडयुं ए।
हूं ईय विमासए ताम, विरीय वृंदं निपालीयाए ॥ १४६ ॥
वाह्णीय खडगज एह, कोठीय नारी उपरिए।
किम करी वाह्णु तेह, जाणी मोबनि आपीउए ॥ न ॥ १४७ ॥
पुत्र यसोमति नाम, माइ बाप जे मुझ दीइए।
तेह हणी कुण काम, एम विमासी हूं गउए ॥ न ॥ १४८ ॥
वेगि पहूतु श्रवास, खडग मूकीनि पुढीउए।
रीसि मूकीनी सास, नारी पापज आणडीए ॥ न ॥ १४९ ॥

नारी निन्दा

नारी विसहर वेल, नर वंचे वाए घडीए।
नारीय नामज मेल्हि, नारी नरक मतोलडीए ॥ न ॥ १५० ॥
कुटिल पणानी खाणि, नारी नीचह गामिनीए।
साचुं न बोलि वाणि, वाघिण सापिण अगनि शिखा ॥ न ॥ १५१ ॥
घर आलंगीय एह, दोष निधाने पूरीउए।
नारी केरु देह, साहस माया नितु वसिए ॥ न ॥ १५२ ॥
कामिनी काय मझार, नवधारा शुचि श्रावणीए।
धिग धिग मामज नारि, इम चितवंता पारणीए ॥ न ॥ १५३ ॥
मूकयू सघलु केश, जिम जिम पहिलुं नीसरीए।
तिम तिम कीयउ गवेस, साहस एसुं पेखीउए ॥ न ॥ १५४ ॥
मन माहि हूईय भ्रतिभ्रंत, नारी साहस पार नहीए।
नारी छाइयु माहंत, पेरवी लक्षण तेह तणाए ॥ न ॥ १५५ ॥
मलीय पुराणी मीत, नारी चंचल जाणीइए।
पलव ऊतरीय चित्त, दैव दैव करंतडाए ॥ १५६ ॥
तव हूउ परभात, गांइ गीत पंचम सरिए।
मंगल वंदणि जात, तव सिज्या थकु उठीउए ॥ न ॥ १५७ ॥
कीधु मात सनान, वस्त्राभरण विभूषीउए।
बीड बीड पूख वान, मुख उतरती आहूणीए ॥ १५८ ॥

फूल बीटमइ नारि, चेत रहित धरणि पडीए।
मूरछ मसि लिणी वारि, हसीय करी तवमि भण्युं ए ।। न ।। १५९ ।।
जोउ नारि विचार, समुद्र तणां बिंद जोयतांए।
नारीय चरित न पार, साकल घाइ आहणीए ।। न ।। १६० ।।
जीय जीय जीय भणंति, फूल बीम्मि दूहवीए।
मूरछी धरणि पडंति, ततक्षण तव ते उठीयए ।। न ।। १६१ ।।
हुं पण नासीय जाम, सभा मझारज आवीउए।
बिठउ सिंघासणि ताम, नारे सूया राइ साही हाथि ।। १६२ ।।

वस्तु

जाम बिठउ जाम बिठउ सभा पूरेवि
जिहां पुण सकल शास्त्र लेई वली उपास आव्यु।
वाचंतु सिद्धांत मझह, मनि ते नैव भाव्यु।
तव माता मुझ पालखी बिसी आवी जाम।
सभा सहित उठी करी, बिठउ करीय प्रणाम ।। १६३ ।।

अथ ढाल छठो

माता से वार्त्ता करना

संतुठी मुझ देख करि, माता दियई आसीस।
पुत्र परिवार सजन सहू, हीडोलिडारे जीव यो कोडि वरीस ।। १६४ ।।
माता तब हुं पूछीउ, कुशल विहाणी रात।
शिर धूणी निमि भणइही, हो माता म पूछ्र सुवात ।। १६५ ।।
माता सु मति इम भणि, कहु वरस केहा काज।
तवमि माता सुं कह्युं, हो. सोयणडउं लाधो लुं आज ।। १६६ ।।
वनि जाई दीक्षा लेउं, देईय बेटा राज।
घरि रहुं तु उपजि, हीडोलिडारे जीणि अविमुझ लाज ।। १६७ ।।
माता सु मति इम भाणि, संभलि तुं मुझ बात।
पूजिसुं गोत्रिज आपणी, सोयणडउं वारसि तात ।। १६८ ।।

माता का उत्तर

जल थल नाजे जीवड़ा. बलि बाकल नैवेद्य ।
कात्यायनी देवीय छि, ही. सोयणाडु छेदसि तेह ।। १६६ ।।

हूंसा वचनज संभली, कांप्यु हीयडि ताम ।
मुं आगलि ए कांइलीउंही, हूंसा केरडु नाम ।। ही. ।। १७० ।।

शिरधुणी माता मतिमि वयणाज बोल्यु सार ।
कुल शुद्ध राजकुमर हुइ, हीडाविडारे तेनवि बोलि मार ।। १७१ ।।

पापी इ पापी हुइ, धर्म्मी इ धम्मी होइ ।
राजा पदवी जिन लही, इम बोली सहू कोइ ।। १७२ ।।

माता मुं मति इम भणि, मूरख पणउ निवार ।
राज बाटजु जाणीइ, पापनं लागि लगार ।। १७३ ।।

वेद स्मृति वाणी इसी, कारणे पुण्यज होइ ।
ऊखध माहि विष खाइतांही, तीणि मरइ न कोइ ।। १७४ ।।

माइ तापसु मारीइ, अनि जीवहु केरी राम ।
मन माहि नवि आणीइ, पाप न लागाइ ताम ।। १७५ ।।

विहुं करे करणज डांकीयामि बोल्युं तव सार ।
काया वाचा मनि करी, हूंसी हो वयण निवार ।। १७६ ।।

जुतो हूंसा वहलही नीयसिर आपु ताइ ।
जिम जाणि तिम तुं करे, जीवन मारउं ताइ ।। ही. ।। १७७ ।।

माता तव विलखी हुई, मुझ मुख वयण सुणेवि ।
कणिकनो पाउ कूकडु तीणि तुं पूजे देवि ।। १७८ ।।

पाप मति मि मानीउं, लेईय एकाकार ।
लेईय पीठमि कूकडु, पुहुतों लां देव दुवार ।। १७९ ।।

देवी के आगे कूकड़े को मारना

देवी आगलि ले हण्यु पीठहु कूकड राइ ।
जीव घणा तुं मान जो, एसउं बोल्युं माइ ।। ही. ।। १८० ।।

देवी मंडपि नृप देइ सघलु राजकुमार ।
राणीय तइ ते सांभल्युं, तिहां आवी तिणी वारि ।। १८१ ।।
राजा पागि लागी रही, राणीय बोलि ताम ।

रानी द्वारा घर पर भोजन के लिये निमन्त्रण देना

ए वैरागज एवडु, कहु स्वामी कुरा काम ।। १८२ ।।
आज मया करी मु यति, मुझ घरि करउ रसोइ ।
दीक्षा कालि लेईनि, तप करसां जण दोइ ।। १८३ ।।
तीरगे जयशोमि मानीउं, भोलपणि ते भूप ।
जिन पूजानिधानीउ, जाणतु राणी सरूप ।। १८४ ।।
मुढि मुढि तिहां गउ, राणी तणइ आवास ।
कर जोडी साम्ही रही, बोलिउं ताहारडी दास ।। १८५ ।।
सोवन थालज मांडीइ, रूपा आसरण दीध ।
माइ सहित बिसारीउ, अति घरणी भगतिज कीध ।। १८६ ।।
बेटु बहूयरनु तीया नारीज सवलि मझि ।
जीमाडी आदर करी, कहि नवि आपइ मुझ ।। १८७ ।।
साक पाकस्यूं रसवती मूकीय थालि भरे वि ।
माहि थिरि राणी जीमावही, हीयडोलि कूड धरेवि ।। १८८ ।।
अध जमती राणी कहि, स्वामीय सांभलि बात ।
पीहर थी कांई मूकडी, आव्या हुया दिन सात ।। १८९ ।।
तो विण मि कांई जोइवा आंगि अछि नेम ।
अवसरि तु नवि पामीउ, तुहु जोयउं केम ।। १९० ।।

राजा को विष के लड्डू खिलाना

अध जमती ते उठीय जाईय माहि भवास ।
पेई आणी उघाडीइ, मूकी छिराजनि पास ।। १९१ ।।
विप मोदक दोइ काढिया, एक माय एक राइ ।
रूडा ते बीजां दीया, बंली बली रे लागि छिपाइ ।। १९२ ।।

कुटकुलवमि चाखीउ, आंणतु ब विनाण ।
तिणइ विधि हुंयारीउ, राणी नी लोपी न काण ॥ १६३ ॥
विष मारया धरणी पडयु हूउ एक पोकार ।
मड तिमि तव हुय भण्यु, विष तणा वैद हूकार ॥ १६४ ॥
मुझ वाणी जब सांभली, राणी चितीताम ।
वैद्य जीवाडि रावनि, तु मो विणसि काम ॥ १६५ ॥

रानी द्वारा विलाप

इम चीती हाहा करी, छोडिय केश कलाप ।
मूरछ मसि उपरि पडी, हीयडलि आणीय पाप ॥ १६६ ॥
तुझ विण राणा राउला, आंगुलडीय देखाडि ।
निरधारी तु कांइ करि, कांइन करइ संभालि ॥ १६७ ॥
मूरछ मसि उपरि पडी, गलइ अंगूठउ देइ ।
चांपयि कंठ सोहामणु, प्राण रहित कीधो देह ॥ १६८ ॥

राजा का दाह संस्कार करना

राय राणा तव सहू मिल्या, मांडीय एक पोकार ।
माइ यसोधर बिहुनि, चंदन देउ संस्कार ॥ १६९ ॥
गाइ भूम सोनु देइ, मिलीया सवि परधान ।
ब्राह्मण सवि तेडी करी, अति घणु दीधो तु दान ॥ २०० ॥

यशोमति द्वारा राजा बनाना

राय राणो संघर्व मिली, कुमार बिठाड्यु पाट ।
राउ यसोमति थापीउ, जय जय बोलि छ भार ॥ २०१ ॥

वस्तु

तेह राजन तेह राजन पाप भरि माथि ।
जे जे दुःख वसीमि सह्यां, जीवा परिभव सहीउ ।
जिम जिम जिहां जिहां उपनां, जिसी २ गति दुःख भलीया ।
जिणी जिणी परि परि भव्यउ पीडी कूकड काजि ।
ते ते सविहुं तुझ कहुं, संभलि तु महराज ॥ २०२ ॥

अथ ढाल सप्तमी

गंगा हिमवन अंतरिए, गिरिवर अति उत्तंग तु ।
नाम सुवेलु जेहनु ए, वींसि मतिघणु श्रंग तु ।। २०३ ।।

मोर का जन्म मिलना

कंटाकुल जे रुंखडाए, काकर कठिन विशाल तु ।
अतिभीषण सुगामणु ए, जाणे नरक निवास तु ।। २०४ ।।
तिणि गिरि ढेल थांणि उंरिए, उपनु हु ताम तु ।
माता मुझनि पांख करेवि विढांकी ताम तु ।। २०५ ।।
तिह परबत पु ढूकडउंए, अछइ मच्छी गाम तु ।
तिहां थकु एक पारधीए, पुहुतु तिणि ठाम तु ।। २०६ ।।
ततक्षण तीणि बाण हणी, खांध चडावी ढेल तु ।
नाहनु सु मुझ पेख करे, चाल्यु फाटि मेलिहतु ।। २०७ ।।
घरि जाई घर आंगणिए, मूकी खाण मझार तु ।
ढेलवी केवा ते गउए, मलीउ ताम तलार तु ।। २०८ ।।
ढेढऊ दीली तीणी लीइए, ठालु आव्यु गेह तु ।
कामिनी कृत्या तस तणी एकादश कूटी तेह तु ।। २०९ ।।
मुलेई नइ पारधीए, गउ तली एरह पासतु ।
माणु सानु तिणि दीउंए, हुं दीधि तिणि तास तु ।। २१० ।।
तिसु तलार धरि ऊछरयु ए, पाम्मु पूरू काय तु ।

उज्जयिनी के राजा के पास ले जाना

उजेणी नयरी लीउए, जिहां जसोमति राउतु ।। २११ ।।
भेटणु ते देखी करीय तब मनि हरख्यु भूप तु ।
जि माता साथि मूईए, सांभलि तेह सरूप तु ।। २१२ ।।
करहाटक देखि हुउए, मोटु स्नान कराल तु ।
मोटी दाढे ऊजलुए, मुख तेहनु विशाल तु ।। २१३ ।।
राई तेह देशह तणिए, सोवन संकलि जू तउ ।
पारधि रस तिणि आणीउए, राउ जसोमति नित तु ।। २१४ ।।

तीणि तिहां ते पाठव्युए, आव्यु सभा मझार तु ।
तेह दर्शन राउ हरषीउए, जोऊ कर्म विचार तु ।। २१५ ।।
लुंड मसाणी नइ दीउए, स्वानज पालण काज तु ।
हुं पुण गरहीनि दीउए, संतोषि नरराज तु ।। २१६ ।।
एक दिवस मि पेखीउं ए, राणी रमाती रंग तु ।
बिठी रलीया इत कईए, कूबड तणि उत्संगि तु ।। २१७ ।।
माही समरि जाणीउए, तव मनि उपनी रीस तु ।
कोधि गर्याणहि उडीउए, नख रेहणीयां सीस तु ।। २१८ ।।
राणी रीसि मूकीउए, निज सूवणनु घाउ तु ।
पामीय मूरछा ते पड्युए, जिहां बिठउछि राउ तु ।। २१९ ।।
तव रांड एसु भण्यु ए, लिह लिह ए सखि जाम तु ।
स्वामि संकल ओडि करे, ग्रहीउ कंठि ताम तु ।। २२० ।।
तव रांड माथि हव्यु ए, रमतां सो गड स्वान तु ।
तिणि घाइ ते स्वान तणी, जीव हुली हूई हाणि तु ।। २२१ ।।
ते पड़ियां दोइ पेख करे, रांड विलापज कीध तु ।
तेडी सवि जन आपणाए, दसी सीरवामणि दीधतु ।। २२२ ।।
संस्कार अगरि देउए, देउ सोवर्णह दान तु ।
गंगा अस्थिज पाठवुए, मोर तणांनि स्वान तु ।। २२३ ।।
स्वर्गि जई सुख भोगविए, जिम बईयाई तात तु ।
कंठ गइथि जीवडिए, मितवमुणीयए बात तु ।। २२४ ।।
तीणे ते सहूइ कीउंए, तव दोइ छंडि सरीर तु ।
गिरि हि सु वेलि भीमवनि, गंगा केरि तीर तु ।। २२५ ।।

मोर एवं स्वान मार कर सर्प एवं सेहलि होना

मोर मरी तिहां उपनुए, कालु मोटु सांप तु ।
स्वान वली सेहलु हुउए, भोगवतु निज पाप तु ।। २२६ ।।
एक वार जव दोइ मिल्याए, सेहलि साम्हु नाग तु ।
सापि सेहलु फणि हण्युए, आवर नहीं कोइ लाग तु ।। २२७ ।।

सेहलि पलग मारीउए, सब तरिछि जे जीव तु।
नीगइं सेहलु सब हण्यु ए, करतु अलिपणु रीवतु ॥ २२८ ॥
उज्जेणी तलि जे वहिए, सिमा नदी सुसार तु।
सेहलु मरी तिहां उपनुए, महामच्छ सिसुमार तु ॥ २२९ ॥
सांप मरी तीणी नदी ए, रोहीतणि अवतार तु।
मच्छ गला गलि उच्छरयाए, जाति तणि बिचार तु ॥ २३० ॥
एक बार रोही मरयु ए, जल माहि सिसुमार तु।
दासी राजा केरडी ए, भीलेवा तिणि बार तु ॥ २३१ ॥
झंग देई दासी पडीए, मच्छह उपरि जाय तु।
हुं मूक्यु दासी ग्रही ए, नीगों बुनाव्यु ताम तु ॥ २३२ ॥
दासी बीजी नासि गई, तेहे वीनवीउ राउ तु।
तुझ दासी माच्छि गलीए, काई करूं उपाय तु ॥ २३३ ॥
रांद मच्छ कढावीउए, मोकलि धीवर घाह तु।
जो सरि करी ओलावीउए, तेनही कहि निपाडतु ॥ २३४ ॥
रांद माहं ते भख्यु ए, जोउ करम विचार तु।
तवहुं नासीनि गउए, बीजाद्रह मझार तु ॥ २३५ ॥
एक दिवस तिहां आवीयाए धीमर चाडि विशाल तु।
तेहे लांख्यु आलि पड्यु ए, रोही मच्छु जाण तु ॥ २३६ ॥
बाहिर काढी लांखीउए तेहे मच्छ जाम तु।
ढेवाल हणता देख करे, बूढउ बोल्यु ताम तु ॥ २३७ ॥
मम को एहनि मारसुए, रोही मच्छ उ नाम तु।
मि जाण्यु मूका वसिए सरयु, अम्हारू काम तु ॥ २३८ ॥
आज हण्यु युत्रिलासिए, लेईय चालु गेह तु।
ते सवि लेई घरि गयाए, लांख्यूऊ करडी तेह तु ॥ २३९ ॥
तिहां रह्या बहु दुःख सह्याएं, संपतु परभात तु।
राजभवनि लई गयाए, जिहां राजानि मात तु ॥ २४० ॥
राजा माता मति भणिए, रोही मच्छ छव एह तु।
करउ श्राद्ध ता सह सणु ए, स्वर्गह कारण तेह तु ॥ २४१ ॥

तिणी पापणी वली तिम किउं ए, तेह्नी बंभणसार तु ।
आती समरण शुभ हुउंए, राजन तीणी वार तु ।। २४२ ।।
हुवि अंतिज जाहि ऊछक ए, नयरी उजेणी पास तु ।
करिउ धर्म रोमश सिसुए, जाणी नयर मिझार तु ।। २४३ ।।

सिसुमार मर कर बकरी होना

सिसुमार माछु मरीय हुई, छाली तिणि ठाम तु ।

रोही मर कर बकरा होना

रोही मरी वली उपनुए, ते छाली उरि ताम तु ।। २४४ ।।
मोटु बोकड तेहुउए, तिसु पय पान करंत तु ।
जूथा नाथि विलोकिउए, मनि धरि कोध अपार तु ।। २४५ ।।
कूखि सींगि सु हण्यु ए, मुक सहित तीणि वार तु ।

बकरा मर कर फिर बकरा होना

नीसरी जीव तिहां हुउए, छाली उयरि मझार तु ।। २४६ ।।
आपि आपनी पाईउए, जोउ संसार विचार तु ।
तेह गर्भ मोटु हुउए, जणवा तणि प्रसंगि तु ।। २४७ ।।
तेह छाली सुं जूथ धणी, करिवा लागु संगि तु ।
राउ जसोमति आवीउए, पारधि ग्युतिणिसेवितु ।। २४८ ।।
कोधि बाणज मूकीउंए, तिणि हणीयां ते बेवितु ।
राजा धाई आवीउए, उदर फडाव्यु तास तु ।। २४९ ।।
बालक बाहिर काढीउंए, साजु पूरे मास तु ।
अजापाल मति राउ भणिए, जोनि रहित ए आज तु ।। २५० ।।
यावर माइ पय पान करै, इणि ऊछेरि काम तु ।
राजभवनि राजा गउए, लागु राज व्यापार तु ।। २५१ ।।
पाप रिधि बणुं मोहीउए, पारधि करि अपार तु ।
पारधि जातां गाउ वली, मान्याभिसा बीस तु ।। २५२ ।।

जु मो पारधि सफलहुसि तुमि देवा ईस तु ।
दैवयोगि ते सफहूई मारयाभिसा राई तु ।। २५३ ।।

केता विहिची आपीया ए देवी केरि ठाइ तु ।
सूआरि राजा वीनव्यु ए सांभलितु भूपाल तु ।। २५४ ।।

भिसा सवेवि टालीया ए स्वान प्रति दीयाल तु ।
श्रुतयोगई बंभण भणिए योन रहित जे छाग तु ।। २५५ ।।

श्राद्धयोग भिसा हुई ए लागि ते हूनि पाग तु ।
राउ विमासी आणीउ ए चंद्रमृत्य जे नाम तु ।। २५६ ।।

तव तलवर ते आणीउ ए राजा भोजन ठामि करतु ।
राउ राजा लिइद् आजीजन सहु नाम तु ।। २५७ ।।

मह्यो न कांई पामीउ ए तरस भूख दुःख ताम तु ।
बंभण जीमीनि गया ए राजा सपरिवार तु ।। २५८ ।।

बइठे जिमवा उपनुं ए जाति समर तिणि वार तु ।
घर पुर नारी पुत्र सहू ए, माहारुं अछिद्र एह तु ।। २५९ ।।

एकन देखुं प्राण प्रियाए अमृत महादेवी देह तु ।
तिणि अवसिर दासी भणि ए सुणि सखी वचन विचार तु
।। २६० ।।

एह गंधभिसा तणु ए तुही अछिद्र अगार तु ।
बीजी सखी तिहां इम कही नहीं ए भिसागंध तु ।। २६१ ।।

मीनासनि कोढिण थई ए राणी अति दुरगंध तु ।
शिरधुणी बीजी भणिए नही मीनासन एह तु ।। २६२ ।।

विश देई नाह मारीउ ए पाप तणुं फल एह तु ।
खरखरति गलि बोलीउ ए राणी तामसूयार तु ।। २६३ ।।

सायल कापी आपि मुझ छाला सेकि अंगार तु ।
तिणि पापी तव तिम कीउं ए बेटा संरसी मात तु ।। २६४ ।।

पावा लागां श्राद्ध करी मुनि बोलि इसी बात तु ।
तिणि अवसरि वली उपनु ए माता तणउ विचार तु ।। २६५ ।।

छाली मरी तद ऊपनी ए कलिंगह देस मभार तु ।
भिसु भाराघइ हुउए वहितु हीडि भार तु ॥ २६६ ॥

बकरी मरकर भैंसा होना

वणजारा बरवस तणा ए वस्त्र गुणति गीबार तु ।
लेइ उजेणी आवीयाए छाली गुणज ठामि तु ॥ २६७ ॥

ताप कर चाल्यु ते मवइ सिप्रा नदीयज नाम तु ।
झीलति तिणि आवीउ ए राजासन लोवार तु ॥ २६८ ॥

कूलि सिंगि सुं हण्यु ए जाणि तणि आचार तु ।
अश्वपालिइ राइ वीनव्यु ए जाण्यु अश्व विचार तु ॥ २६९ ॥

कोपि राइ पाठव्याए भिसा लेवण तलार तु ।
तिणि आणी हद बांधीउ ए राजा भोजन ठाम तु ॥ २७० ॥

हींग लूण पाणी भरीय सरीम कढाही ताम तु ।
रडिपडइ लोहि घणुए भूकि अति पूतकार तु ॥ २७१ ॥

तब राइ बोलावीउ ए आगलि रह्या सूयार तु ।
पाकु पाकु छेद करे मारिणनला हसवार तु ॥ २७२ ॥

तिणि पापी वली तिम कीउं ए जांकुडि छांडी ग्रीव तु ।
ते छालु तिहां सेकीउ ए करतु अतिघणु रीव तु ॥ २७३ ॥

अतिकष्टि ते बे मूयां ए सुणि राजन आचार तु ।
एक जीव वध पामीउं दुःख घणा संसार तु ॥ २७४ ॥

वस्तु

ब्रह्म बोलइ ब्रह्म बोलइ सुणि न भूपाल ।
जेणीथु कूकडुं जेह अच्छि प्रतिवालु ।
पांचक लोक करि पूरीउ पाप कर्म वली नरय पासु ।
कूकडी तिहां जेन्मीयां पाप विशेषि बेहु ।
जगाला मात बिलालेईतु पापतणां फल एहु ॥ २७५ ॥

अथ ढाल आठमी

राग राज वल्लभ

सखी कूकड युगलु तेह चुगत चुणतां वृद्धि कउं रे ।
वली उछरीयां बेह तेह सर्व कलाये पूरीयां रे ।। २७६ ।।

एक दिवस तलार वन जाई पाछउ वल्यु रे ।
सखी दीठां तिणि ते बेह अंगि लक्षणवली सविभरयांरे ।। २७७ ।।

लेईय ताम तलार राउ जसोमति भेटीउरे ।
सखी चली तेहवां देखि राजा हरषि व्यापीउरे ।। २७८ ।।

भाख्यां तेहनि ताम तु ऊछेर माहरां रे ।
होसि रभवा काजि हावली एहनां पीलकारे ।। २७९ ।।

सखी बोल्यु महा पसाउ तिणि दोइ पंजरि घातीयां रे ।
सखी लेई वेगि तलार निज मन्दिर वली आवियां रे ।। २८० ।।

सखी कण चणतां जल पान एक दिवस सुखिनी गम्यु रे ।
सखी आव्यु ताम वसंत वन वन वृक्ष जमुरीया रे ।। २८१ ।।

कोइल करइ टहूक भमरा रुण झुण ध्वनि करि रे ।
सखी फूल्या केसू फूल सहकारे माजिर घणी रे ।। २८२ ।।

नाम जसोमति राउ राणी सुंवली वनि गउरे ।
सखी सांभलि तेह तलार ततक्षण मन भणी सांचरचारे ।। २८३ ।।

भह्मनि लेईय साथि पंजिर खांचला वनि गउ रे ।
सखी आव्यु ते वन माहि जिहां राजानां घर अच्छि रे ।। २८४ ।।
सात खणा रे आवास राणी सुं नरपति रह्या रे ।
सखी तेह आगलि पटसाल वस्त्र तणउ गुडउ कीउ रे ।। २८५ ।।
सखी पंजर तिणि चल गाडि वन जोवा मणी सामह्यु रे ।
सखी दीठउ तिणि असोक हूकडलु सुरतर समुरे ।। २८६ ।।
तेह तलि मुनिवर राउ ध्यान धरी आसण कीउंरे ।
सखी पंच महाव्रत धार, पंच सुमतिहिं विभूषीउरे ।। २८७ ।।

देषी तेह तलार मनमाहि कोपि परजल्यु रे।
सखी ते कारवा उपाय प्रतिषणु चितह चीतविरे ॥ २८८ ॥
ए नागु निरलज राउ राणी रमतां वनिरे।
देखी अति घणु कोप करसि मुझ उपरि वलीरे ॥ २८९ ॥
सीघु तेणि उपाय मुनिवर मन थी काढिवारे।
सखी कुडी पूछउं बात कहिसि ते नवि मानिवु रे ॥२९०॥
ईम चीतवी तलार कुंडि मुनिवर पगि पड्युरे।
सखी बिठउ आगिल जाइ मुनिवर ध्यानज मूकीउरे ॥२९१॥
पूछि ताम तलार कहु स्वामी सु चीतव्यु रे।
सखी बोलि मुनिवर राउ दुष्टपणाउं तिमु जाणतुरे ॥ २९२ ॥
काया जीव विचार जू जू भाविजे अच्छिरे।
सखी चीत्यु ते वली वेद जिम जिम करी जू जूयां अस्थि रे ॥ २९३ ॥
काया भितर स्वभावि जीव स्वभाविहि जूउरे।
सखी करमि बंध्यु जीव किम बांभि किम छूटीइरे ॥२९४॥
वलतु कहि न लार सुणि मुनिवर कुलि भोलव्यु रे।
सखी कायानि जीव एक मम जाणे तु जूजूयां रे ॥ २९५ ॥
चोर एक मिलेवि नादिमाहि मइ घालीउरे।
सखी ते बीडी वली लाख जीव नीसाह जोईइ रे ॥ २९६ ॥
मुंउ माहि चोर जीवन दीठउ नीसर्युरे।
सखी इम जाणो भेद एक ते काया ते जीवड तरे ॥ २९७ ॥
बोलि मुनिवर ताम सांभलि तलवरइ मनही रे।
पुरुष एक संख हाथि नादि माहि वली घातिउरे ॥ २९८ ॥
सखी बीडी ते वली लाधि संखनाद माहि कीउ रे।
सखी सांभल्यु बाहिर लोक जोउ ते कांइ न पेखीउंरे ॥ २९९ ॥
तिम जाणो ए भेद काय जीव वेजूजूयां रे।
सखी बोल्यु वली तलार सुणि मुनिवर तु बीसर्युरे ॥ ३०० ॥
सखी चोर एक मिलेवि घटि घाती नइ तोलीउरे।
तेय हणी करी ताम वली तोलि घटित इम कीउरे ॥ ३०१ ॥

जे तु जीव समेत जीव रहित ते तुजहुउरे।
सखी तिणि कारणि तुं जाणि काया जीवन जूजूयां रे ।। ३०२ ।।

बोलि मुनिवर राउ सुणि न तलारजेह कहुं रे।
सखी आणी एक निबंध ते पुण पवनि पूरीयिया तो ।। ३०३ ।।

स्युघट धरी तेह ऊनारीनि जोईउं रे।
सखी जे तो पूरी वाउ, वाउरहित ते तो हुई रे ।। ३०४ ।।

तिणि कारणि तुं जाणि कायानि जीव जूजूयां रे।
सखी बोलि ताम तलार सुणि मुनिवर डाहुनही रे ।। ३०५ ।।

चोर एक वन माहि लेईनि तिल तिल षंडीउरे।
सखी जोउं तह शरीर जीवक हीनवि पेषीउरे ।। ३०६ ।।

इणि भेदि तुं जाणि जीव काया न बि जूजूयां रे।
सखी मुनिवर पभणि ताम सांभलि भद्र जेहूं कहूं रे ।। ३०७ ।।

लेई अरणी काठ तिलपाड़ नाह्नी षंडीउरे।
सखी जोई आगनि मझार लोक सवहू वसतु कहिरे ।। ३०८ ।।

नवि दीसि जोवंत तिम काया माहि जीवडउरे।
सखी नवि दीसि जोवंत तिम जणो बहु जूजूयां रे ।। ३०९ ।।

बोलि ताम तलार सुणि स्वामी निरू तरहूउरे।
सखी देउ आदेश ज नाथ त्रिउं करुं तुझ तणुं रे ।। ३१० ।।

बोलि मुनिवर राउ सुणिन वत्स तुझनि कहुंरे।
सखी करिन करिन जिनधर्मी हिंसा रहीत सोहामणुं रे ।। ३११ ।।

जंपि तलवर स्वामि धर्माधर्म मझ फल कहु रे।
सखी जिम हुं जाणुं बेह जे रूडउं ते आचरुं रे ।। ३१२ ।।

बोलि योग निरिंद अति रूडउंसि पूछिउंरे।
सखी नारी बहु गुणवंतकुल लक्षण रूपि भलीरे ।। ३१३ ।।

सात भूमि जे गेह राज रिधि मोटिम घणी रे।
सखी पुत्र पौत्र संताव विनय विवेकादिक सहूरे ।। ३१४ ।।

हाथी घोड़ा जेह रतन जाल वली जे अथि रे।
सखी जिनधर्म्म तणुं फल ए जाणि न जे कहुं अथि रे ॥ ३१५ ॥
पाप तणि परमाणि बहू बोली वली वढ कणी रे।
सखी काली अनि कुहाडि नीचे लख्यण कामनी रे॥ ३१६ ॥
कुपिता जुच्छित गात्र निरखर माइ बांधव वली रे।
सखी निरधन काणा खंज रोग रास करी आकुला रे ॥ ३१७ ॥
जे जे दुखद जाणि ते ते फल पापह तणु रे।
केतु कहुं विचार कहितां पार न पामीइ रे ॥ ३१८ ॥
पंचाणुव्रत जाणि च्यार जे सख्यावृत कह्यां रे।
सखी तीन अथि गुणव्रत ए बारि व्रत उचरे रे ॥ ३१९ ॥
समकित साधुं पालि दयाधर्म वली जे अथि रे।
सखी सुणी सहू बोलि तलार हिंसा रहित ए पालिसुं रे ॥ ३२० ॥
हिंसाकुल व्रत जाणि किम करी ते छांडीइ रे।
सखी बोलि मुनिवर राउ सुणिन वरस जे हुं कहुं रे ॥ ३२१ ॥
हिंसा तणि प्रभावि कुल धम्मइ वली घणु रतां रे।
सखी कूकड युगलुं जाणि जाणि परि दुःख बहु सह्यां रे ॥ ३२२ ॥
वणि पंडित पूछित तार कहु स्वामी ते किम हूयां रे।
सखी कीणी परिभम्यां संसार कहि मुनिवर सहू सांभलि रे
॥ ३२३ ॥
जेह जसोधर राउ ऊजेणी नयरी हुउ रे।
चन्द्रमती तिसु मात पीठमि जीव अणावीउ रे ॥ ३२४ ॥
यसोमति केरि पाटि देवी मंडपि ते लाउ रे।
सखी हणीउ ताणइ राउ माइ आदेशि सवि कारे ॥ ३२५ ॥
मार्‌यां राणी बेह घरि तेबी मोदिक दीयां रे।
सखी विषह तणि रे विनाण मरीअनि तिहां उपनां रे ॥ ३२६ ॥
पहिलि भवि ते स्वान मोर बेहू ते उपनां रे।
सखी बीजि भवि ते बेह सेहलु निविसह रहूया रे ॥ ३२७ ॥

सखी [illegible] ते बेहू [illegible] हुआ रे।
सखी चुथि भवि वली तेह छालु छाली दोइ हुया रे ॥ ३२८ ॥

भिसु छालु बेह जिणी परि दुःख अति सह्या रे।
सखी तु पुण जाणि तेह परिसघली वली जिम मूयां रे ॥ ३२९ ॥

तिहां थका ए बेव कूकड युगलु ऊपनां रे।
सखी पंजरि घाती बेह लिए वन माहि आणीयां रे ॥ ३३० ॥

बोलि ताम तलार कंपतु मुनिवर प्रति रे।
सखी ए सहू आपणि डाल कीधु निकरा बीउ रे ॥ ३३१ ॥

राति भोजन नीम तिन्न वार जल गालिसु रे।
सखी समकित सहित विशेष तिणि तलवर पगि पडिलीउं रे ॥ ३३२ ॥

नीय भव समरी ताम कूकड युगलि पुण लीउं रे।
सखी तीणी दिसी नमी मुनिराउ समकित स्युं जे व्रत कह्यां रे ॥ ३३३ ॥

पामीय धर्म विचार हरषि युगलु वासीउं रे।
सखी सीजी राजा ताम सबद वेध करी दोइ हण्यां रे ॥ ३३४ ॥

कुंभावलि उरि बेह मरी तिहां थी उपनां रे।
सखी राजा यशोमतितात धर्म पसाइ पामीउ रे ॥ ३३५ ॥

उयरि वसंतां ताम मातां मिडोहलूहुउ रे।
अभय दाननी आणि देश नयर राजा दीइ रे ॥ ३३६ ॥

वस्तु

ताम नर वयर नयर उजेण पूरे मासे।
जनमीयां माइ बाप वली नाम दीधां।
अभयरुच अभयमती कला कुशल बालंत कीधां।
कन्या पंच विवाहीउ बाध्यु मुभ राउ देषि।
कन्या रूप कंशक दिइ जगत रहावी रेय ॥ ३३७ ॥

अथ ढाल नवमी

विणजारा रे एक दिवस वनमाहि राजा पारधि सांचरयु वणजारा रे।
। वि।

वागुरीयां सइं पांच पाइक साथि ते लिया ।। वि० । ३३८ ।।
वृक्ष असोक ज हेउ मुनिवर दीठउ ध्यान रह्या । वि० ।
देषी मुनिवर राउ राजा कोपि परजल्यु विण ।। वि० । ३३९ ।।
पारिघनि फली आज मुनिदर्शन थां होइ सइ । वि० ।
मुंक्या राइ स्वान पांचसइ मूठि मूकीया ।। वि० ।। ३४० ।।
ते सबला वली स्वान मुनिवर पाषलि परिवरया । वि० ।
मस्तक भूमिप्र छाडि जाणे व्रत लेबा रह्या ।। वि० ।। ३४१ ।।
कल्याण मित्र ज नाम विणजारु देशाउरी । वि० ।
राजतणु जे मित्र वालद लेई आवीउ ।। वि० वि० ।। ३४२ ।।
मुनिवर जाण्यु तेण वन माहि ध्यानि रह्य । वि० ।
वंदेवा मुनिराउ वालिद छांडी नीसरयु ।। वि० ।। ३४३ ।।
दीठउ तेण नरिंद भेट घणी लेई आवीउ । वि० ।
भेटिउ तेणि नरिंद राउ साहांमां पगलां भरि ।। वि० ।। ३४४ ।।
पूछी क्षेम समाधि पान मान नरपति दीइए । वि० ।
राइ प्रति ते मित्र वचन मनोहर उचरिए ।। वि० ।। ३४५ ।।
आयु यसोमति राउ मुनिवर वंदण कारणि । वि० ।
रूठउ बोलि राउ सांभिल मित्र जेहूं कहुं ।। वि० ।। ३४६ ।।
स्नान रहित अपवित्र नग्न अमंगल जाण जे । वि० ।
निग्रह करवा जोग्य हुं भूमिपाले वंदीउं ।। वि० ।। ३४७ ।।
ते मुझ एह प्रणामतु वांछित करावित्रा । वि० ।
जु इम बीजउ कोइ कहि तुमि मारिबु ।। वि० ।। ३४८ ।।
ए सुं राउ वचनसांभली तेमनि कम कम्पु । वि० ।
विमास्यु मनि साच राजानि प्रतिबोधिवु ।। वि० ।। ३४९ ।।

बोलि किल्याण मित्र सांभली राजा हुं कहुं । वि० ।
स्नानि पवित्र न होइ जे आचारि बाहिरा ।। वि० ।। ३५० ।।
मंत्र जाप बलि होम दिनकर वायु काल घणोइं । वि० ।
माटी निवली बार पविश्र पत्रण घणा मेद छि ।। वि० ।। ३५१ ।।
बंभण एक सुजाण वेद स्मृत सहुइ भण्यु । वि० ।
वाटिते जल हीण असु च पण लगि ते मूउ ।। वि० ।। ३५२ ।।
कहु न तम्हे भूपाल कवण गति ते दिज गउ । वि० ।
जु गउ नरकं ज तेह वेद भण्यु तेनि फलथउ ।। वि० ।। ३५३ ।।
जु गउ तेह ज स्वर्गि जातह निफल जल सीचियउ । वि० ।
मुनिवर सदा पवित्र मंगल परम ए जाण जे ।। वि० ।। ३५४ ।।
नग्न अछि महादेव परमहंस नाग्नु अतिथ । वि० ।
बोल्युं सघले धर्म नग्न घणुं दोहिलुं अतिथ ।। वि० ।। ३५५ ।।
स्त्रीय परीसह जेह तेह भागा भूला भमि । वि० ।
सील रहित नरनारि ते पहिर्या नागा सही ।। वि० ।। ३५६ ।।
सील सहित नरनारि ते नागा पहिर्या सही । वि० ।
मंगलमि जे जेह शकन ते मुनिवर जाण जे ।। वि० ।। ३५७ ।।
श्रवण तुरंगम राउ मोर कुंजर बृषभि सही । वि० ।
जातां वलतां एह परम सकुन तुं जाणजे ।। वि० ।। ३५८ ।।
तिजे बोल्यु बोल निग्रह मो करिवा तणु । वि० ।
बालक ना जिसु बोल मुनिवर कुण हणी सणकि ।। वि० ।। ३५९ ।।
पाणिउ चामि मेर सायर बांहि जे तरिवि । वि० ।
मुनिवर कांई केण कर यावली वालि नही ।। वि० ।। ३६० ।।
ओलि कहिउं भूपहुं भूमिपाले प्रणमीउं । वि० ।
देश कलिंगह राउ नाम सुदत्त वखाणीइ ।। वि० ।। ३६१ ।।
योवन पाम्यु चोर तलवरि राउ आगिल धर्यु । वि० ।
राइ पूछयां विप्र अपराध एह घर तु कहु ।। वि० ।। ३६२ ।।
तेहे बोल्युं ताम चाचरिचु खंड कीजीइ । वि० ।
तेह सुणी नि भूप बैरागि राज बेटा देइवि ।। वि० ।। ३६३ ।।

लीधी दीक्षा जेह ते ए वन माहि आवीउ । वि० ।
काहि जसोमति राउ चालु न ते जोई इ ।। वि० ।। ३६४ ।।
किल्याण मित्र नि राउ साथि मुनिवर प्रणमीह । वि० ।
ततक्षण पूरियोगइ धर्मवृद्धि विहुं जण दीइ ।। वि० ।। ३६५ ।।
मुनिवर सरखुं चित्त सत्तु मित्र राइ पेषीउं । वि० ।
राउ थउ वैराग धर्म गेह ए मुनि अछि ।। वि० ।। ३६६ ।।
एह तणाय शरीर जेमि विनाश विमासीउं । वि० ।
तेह छेदे वा पाप शिर मंडी पूजा करूं ।। वि० ।। ३६७ ।।
तुहुं छूटउं आज अवर उपाय न को अछि । वि० ।
मूक्या ते सवि स्वान राउ दयारसि परिवर्‍यु ।। वि० ।। ३६८ ।।
मुनिवर राउ नुं चित्त ज्ञान अवधि जाणीउ । वि० ।
मुनिवर बोलि ताम राउ विमासण मन करूं ।। वि० ।। ३६९ ।।
आतम हित्या पाप शिरछेदतां लागसि । वि० ।
राउ सुणी मुनि वाणि मनि आचार्यि पूरीउ ।। वि० ।। ३७० ।।
मित्र तणुं मुख जोइ शिर धूणी बोलि वली । वि० ।
किम जाणी मुझ वात जे मइ मन माहि चींतवी ।। वि० ।। ३७१ ।।
मित्र ज बोलि ताम ए मुनिवर ज्ञानी अछि । वि० ।
माइ ताइ तुझ वात पूछि भवंतर प्रणमीनि ।। वि० ।। ३७२ ।।
हरष्यु मनि भूपाल कर जोडी मुनि वीनवि । वि० ।
माजु आजीता तमाइ सहित ते किहां गयां ।। वि० ।। ३७३ ।।
आजु जसोधर राउ पलित केश शिर पेषीउ । वि० ।
मनि उपनु वैराग राज ताम तोनि दीउं ।। वि० ।। ३७४ ।।
लेई दीक्षा तेण अणसण पांचि निरिण कीया । वि० ।
पहुतउ माहेंद्र स्वर्गि देवी सुं लीला करि ।। वि० ।। ३७५ ।।
जे वली तोरी मात विश देई तिणी प्रीय हण्यु । वि० ।
पामीय तीणीय कुष्ट मरीय नरकि वली ते गई ।। वि० ।। ३७६ ।।
जे आजी अनि तात चंद्रमती यशोधरा बहू । वि० ।
देवीय आगइल तेह पीठी कूकड मारीउ ।। वि० ।। ३७७ ।।

विश देई तुझ माइ विषह प्रभावि मारीयां । वि० ।
मरीय करीतें बेहु स्वान मोर होई आवीया ।। वि० ।। ३७८ ।।
सेहलउ निवली सांप सिसुमार रोही हूया । वि० ।
छाग्गु छाली बेहु छालु भिसु वली हूया ।। वि० ।। ३७९ ।।
कूकड युगलु अेह शब्द वेध करीति हणयु रे । वि० ।
कुशमावली उरि तेह बेटउ बेटी तुझ हूयां ।। वि० ।। ३८० ।।
हवडा ते तुझ गेह राजरिद्धि सुख भोगवि । वि० ।
राजा दूह विण चित्त अति आणि लोटि रडि ।। वि० ।। ३८१ ।।
एकह जीवह पाप एवडां दुख एहे सह्यां । वि० ।
इणि राइय अनेक मारया जीवकेथु हुसिह ।। वि० ।। ३८२ ।।
बोलि किल्याण मित्र रोइ राजन पामीइ । वि० ।
करि नउं जिनवर सार हिंसा पाप छांडी करी ।। वि० ।। ३८३ ।।
राउ ज बोलि मित्र मुनिवरनि तुह्मे वीनवु । वि० ।
जिम दिइ दीक्षा वेगि काजन संसारि अर्थि ।। वि० वि० ।। ३८४ ।।
वैराग विशिष्यु राउ मुनिवर पगि लागी रह्यु । वि० ।
कुइ राजा घरि वात दीक्षा राउ लेवा तणी ।। वि० ।। ३८५ ।।
मूकी अथ सिणगार राजलोक वनि आवीउं । वि० ।
बहिन भाई अम्हो बेहु पालिखविसी वनि गयां ।। वि० ।। ३८६ ।।
दीठउ ताम नरिंद वैराग्य मनि साहमउ रह्यु । वि ।
पूछि सघली नारि वैराग्य कारण प्रभ कहु ।। वि० ।। ३८७ ।।
राउ भणि सुणु नारि जे जे आपुण पेषीउं । वि० ।
बेटा बेटी जन्म अजी तात नासाभल्या ।। वि० ।। ३८८ ।।
अह्मे भव सांभल्या जाम ताम बेहू मूरछी पडया । वि० ।।
माइ करिय विलाप हाहाकार सहू करिति ।। वि० ।। ३८९ ।।
सीतल करि उपचार सजन लोके अह्मे आगव्यां । वि० ।
पूछि ताम विचार कुणि कारणि तह्मे मूरछयां ।। वि० ।। ३९० ।।
जे जे भोगव्यां दुःख ते ते सघलां वीनव्यां । वि० ।
राउ कहि सुणि मित्र दीक्षा ले उतावली ।। वि० ।। ३९१ ।।

पुत्र देउ तह्मो राज आज असुरज कां करू । वि० ।
राज सुणी ब्रह्म सात तात ज वेगइ बीनवु ।। वि० ।। ३६२ ।।
सुणीय ब्रह्मारा जन्म वैराग्य तह्मनि उपनु । वि० ।
ते आह्म किम ल्यु राज काज करे सु आपणु ।। वि० ।। ३६३ ।।
मित्र ज बोलि ताम मारग ए एसु अत्थि । वि० ।
देई बेटा राज बाप दीक्षा पहिली लिइ ।। वि० ।। ३६४ ।।
चिउ तह्मो एह राज बाप दीक्षा लेवा देउ । वि० ।
अह्मो विमास्यु चित्त पिता पहिलु दीक्षा लेउ ।। वि. ।। ३६५ ।।
कालि आह्म वली तेह दीक्षा लेस्यु आर्हती । वि. ।
अह्म नइ देई राज तात माइ दीक्षा लेई ।। वि. ।। ३६६ ।।
कल्याण मित्र थरी आदि राज पांचसिअस लीउं । वि. ।
नारी सहस्रज एक कुशमावलि सु दीक्षीयां ।। वि. ।। ३६७ ।।
घणा महोत्सव साथि नयर माहि अह्मो गयां । वि. ।
पांच दिवस रहि राज अवर माइ सुत तेडीउ ।। वि. ।। ३६८ ।।
तेहनि देई राज गुरु पासि तव हुइ गयां । वि. ।
मागी दीक्षा सार सुरु राजा वलतु भणिवि ।। वि. ।। ३६९ ।।
वच्छ अच्छ तम्हे बाल जिन दीक्षा अति दोहिली । वि. ।
सम्यक व्रत ल्यु आज महाव्रत पाछि लेउ ।। वि. ।। ४०० ।।
अह्मो विमास्यु ताम गुरु वाणी किम लोपीइ । वि. ।
लहुडी दीक्षा वेगि गुरु आदेसि अह्मो लेई ।। वि. ।। ४०१ ।।
तेहज मुनिवर राउ विहरंतु महीयल फिरि । वि. ।
आज जवडिति दीह ते गुरु तुझ वनि आवीउ ।। वि. ।। ४०२ ।।
आठिम दिवस ज आज उपवासी सघलो यती । वि. ।
अह्मो जाई गुरु पास उपवास विहुं जणे मागीउ ।। वि. ।। ४०३ ।।
गुरु जी बोलि ताम उपवास तह्मनि नवि घटि । वि. ।
गुरु आदेस ज पामि आहार लेवा पुण भमि ।। वि. ।। ४०४ ।।
चाल्यां मारगि जाम ताम तलारे भेटीयां । वि. ।
अह्मनि लई तेह तुझ कन्हिए आणीयो ।। वि. ।। ४०५ ।।

हिंसा तणउ विचार जेहि तेमि तुझ कह्यु वि । वि. ।
जे तुझ भावि विचार तें तुं अह्मानि नृप करेवि ॥ वि. ॥ ४०४ ॥
सांभली [illegible] मुनि [illegible]वि । वि. ।
छांडीय भीषण रूप अस्याणुं लेई आवीइ वि ॥ वि. ॥ ४०५ ॥
देई प्रदक्षण ताम पगि लागी तिसु धीनवि । वि. ।
कह्या सुणु तह्मो बात मति घणी हिंसामि करी वि ॥ वि. ४०६ ॥
ते छूटे का पाप जिनवर दीक्षा मुझ देउ वि । वि. ।
क्षुल्लक बोलि ताम देवीय दीक्षा नवि हुइ वि ॥ वि. ॥ ४०७ ।

वस्तु

कहिय षलिक कटिय षलिक सुणि न तुं देवि
जिहां जिहां जीवां नरक गइ जेह
जेह वली तरी वासु जे जे दिवस सुख भोगवि
देवि विमान देवी सुं आसइ तेह तेह दीक्षा नवि हुई
संभलि देवि विचार व्रत सुं समकित पाल जे जिम तिरीइ संसार ॥ ४०८ ॥

अथ ढाल- दशमी

जे धरइ ए च्यार कषाइ रौद्र ध्यानि वली वींटीयाए ।
जे दहिए वनहनि गाम हिंसा कमि आगला ए ॥ ४०९ ॥
जे वली ए गुरु हनि स्वाम वंचक पापइ पूरीया ए ।
लेश्याए कृष्णाज तांह जे परनारी लंपटूये ॥ ४१० ॥
ते बहूए पाप पसाइ नरया वासइ उपजि ए ।
छेदनइं ए भेदन तेह ताडन हंसन बहु सहिए ॥ ४११ ॥
लोहमिए ताती नारि तेस्युं आलिंगन कण्ए ।
तातुं ए करीयक थीर तरस्यां श्यांते पाईइए ॥ ४१२ ॥
छेदीइए तास सरीर मूर्च्छा सोइव बाडीइए ।
इणि परिए दुःख अनंत नरयावासि भोगविए ॥ ४१३ ॥

ते नरां ए जिनवर दीख दुख घणां थी नवि हुइए।
आर्त्तु ए ध्यान करंति नील लेस्याए चीटीया ए ।। ४१४ ।।
रस तणा ए भेद करंति कुडि मापि बुहुर कuए।
कुडीए साखि वेयंति थापणि मोसु जे करिए ।। ४१५ ।।
धामसिए पजेहु अहु निशि प्रतिघणु जे पुलइ।
जेहुनिए नवकार न मंत्र देवपूजावनी नवि रचिउ ।। ४१६ ।।
अति घणा ए पाप पसाउ तिर्यच गति ते नर लहिए।
छेदनए अंकन दोइ ताडन पाडन जे सहिए ।। ४१७ ।।
भूखिए तसइ सेहु ताविज ताप न भोगवि ए।
अति घणउं ए भारा रोपमाइ वहिन जाणि नहीए ।। ४१८ ।
ते नरां ए दीक्षा देवि तिर्यंच किम दीजीइए।
लेस्या ए पदम जे जेह धर्म ध्यानि जे वार्सीया ए ।। ४१९ ।।
पूजा ए जिनवर जेह पात्र दान ते अति दिइए।
जपिए मंत्र नवकार पर उपकारज जे करिए ।। ४२० ।।
साचीए बोलि वाणि कुडीय सीख ते नवि भणिए।
ते नर ए जाइ स्वर्गि देवी वृंदे शेवीइ ए ।। ४२१ ।।
बिठाए फरइ विमान मानस सुख अति भोगविए।
यौवन ए निश्चल तांह जरा न आवि ढूकडी ए ।। ४२२ ।।
अति सुखए केरडी खाणि सुखसागर भीलि घणउं ए।
ते नरां ए होइ न दीप भोगासक्त पणे थकी ए ।। ४२३ ।।
मानसी ए जाति लहेवि अंगोपांगि पूरीया ए।
ब्राह्मण ए क्षत्रय जाति जे वली वैश्यह कुल तिलाए ।। ४२४ ।।
तेह नरां ए होइ नमाइ दीक्षा जैनेश्वर तणी ए।
हवि लु ए समकित पाल टालि मिथ्यात जे पाछलउं ए ।। ४२५ ।।
अरिहंत ए माने देवि गुरु निर्ग्रंथ वखाणीइ ए।
जे जिन ए बोल्यु धर्म दश लक्षण ते जाणीइ ए ।। ४२६ ।।
जे व्रत ए बारह देवि ते ते पाले निर्मलां ए।
पालजे ए साचि चित्त मूलगुंण वली आठ छिए ।। ४२७ ।।

रातिए भोजन वारि जीव तणी अयगणा करे ए ।
सांभली ए देवि विचार पाय पडी ते सहूलीउं ए ।। ४२८ ।।

सोवन ए जल भृंगार पगिलागीनि वीनविए ।
मतवतीए विचसार लेउ तह्मो गुरु दक्षण भणीए ।। ४२९ ।।

बोलिए क्षुल्लिक तामहुं विद्याइगुं करूं ए ।
देवी ए लोभाभंग जाणुं तं तानि सहु करयु ए ।। ४३० ।।

बोली ए देवी ताम लोभ रहित तव देयीउं ए ।
सांभलु ए राउ सहित लोक सहू योगी महित ए ।। ४३१ ।।

पालुए धर्म अहिंस हिंस नाम म लेयस्युं ए ।
ये कोए हिंसा नाम देखि ता हरि बली लेयसिए ।। ४३२ ।।

घोषणीं ए मरकी मांद देश शघलि वलीं थाइसिए ।
मूंकिवाए सघला जीव अभयदान वरतावीउं ए ।। ४३३ ।।

प्रणामीय ए क्षुलक पाउ देवी वेगि अदृष्ट थई ए ।
ते तलिए मारदत्त राउ प्रणामीय पाय क्षुलक तणी ए ।। ४३४ ।।

मागिए दीक्षा वेगि अंगि वैरागिहिं वासीउए ।
देउ प्रभ ए दीक्षा आज संसार सागर जिम तरिए ।। ४३५ ।।

बोलिए षिलक ताम सुणि भूपति येहूं कहूंए ।
अह्मो नहीए देवा जोग्य दीक्षा श्री जिनवर तणीए ।। ४३६ ।।

जे मरिग ए अह्म गुरु राउ ते तुझ दीक्षा देइसिए ।
सांभलीए ताम नरिंद चीतवि मन माहि आपणाए ।। ४३७ ।।

हुं नृप ए नृपतणु राउ लागउ देवीनय कमले ।
देवी ए क्षुलक पाउ पणमि भगति करी घणीए ।। ४३८ ।।

ते हूए देग विवेग गुरु कह्नि लेई जाउवी ए ।
श्री जिन ए धर्म विशेष हू उन होसिएह समु ए ।। ४३९ ।।

ते तलिए मुनिवर राउ षलिक चरित ज जाणीउं ए ।
आवीउ ए संघ समेत देवी मनि उतावलउए ।। ४४० ।।

खुलिक ए सहित ते राउ श्री गुरु केरा पगि पड्यु ए ।
खुलिक ए कहि गुरु स्वामि दीक्षा देउ ताह्म राउनिए ।। ४४१ ।।
भूपतीए आठ समेत मारदत्त दीक्षा लेइए ।
राणीए सई तिहां आठ लीधी दीक्षा जैननीए ।। ४४२ ।।
क्षलक ए खुडीय समेत प्रणमीय पायज गुरु तणा ए ।
मांगीए दीक्षा सार गुरु तूठउ तिया दीइ ए ।। ४४३ ।।
श्री गुरु ए विहार करंति पुहुतां भवीयां बोधिवा ए ।
ते बहूए तीणि ठामि लेई दीक्षा तव रह्या ए ।। ४४४ ।।
अभयरुचीए मुनिवर राइ अभयमती श्राशा हुई ए ।
ते बेहूए अणसए लेवि पाष दीहाडा पालीउ ए ।। ४४५ ।।
सातमइए स्वर्ग पहूत इंद्र प्रतींद्र ज ते हूया ए ।
देवीए वृंदज माहि सार सौख्य अति भोगविए ।। ४४६ ।।
सुदत्त ए मुनिवर राउ सोलमइ स्वर्ग ज ते गउ ए ।
किल्याण ए मित्र ज आदि घरीय करी जे मुनि सोहू ए ।। ४४७ ।।
पुहुता ए तेहज स्वर्गि पुण्यमानि श्रा पार्यिणए ।
थोवीए सघले साम मिथ्यात हिंसा छांडी करीए ।। ४४८ ।।
पुहूता ए तेह सु ठाम कर्म मानि बली आगणिए ।
दयानिधिए एहज रास पढ़इ गुणि जे सांभलिए ।। ४४९ ।।
नवनिधिए मंदिर तास कामधेन तस आंगणिए ।
पापहूए तणउ विनाश धर्मतरूयर वाधि सदाए ।। ४५० ।।
कुबुधए केरडु नास बुधि रूडी सदा उपजइए ।
जांद्र ए सूरज मेघ महीधरूए ।। ४५१ ।।
तां रहुए एहज रास राउ यसोधर केरडु ए ।

तां रहूए एहज रास राउ यसोधर केरहु ए ॥ ४५२ ॥
गुणीयण ए जे नरनारि जेहू कवेसर रूयडा ए ।
सोधीए एह ज रास करीय सातु वली थापिचु ए ॥ ४५३ ॥
कातीए उजलि पाषि पाडिवा बुधवारि कीउए ।
सीतलूए नाथ प्रासादि गुढली नयर सोहामणुए ॥ ४५४ ॥
रिधिवृद्धि ए श्री पास पासाउ हो जो निति श्रीसंघह घरिए ।
श्री गुरु ए चरण पसाउ श्री सोमकीरति भण्यु ए ॥ ४५५ ॥

॥ इति श्री यशोधर रास समाप्त ॥

॥ संवत् १५८५ वर्षे ज्येष्ट सुदि १२ रवौ ॥

गुरुनामावली

मंगलाचरण —

नमस्कृत्य जिनाधीशान् सुरासुरनमस्कृतान् ।
वृषभादिवीरपर्यंतान् वक्ष्ये श्रीगुरुपद्धितम् ॥ १ ॥
नमामि शारदां देवीं विबुधानन्ददायिनीं ।
जिनेन्द्रवदनांभोज हंसिनीं परमेश्वरीम् ॥ २ ॥
चारित्रार्णवगंभीरान् नत्वा श्रीमुनिपुंगवान् ।
गुरुनामावली वक्ष्ये समासेन स्वशक्तितः ॥ ३ ॥

दूहा बंध

जिण चुवीसह पाय नमी, समरवि शारद माइ ।
काष्ठसंघगुणवर्णवुं, पणमवि गणहर पाइ ॥ ४ ॥
एक जीह[1] किम बोलीइ, कट्ठसंघ गुण सार ।
सुर गुर मुखि जे समु, ते नवि लाभि पार ॥ ५ ॥
चुरासी[2] गणहर हुया, आदि जिणंदह जोइ ।
तिणि अनुक्रमि वंदतां, वीर एपारह होइ ॥ ६ ॥
चुवीसह जिणवर तणे, गणहर पाय मुनिंदिश ।
सिर वालि ते जोयता, चौदिसि तेवन्न ॥ ७ ॥
वीर जिणंदह पट्टिपुण, बिठा गौतम स्वामि ।
नवनिधान घरि संपजि, पाप पणासि नामि ॥ ८ ॥
सौधम्मह मुनिवर हूउ, जंबू स्वामि वषाण ।
एतहुं सरसुं सुंपीऊं, रूपहुं केवल नाण ॥ ९ ॥

---

1. जीभ, जिह्वा

2. भगवान आदिनाथ के ८४ गणधर थे

चौदह पूरव जे धरि, दश पूरव ना जाण ।
बहु विहि रिधि भूसीया, को लहि तेह पमाण ।। १० ।।

अथ बोली

अहो श्रावको पुण्य प्रभाव को । निरमल चित्त करी, जिनवाणी मनिधरी सावचेत थाई, जिन भवनि जाई । श्रीकाष्ठासंघना जे, मुनिवर तेहनु अनुक्रम तेहनां गुण सांभलतां थकां, संसार समुद्र तारण परम महासुखना कारण इस जे गुरु सांभलु ।

अथ छंद पाधडी

श्री वीर माह अनुक्रमि जाण । मुनिवरनि तेजिजिमहू भाण ।।
सहू व्रत माहि जिम ब्रह्मचार । गिरवरह माहि जिम मेर सार ।। ११ ।।
चिंतामणि रयणह मज्झि जाण । सब नाण माहि केवलह नाण ।।
चिंतामणि रयणह मज्झि एक । आचार सवहूं सोहि विवेक ।। १२ ।।
ग्रह गणह मज्झि जिम चंद[1] सूर[2] । जल रासि माहि सायरह[3] पूर ।।
जिम देव सवह माहि ज इंद । महीयल माहि सोहि नरेंद ।। १३ ।।
पदवी सवहूं तिथयर जेम । तस उपम दीजि कहु केम ।।
भरहेसर जिम सवि चक्कयार । इमि काहु पुछसि वार-वार ।। १४ ।।
कप्पतरू[4] तरवरह चंग । तिम संघ सरोमणि कट्ठ संघ ।। १५ ।।

अथ दूहा बंध

संघ सरोमणि संघ ए, जोउ तेह विचार ।
नरह नरेंदे वंदीया, गछया गच्छ चीयार ।। १६ ।।

श्लोक— श्रीनंदीतटगच्छाख्यो, माथुरो वागडाभिधः
लाडवागड इत्येते गच्छाश्च विबुधैस्तुताः ।।१ ।।

---

1. चन्द्रमा
2. सूर्य
3. समुद्र
4. कल्पवृक्ष

तेषु गच्छेषु विख्यातः श्री नंदीतटसंज्ञकः ।
शीलसौभाग्यसंयुक्तो विद्या गुणगुणां निधिः ।। १७ ।।

दूहा बंध

गणहर मुनिजनवर्णतां, फरुमह एह विचार ।
अर्हद वल्लभसरिनु हणि गच्छ हुउ उवयार ।। १८ ।।

छंद पाधडी

तेह पट्टधर अछि एह । नामि पंचगुरु कहुं तेह ।।
श्री गंगसेन नामि पहाण । तेह नरनरिंद बहु दिइ माण ।। १९ ।।
श्री नागसेन नामि प्रसिद्ध । देवाहुवि जेहनी भगति किद्ध ।।
पंचमि पट्टि सिद्धांत सेव । अरणेंद्रि भावी किद्ध सेव ।। २० ।।
श्री गोपसेन मुनिराउ जाण । बोलंता वयण अमोघ वाणि ।।
सत्तमि पट्टि श्री गोपसेन । नीय भुजबलि जीतु मयण जेण ।।
दक्षरणह देश देशह मझारि । श्री नंदी तट पट्टणह सार ।। २१ ।।

दूहा

दक्षिण देश मझारि जु, नंदी तट पुर जाण ।
गोपसेन मुनिवर रहिनीय तेथि जिम भाण ।। २२ ।।
तेह मुनिवरनि रुयडा, पंचसइ वर सष्य ।
नीय बुधि प्रतिबोधीया, तेहनि दीधी दक्ष ।। २३ ।।
ते सष्य माहि रुयडा, मुनिवर च्यार प्रसिद्ध ।
रामसेन आदि करी, वाद केरि निजबुद्धि ।। २४ ।।
वाद करंता दिहु जु तु गुरु दीधु बोल ।
माहो माहिसुं सवु, तह्मो मूरषनिटोल ।। २५ ।।
वादी तु तह्मो आणीउ, विद्या बल घणुं चंग ।
देश च्यार प्रतिबूझवी, रवि तल राहावु रंग ।। २६ ।।
नरसिंहुर पुर आणी, देश मभि मेवाडि ।
ते मिथ्याति वाहीउं, नयी कहि निपाडि ।। २७ ।।

मागध देश जु जाणीइ, नगरी मथुरा सार।
लाड देश नामि अछि, तिहां मिथ्यात अपार॥ २८॥

अंद्ध ओटक

वाह्या सचिहींडि लोक पले। पडिला सवि दीसि भवह जले।
प्रतिबोध जु नीय बुधि बले। जस राघु तु रवि चवक तले॥ २९॥

दूहा

श्री गुरु वाणी संभली, विमासि नीय चित्त।
करसु आपुण एह जु, मही अछि इहां भांति॥ ३०॥
गुरुह चरण वंदी करी, चाल्या सघ चीयार[1]।
सु सु चेलाधि जु, लीधा एह विचार॥ ३१॥

अथ छंद

पणमविनीय गुरु चरणं सरणं, चित्तेव जिणवरं चित्ते।
श्री रामसेन मुणि वंदो, आयो नयरम्मि धरवि आणंदो॥ ३२॥
आणंदह धरवि ताम संपत्ता, वर नयरे नरसिंहपुरे।
सरवर वर छीर नीर झलोबई, तिहां बिठा मुनि घ्यान धरे॥ ३३॥
मासो उपवास तेण उचरीयो, धम्म धनुह वर गहन करे।
श्रीरामसेन मुनिवर सुमरतां, नासि पाउ ते विवह परे॥ १॥ ३४॥
तस नयर पुरंमि मझे, माहड नामेण नवसए सिट्ठी[3]।
सत्तह[3] पुत्त संयुत्तो, पुत्तह पुत्तं न लभये कहवि॥ २॥ ३५॥
पुत्तह चापुत्त कहवि, नवि लभि तव सेठी उदेग भयं।
बहुधर उवेस तथ संपत्तो, जत्थ गुवंदि मुणिंद मयं॥ ३६॥
चींतीय नीय काज लाज गति, आणी अभलि विठउ लगग पयं।
श्रीरामसेन तव ज्ञान महाबलि मनि आठवीया नाम लीयं॥ ॥ ३७॥
तह वयण सुणवि सेट्ठी, पुच्छि कज्जं च कहवि मुणिराउ।

---

१. चार   २. श्रेष्टि
३. सात

दुतूय दुख पुत्त वालपडीयं, वीय कूप नथि संदोहो ।। ३ ।। ३८ ।।
संदेह विणासण जब ते दिठुउ, तव लोकह् आचंभ भयं ।
बे कर जोडवि अति बहु भक्ति, मुनि आदेशज सरसिलयं ।। ३९ ।।
बोलि तह् सेठ्ठी कहि तो कज्जं, भो मंदिर छि दिव्य घणां ।
श्री रामसेन मुनिवर सुपयंपि, करु धर्म्म श्री जिनह् तणां ।। ४ ।। ४० ।।
मिथ्यात दूर दवडीय थापीश्र जिन धम्म नयर मझम्मि ।
चुसठसि कुल रोपवि पतट्ठीउ देव बहुरुव ।। ५ ।। ४१ ।।
बहुरुव पतट्ठीय जिनवर भवने तव मुनिवर चलंति क्षणां ।।
पूछि तव सेट्ठी सीस पय नामी कवण कज्ज चलंति तणं ।। ४२ ।।
हविरेण सुष्ट कारण अति संभलि पडसि तुय नयरे पवरे ।
श्रीरामसेन मुनिवर इम बोलि जाउ उत्तर थाडंपुरे ।। ४ ।। ४३ ।।
नरसिंहपुर नयर तजीय ते तिथ पहूता ।
गामह् नामि नाम ख्याति वाति रचितलि सुपवित्ता ।। ४४ ।।
सत्तावीसह् गोत्र तेण थिरु करि थप्पीय ।
नरसिंहराग गुण ताम जिण धम्मह् अप्पीय ।। ४५ ।।
श्रीशांति नाथ सुपसाउ करि श्रीरामसेन उवएस धरि ।
ब्रमंडलिदणीयर तपि । तां रिधि वृद्धि श्रावयह् घरे ।। ५ ।। ४६ ।।

हवि बोली

हवि तेह् श्रीरामसेन देव सगार गुण समुद्र नि पार पाम वा कुण समरथ जिणि श्री रामसेनि जिन आपणा ध्याननि बलि करी चित्त संदेह भांजो प्रत्यक्ष दृष्टांत देखाली । चुसठि सि कुलि नरसिंहपुर पाटण । तेह् तणा संपूर्ण मिथ्यात्व कुलि थका प्रतिबोधी श्रावक नु धर्म लेवाडयु अनि श्रीरामसेनि अलो ज्ञाननिबलि मूल दुष्ट हली जाणी । बलरवादि समस्त श्रावक अनगारी । नरसिंह् पुरा सत्तावीस गोत्र संयुक्त न्यात थापी । तेह् गुरुना अनंत गुण बोलतां पार न पामीइ ।।

हवि दूहा

रामसेन मुनि तिहां थका चित्रकोट संपत्त ।
देश विदेशे जाणीइ श्री गुरु केरी वत्त ॥ १ ॥ ४७ ॥

श्री रामसेन मुनिवर तणि नेमिसेन मुनि तास ।
एक भणंता पडिकमामि धपता छमास ॥ २ ॥ ४८ ॥

गुरु बोलि सख्यह प्रति, संभलि तुं मुझ वात ।
तप करी काया पेट वे मूकी भण्ण वात ॥ ३ ॥ ४९ ॥

नव गुरु वाणी संभली, मनि हूउ उच्चाट ।
गुरु वांदीनि नीसर्‌यु, मूकी भणवा वात ॥ ४ ॥ ५० ॥

जाउर नाम प्रसिध जे, तेहना निपमा खोह ।
तिहा आवी मुनिवर रह्या, मूकी सघला मोह ॥ ५ ॥ ५१ ॥

अन्न उदक सवि परिहरी, विहु निश्चरी ध्यान ।
जु विद्या दिइ सारदा, तुहं मूकुं मान ॥ ६ ॥ ५२ ॥

सात दिवस इणी परिगया, तप करतां मुनिराउ ।
काया लागी सूकवा, तुहि न मूकि भाउ ॥ ७ ॥ ५३ ॥

एक दिवस पद्मावती, मुनि उपरि आयंति ।
तव सरसति साहामी मली, कैलासह आवंति ॥ ८ ॥ ५४ ॥

पद्मावती सरसति, प्रति वयणज बोलि ताम ।
ए मुनि काया पेटविरक्तह सुंदरि कुण काम ॥ ९ ॥ ५५ ॥

पद्मावती भनि सरसती ते विहु तिहां संपत्त ।
ऊभी रही बोलावीउ मुनिवर माहाजमरत्ति ॥ १० ॥ ५६ ॥

तव मुनिवर सरसुं भणि काइ करि तुं कट्ठ ।
पद्मावती भनि सरसती महीं मे तुझनि तुट्ठ ॥ ११ ॥ ५७ ॥

सरसति तूठी आपीउ, कारन तणु भंडार ।
विद्या गयणह गामनी, पद्मावती सु विचार ॥ १२ ॥ ५८ ॥

तु मुनि अणसण मूकीउं संपतु पर भात ।
विद्या बिहुं विसूसीउ, संभलि तेहनी वात ॥ १३ ॥ ५९ ॥

अथ बोली

तदनंतर तिणि मुनिस्वरि तदाकाल जिसमि इसी प्रतिज्ञानु उच्चार कीधु, पंचतीर्थ बिन प्रति नमस्कार करवा । श्रीशेत्रुंजय । श्री रैवतकाचल । श्री तुंगेस्वर । श्री पावागिरि । अनि श्री तारंगाचल । ए पंच तीर्थनी यात्रा कीधा विना दिन प्रति आहार नु नयम । पंच तीर्थनी यात्रा करी श्री गुरुना चरण वांदवातणि कारणि चिरा कोटि पुहुता । तदाकाल श्री गुरु अनुवंदना वेई सन्मुख बोलवा लागा ।

अथ पाघडी

देस मझि मेवाड देश, भट्टपुर पट्टण विशेस ।
तिहां वसि लोकमिथ्यात पूर, धम्मह धानासिज दूर ।। ६० ।।
तु जाणुंतो विद्या विशेष, परसमउ तुम्ह नार सेष ।
तव नेमसेन बोलि विचार, मि करवुं स्वामी वयण सार ।। ६१ ।।
तिहां सहि गुरु चाल्यु करी प्रणाम, चित्तह आठवीया एह काम ।।
पट्ट पुर पट्टण मझारि, गया नेमसेन न लगि वार ।। ६२ ।।

अथ छंद

नेमसेन मुनि ताहां पुहुतु भट्ट उर नयर मझमि ।
नय दीठइ अवलोक विलोकइ घरि बहुल मिथ्यात ।। १ ।। ६३ ।।
जरे बहुल मिथ्यात देषी मुणिंदो, महापाप तम नासवा एह चंदो ।
नीय न्याति पबोहीया तेण सवे, श्री नेमसेनस्य बहु सक्ति तवे ।। ६४ ।।
जरे नामभट्टउरा न्यात थापी, महापाप मिथ्यातनी वेल कापी ।
पतिट्ठीया तीर्थं चुवीस प्रासाद माला, श्रीनेमसेनस्य कीर्ति विशाला ।।६५।।
जरे जिणह चुवीस पयकमल भत्ता, तह कज्ज चउवीस गुत्तं संयुत्ता ।
भटे जरे बिब चउवीस तित्थइ, पतिट्ठीया नेमसेनस्य हत्थइ ।६६।
सजो गच्छ नंदीय नामि महानि, श्री नेमसेनस्य गुरु पासि आवि ।
आवीसहिं गुरुपासि भक्ति परणाम सुकिट्ठी ।। ६७ ।।
पडिबोहीय ए ज्ञांत अमर जस इणी परिलिद्धो ।
भट्ट उर नामिण ताम भट्ट उर किधा । पछंडावी मिथ्याव नेम श्रावकना दिधा ।। ६८ ।।
जयवंता परीयण पत्तसुं । श्री आदिनाथ सुपसाउ करि ।
श्री नेमसेन उपदेस तु थिर लछी श्री संघ घरि ।। ६९ ।।

श्लोक

तस्य श्रीनेमसेनस्य पट्टे ये मुनिपुंगवा: ।
तेषां व्यावर्णनां कुर्वे भव्या श्रृण्वंति सादरा. ।।१ ।।७०।।

अथ पाधडी बंध छंद

श्री रामसेन पट्टि सुजाण । श्री नेमसेन गरूउ पमाण ।।
श्री नरेन्द्रसेन नामि पवित्त । वासवसेन मुनिमयणजित्त ।।७१।।
सार्हंतसेन मुनिवर सुजाण । आदित्यसेन निज तेज भाण ।।
श्री सहस्रकीर्त्ति नामि प्रसिद्ध । श्रुतकीर्ति मतिघणु कीर्त्तिलिद्ध ।।७२।।
श्री देवकीर्त्ति सोलमि पाटि । तिहां नारसेन थाप्या मथाटि ।
श्री विजयकीर्ति कित्तिहिं विशाल । चारित्त लीउ पंचमिकालि ।।७३।।
केशवसेन लहूउ सुचंग । सहस्रसेन मुनिवर अभंग ।
श्री मेघसेन निर्मल सुगंग । कनकसेन राख्यु सुरंग ।।७४।।
श्री विजयसेन सुपवित्त चित्त । हरसेन नामि महीयल वदित्त ।।
चारित्तसेन चारित्तचार । वीरसेन जितो वेगमार ।
कुलभूषण भूषणहसेन । तिसमेर वदित्तो मेरसेन ।।७५।।

अथ दूहाबंध

शुभकरता मुनिवर हूउ, सेन सुमंकर नाम ।
नयकीर्त्ति सुं वर्णवुं, चन्द्रसेन गुणधाम ।।१।।७६।।
श्री सोमकीर्ति गुरु पाए नमुं, सहस्रकीर्त्ति सुविजाण ।
महकीर्त्ति गुरुवर्णवु मयण मनाव्यु आण ।।२।।७७।।
यसर्कीति यस जगसु, जिम गयणंगणि चन्द ।।
गुणकीर्त्ति गुण बोलीइ, धरी मणी परमाणंद ।।३।।७८।।
पद्मकीर्ति गुण बोलता, किमिहिं न आविछेह ।
त्रिभुवनकीति मुनिश्वर उपाउ, तपकरी निरमल देह ।।४।।७९।।

श्री विमलकीर्ति नाम हुउ, मदनकीर्ति मुनिराउ ।
मेरुकीर्ति सहि गुरु तणे, सुरनर नमीया पाय ॥१५॥८०॥

अथ बोली

इणि अनुक्रमि पाटि श्री गुणसेन इसि नामि माहा मुनिस्वर हूया । तुकिसा ते मुनीस्वर । ध्यान नइ बलि रात्रि समि सर्वार्थसिराज प्रत्यक्ष थाई वाचा दीधी । तु किसी वाचा स्वामी संभलि । जतु इवडु साहसीक मल्ल तु जिहां ताहरु वचन । ताहरु भवन । ताहरी पोथी जिहां करिजे को ताहरी आज्ञा धरि । तेहनि सर्पनु विषकूकडु न थाइ । ए सहि जाणे । उते मुनिस्वरना ध्याननां विद्यानां तपना इत्येवमादि अनेक गुण बोलतां सुर गुरु बृहस्पति आदिउ पार न पामइ ॥

श्लोक

रत्नकीर्ति ततो जातो मुनिर्जयसेनकः ।
कनककीर्त्तिश्चतत्पट्टे भानुकीर्तिर्गुणोज्ज्वलः ॥१॥८१॥
ततः संयमसेनाख्यो राजकीर्तिर्लघुस्मृतः ॥
विश्वनंदिमुनीन्द्रोऽभूत् चारुकीर्तिस्य कीर्तिभाक् ॥२॥८२॥

दूहा

एकादशमि पाटि जु विश्वसेन सुरइटु ॥
देवभूषभूषण समु ललतकीर्ति संतुट्ठ ॥१॥८३॥
श्रुतशीलि जे पूरीउ, श्रुतकीर्ति मुनिराउ ॥
जश्वविमयण हरावीउ,उदयसेन भविवाउ ॥२॥८४॥
गुणगाहा रसि पूरीउ, श्री गुणदेव विसेष ॥
विशाल कीर्ति वादिकरी, जगति रहावीरेष ॥३॥८५॥

अथ बोली

श्री अनंतकीर्ति तुऊ गुणसिद्धमिपाटि । अनंत महिमा ।

अनंतगुण अनंतशील । अनंत तेज आदि गुण वरणैकमल्ल । जीतउ मयण सल्ल । एवं विधि ते मुनिस्वर हुया । तेह्नि पाटि श्री महसेन आचार्य बिठा । तीणि महसेनाचार्यि वादिविटंबन । वादी गजांकुश । महावादी मस्तकशूल । मिथ्यात्व कुंदकुंदाल । इसां बिरद कहाव्यां । अनेक ग्रंथनासमूह बांधी । आपणु नाम रहाव्यु तेह्ना गुणावली अनेरा अनंत प्रवर्त्तिइ । भनि तेह गुरुनु नाम प्रभाति काल स्मरण मात्रि अनेक सुषनुदाता प्रवर्त्ति ।

अर्द्ध त्रोटक

श्री विजयकीर्ति निजकीर्ति रसे । जिनसेनइ आण्यु मयण वसे ।
रविकीर्ति कीर्तितेजिय घणु । जिणिनाद उतारयु मोह तणु ॥१॥

श्लोक

अभ्वसेनगुणांभोधि- श्रीकीर्त्ति चारुसेनकः ॥
शुभदःशुभकीर्तिश्च भवकीर्त्ति भवांतकृत् ॥१॥८७॥
श्रीभावतिकसेनाख्यो लोककीर्त्ति जगन्नुतः ।
श्रीमत्त्रिलोककीर्तिश्च मुनीन्द्रोऽमरकीर्त्तिकः ॥२॥८८॥

अथ दूहा

श्री सुरसेन मुनिंद जउ, जयकीर्ति गुणराशि ।
रामकीर्ति गुरुप्रणमतां, जांइ ते पातिक नासि ॥१॥८९॥
श्री उदयकीर्ति उदय भलि, राजकीर्ति गुरु जोइ ।
कुमारसेन गुण बोलतां, पार न पामि कोइ ॥२॥९०॥
पूरव लिपि भलउ वरण, पद्मकीर्त्ति सुपसिद्ध ।
पद्मसेन पछि हूउ, पद्मावतीवर सिद्ध ॥३॥९१॥

अथबोली

तेह श्री पद्मसेन पट्टोधरण संसारसमुद्र तारण तरण । सम्यग्मार्गचरण । पंचेन्द्रिय वशिकरण । एकादशीमइपाटि

श्री भुवनकीर्त्ति राउल उपना। पुनजिपि श्री भवनकीतिह। ढीलीनयर मध्य सुलतान श्री वडा महिमुंदसाह सभांतरि .... विप्रनि .... जलावी मलावी। सुलताण महिमुंदसाह संहपइ मान दीधुं। तेहनयर मध्य पत्रालंबन बांधी पंचमिथ्यात्व वादी वृंद राजसभाइ समस्त लोक विद्यमान जीता। जिन धर्म प्रगट कीधुं अमरजस इणी परिलीधु। अनितेह श्री गुरुतणि पाटि श्री भावसेन अनि श्री वासवसेन हूया। जे श्री वासवसेन मलमलिन गात्र चारित्र पात्र निरय पक्षोपवास। अनि अंतराइ निसंयोग मासोपवास हूसा तपस्वी इणि कालि हूया न कोहुसि। अनि तेहलि नामि तथा पीछीनि स्पर्श समस्त कुष्टादिक व्याधि जाती। तेह गुरुना गुण केतला एक बोलीइ। हवि भावसेन देव तणि पाटि श्री रत्नकीर्ति उपन्ना।

अथ छंद त्रिवलय

श्री नंदीतट गच्छे, पट्टे श्री भावसेनस्य।
नयसाषा शृंगारी, उपपन्नो रयणकीर्त्तीयो ॥१॥६२॥
उपनू रयणकीर्त्ति, सोहि निम्मलचित्त।
हूउ विख्यात क्षिति। यति पवरो जीतु ॥
जीतुरे मदनबलि संकयु न काही छलि।
जिनवर धम्मबली धुराधरो ॥६३॥
आणि जाणि रे गोयम स्वामी। तप नासिजेहनामि ॥
रह्यु उत्तम ठामि मंडीयरण। छाड्यु र रे दुर्जय कोध।
अभिनवु ए हु योध। पंचे इंद्रीकीधु रोध एक क्षणं ॥२॥६४॥
सद्गुरण तेह पाट। नरयनी भांगी वाट। मांडीला नवा अघाट विवह
पार। आणि आणि रे ज्ञेनमाण। सर्व विद्या तणु जाण।

आणि आणि रे जेनमाण। सर्व विद्या तणु जाण।
नरवर बहि आण। रंगभरे। दीसिदीसिरे अति भ कार।
हेसा मादि जीतुमार। पक्षीय न लागीवार। वरह गुरो।
इणीपरिमतिसोहि। भवीयण मनमोहि। ध्यान कुम आरोहि।
श्रीलक्ष्मसेन मारणंव करो। ॥३॥९५॥

कहि कहि रे संसार सार। मजाणु सहू असार।
अछि अति असार। भेद करी। पूजु पूजु रे अरिहंत देव।
सुरनर करि सेव। हविमलाउ येव भावधरी।
पालु पालु रे अहंसा धम्म। मणयनु लाधु जम्म।
म कर कुत्सित कम्म। भवहवणे।
तह तह रे उत्तम जन। अवरम आणु मनि।
ध्याउ सर्वज्ञ धन। लक्ष्मसेन गुरु एम भणे ॥४॥९६॥

दीठि दीठि रे अति आणंद। मिथ्यातना टालि कंद।
गयण विहूणउचंद। कुलहि तिलु।
जोइ जोइ रे रयणी दीसि। तत्व पद लही कीधि।
परि आदेश शीसि। तेह भलु। तरि तरि रे संसार
करसिज गुरु मूकिइ ह मोकलु कर दान भणी।
छंडि छंडि रे रुडीवाल। लेइ बुद्धि विशाल।
जाणीय अतिरसाल। लक्ष्मसेन मुनिराइ तणी ॥५॥९७॥

श्री रयणकीर्ति गुरु पट्टि तरणि साउज्जल तपै।
छंडावी पाषंड धम्मि मारगि आरोपै।
पाप ताप संताप मयण मच्छर मय टालै।
क्षमायुक्त गुणराशि सोभ लीला करि गालै।
बोलिज वाणि अम्मी अग्गली सावय जण मन चित्त हरि।

श्री लक्ष्मसेन मुनिवर सुगुरुयल संघ कल्याण कर ॥६॥६८॥

सगुण अगुण भंडार गुणहकरि जण मण रंजै ।
उवसम हयवर चडवि मयण मञ्वाइ मंजै ॥
रयणायर गंभीर धीर मन्दिर जिम सोहै ।
लक्ष्मसेण गुरु पाटि गुरु भविअण मन मोहै ।
दीपंति तेज दणीयर जिसु मछत्ती मण माण हर ।
जयवंता चउवय संघसु श्री धम्मसेन मुनिवर पवर ॥१॥६९॥

पहिरवि सील सनाह तवह चरण कडिकच्छीय ।
क्षमा खड्ग करि धरवि गहीय भुजबलि जय लच्छी ।
काम कोह मद मोह लोह भावंतु टालि ।
कट्ठ संघ मुनिराउ सख इणी परि अजुयालि ।
श्री लक्ष्मसेन पट्टोधरण पाय पंक छिप्पि नही ।
जे नरह नरिंदे वंदीइ श्री भीमसेन मुनिवर सही ॥१००॥

सुरगिरि गिरि को चडै पाउ करि अति बलचंतौ ।
कवि रयणायर तीर पुहुतउय तरंतौ ॥
कोइ आयास पमाण हत्थ करि गहि कमंतौ ।
कट्ठसंघ संघ गुण परिलहि दुविह कोइ लहंतो ।
श्री भीमसेन पट्टह धरण गच्छ सरोमणि कुल तिलौ ।
जाणंति सुजाणह जाण नर श्री सोमकीर्त्ति मुभलौ ॥१०२॥

पनरहसि अठार मास आषाढह जाणु ।
शुक्कवार पंचमी बहुल पष्यहं वषाणु ।
पुव्वाभद्द नक्षत्र श्री सोमकीत्ति गुरवरि ।
सत्यासी वर पाट तणु प्रबंध जिणि परि ॥
जिनवर सुपास भवनि कीउ श्री सोमकीत्ति बहुभाव धरि ।
जयवंतउ रवि तलि विस्तरु । श्री शांतिनाथ सुपसाउ करि ॥१०३॥

इति श्री गुरुनामावली

रिखभनाथ की धूलि

प्रणमवि जिणवर पाउ तु, राउ तिहु भवननुए ।
समरवि सरसित देवतु, सेवा सुर नर करिए ।
गाइ सु आदि जिणंद, आणंद अति उपजिए ।
कौशल देश मझार तु, सुसार गुण आगलु ए ।। १ ।।

नयर अजोध्याहां वास तु, मास जगि पूरविए ।
नाभि नरिंद सुरिंद जिसु, सुरपुर बरीए ।
मुरा देवी तास अरधंगि सुर गिर भाजिसीए ।
राउ राणी सुखसेजि, सुहे जोइ नितु रमिए ।। २ ।।

माता की सेवा करना

इंद्र आदेश सुवेस आवीय सुर किन्यका ए ।
केवि सिर छत्र धरंति, करंति केवि धूपणाए ।
केविउ गट देइ अंगि, सुचंगी पूजा घणी ए ।
केविउ मर बहू अंगि, आभणीय आण वहिए आ ३ ।।

केवि सयन अनि आसन, भोजन विधि करिए ।
केवि षड्ग धरी हाथि, सो साथइ नितु फिरिए ।
मुरा देवी भगति चि काजि, सु लाजन मनि धरिए ।
जू जूया करि सवि वेषतु, मा मन परिहरिए ।। ४ ।।

गरभ सोध करि भाव तु, गाइ गुण जिन तणाए ।
वरसि अहूठए कोडि करि, जोडि सोवण तणीए ।
दिन दिन नाभिनिवार, सो वारि वा दुःख घणीए ।
एक दिवस मुरा देवी, सो सेवीइ जक्षणीए ।
पुढीय सेजि समाधि, सु अधि कोइ आसणीए ।। ५ ।।

अथ ढाल बीजी

मुरा देवी सोयणडां पेषि, त्रिभुवन जण जिम देषि ।

रयणीय पाछलि याम, देखीय जागिली ताम ।। १ ।।
करीय शृंगार सु सार, आवीय सभाह मझार ।
नाभि नरिंद पाए लागि, कर जोडी फल मागि ।। २ ।।

सोलह स्वप्नो का फल

स्वामीय सुयरणडां दीठा, दुःख सविहो तूर्या पर्वीठां ।
उज्जल वर्ण सोभाऊ, पहिलि गयवर राऊ।। ३ ।।
बीजि वृषभ ते गाजि, दीठि दालिद्र भाजि ।
बाकुं सिंघ ते त्रीजि, सबल ऊपम गुण दीजि ।। ४ ।।
चुथि लक्ष्मीय बेठी रयण, सिंघासण मठी ।
पंचमि पुष्प नी माला, ऊ गुंधीय विषय विशाला ।। ५ ।।
छठि चंद संपूरह, तिमर करि घण दूरह ।
सातमि सूर ते दीठू, उदयाचल सिरे बीठू ।। ६ ।।
मच्छ युगल वेलंतु आठमि, जल सिरिए झलकंतु ।
नुमि पूरण कुंभोउ, मलतणुउ आरंभो ।। ७ ।।
सरवर जल भरयुं सोहि, दशमि जनम मन मोहि ।
सायर लहर अपार, दीठा सपन ईग्यार ।। ८ ।।
विष्टर भवन मझार, रयणमि सपन ते बार ।
तेरमि अमर विमान, रिपु सवे होया विमान ।। ९ ।।
चौदमि नागचावास, रंगि करिय विलास ।
पनरमि रयण चापुंज, जाणी मेर नाकुं ।। १० ।।
सोलमि अग्नि अंगीठी, धूम रहित मिय दीठी ।
सोलि सपन विचार बोलि राउ ते सार ।। ११ ।।
तुं घरि पुत्र ते होसि ज्ञानि त्रिभुवन पोसि ।
राणी मंदिरे पुहुती दसह कुमारी संयुती ।
गर्भ महोत्सव कीधु सुर मली दान बहु दीधु ।। १२ ।।

अथ ढाल त्रीजी

जनम महोत्सव

अउ हो पुत्र होमा दश मास । नाभि नरिदनी पूगीय आस ।
जनम महोत्सवि सुरपति आया । चउ विध काय सुरासुर राया
॥ १ ॥

इन्द्र ऐरावण विसि पहूत । जय जय शब्द ते करइ बहूत ।
सूत महिय इंद्राणीय जाई । मायामि बालक नवुंयनीवाई ॥ २ ॥
आणीय बालक इन्द्रनि दीधुं । प्रणमीय सुरपति निज करि
लीधुं ।
गजपति बइसीनि सुरगिर जांइ । देव देवी जिनवर गुण गांइ ॥ ३ ॥
पांडुक वन कंबल सिला नाम । बिसार्‌या जिन करीय प्रणाम ।
क्षीर समुद्र जल कुंभ भराव्या । सहस अठोतर सुर वर लाव्या
॥ ४ ॥
इंद्र इंद्राणीय करि अभिषेक । आप आपणि संगि रचियां
विवेक ।
स्नान कराविय सील विभूषण । भूव्या ते जिनवर सहि जु
सुलक्षण ॥ ५ ॥
इन्द्रि अंगूठि अमृत देइ । ज्ञानीय चर्म वदन नवि लेई ।
उत्सव अति घणि आव्या ते ग्राम । सुर नर सज्जन हरषीया
ताम ॥ ६ ॥
आणी इन्द्राणीइ माइनि आप्यु । वृषभ कुंवर वर नाम जु
थाप्यु ।
नाचीय सुरपति पूजीया तात । ग्यर निज मंदिर करता
ते वात ॥ ७ ॥
वाधए कुमर ते नव नव रंगि । धनपति भगति करि बहु संगि ।
यौवन लक्षण गुण करी मंड्यु । बाल पणुं जिन सहि जियां
छांड्यु ॥ ८ ॥

इन्द्रि करयुग बीवाह अनोपम । नंदा सुनंदा दोइ नारी
निरोपम ।

ज्ञान विज्ञान ते सचलांषां दाषि । प्रजाय लोक सवेत्तय थका
... ।। ६ ।।

इणी परिभोगवि सौख्य असंख । पूरब बीत वियासीय लक्ष ।

वैराग्य भावना

अपच्छर देषि वैरागिय वास्यु । भोग सौख्यनीया मूकीय आस ।। १० ।।
स्थिति संसार असार ते जाणी । चारित्र लेवानि निज मति
आणी ।। ३ ।।

अथ ढाल चुथी

लौकांतिक सुर आवीयाए । तिहां जय जय शब्द वधावीयाए ।
आणीय पालषि सुर चढीए । तिहां रयण हीरेय सोभ्रण
जडीए ।। १ ।।

सिंसीप जिनवर संचर्याए ।
तिहां आणे संयमश्री वर्याए ।

तपस्या

बहु त्रिया मतलि जाई रह्या ए ।
तब लोचतणा दुख अति सह्या ए ।। २ ।।

दिगम्बर ब्रत उच्चरयु ए ।
तिहां बीस सहस्र राए परिवरयु रे ।

बरस दिवस उपवास भउ ए ।
तिहां हथणाउर पुरवर गउए ।। ४ ।।

राउ श्रेयास वधावीउ ए ।
तिहां आंजलि रसइ भटावीउए ।

करम बिरी संघारीयाए ।
तिहां दोष अढारह वारीयाए ।। ५ ।।

संबोधि सुर नर बहुमे ।
समकित रयणह थिर करए ।

कैवल्य होना

सहस्र वरस ध्यान उपनुए ।
समवसरण तिहां नीपुनुए ॥ ६ ॥
जिणवर जस अति महिमद्यु ए ।
तिहां जिण सासण अति गहि गह्यु ए ।
संबोधि सुर नर वरये ।
समकित रयणह थिर करू ए ॥ ७ ॥
गिरि कैलासह स्थिति करीए ।
तिहां मुगति रमणि जिनवर वरीए ।
राज राजिम सवि सुख सहूए ।
श्री सोमकीरति कहि दिउ बहू ए ॥ ८ ॥
धुल श्री ऋषभनु गाइसिए ।
तहां चिंतत फल सहू पाइसिए ॥ ९ ॥

इति श्री रिषभनाथ धूल समाप्तः

लघु चिन्तामणि पार्श्वनाथ जयमाल

तिहुवण चूडामणि जय चिंतामणि, भुवण कमल सरणेसरु।
नागद्दहमंडणु दुरियविहंडणु, जय जय पास जिणेसरु ।।
जय पास जिणेसर वीयराय, जय जय सयंभु सुर णमिय पाय।
जय केवल किरण फुरंत देह, जय हिय मइ तुह वाणी अमोह।
वाणारसि णयरिहि लद्ध जम्मु, पामावइ पणईणि नाथ पोम।
धरनिंदु सुसेविय सामि साल, तुव चलण नमइ पणमंत काल।
नंदन अश्वसेणु नरेसु राय, बम्मादे माइ पूरवइ आस।
मन वंछित पूरण सन्धु मुखु, तुहु पाय णमंतह जाइ दुक्खु।
घरि पुरि गिरि मंदिरि अइदुलभि, रणिरावलि देवलि अइ दुलभि।
जलि थलि महियलि जे तुहु संरति, तहु निश्चय दुरिय दुख यहुजंति।
जे स्वामि थुणंतह गुण असेस, तसु पाय पणासइ खास सासु।
जो दाहविउं चिय कोढु हुंति, जे तुह गंधोवहि खयहु जंति।
जे चलण स्वामि तुहु पय जुवंति, जे कर जे तुहु पूजा रचंति।
जे नयण धन्नु तुहु मुहु जुवंति, सा जीहजि तुहु पय गुण थुणंति।
जे श्रवणजि तुहु वाणी अमोघ, जम्मणु तुहु हियडइ धरेहु।
जिहि दीठा पहासइ भयह पापु, जिहि ध्याया सीभइ मंतु जाप।
जिहि थुणियहि फिटइ भयइ रोग, यहु पूरइ सग्गु पवग्गु भोउ।
हउ पास जिणेसर तणउ भिच्चु, इम भणइ सोम सेवग्ग सच्च।
फल पदमु तासु मंदिरि धरेण, चिंतामणि चिंतयउ अथु देइ।
जो कामधेनु तहि घरि दुहेइ, जे पासणाहु हियडइ धरेहु ।।

घत्ता

तू भुवण दिवायरु गुणरयणायरु, मद् मोह दुह खंडणु।
तू तिहुवण मंडणु, भवदुहखंडणु जय जय पास जिणेसरु ।[1]

---

1. गुटका संख्या ८–शास्त्र भण्डार श्री दिगम्बर जैन मंदिर सोनियों का (पार्श्वनाथ मन्दिर) जयपुर। पृष्ठ 2-3

कविवर सांगु

राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों में कविवर सांगु की एक मात्र काव्य कृति "सुकोसलराय चुपई" नैणवा के शास्त्र भण्डार के एक गुटके में संग्रहीत है। इसी गुटके में आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर की रचनाएं लिपिबद्ध हैं। गुटका प्राचीन है जिसका लिपिकाल संवत् १५८५ ज्येष्ठ सुदी १२ रविवार है। इस गुटके ने गुजरात एवं राजस्थान के कितने ही शास्त्र भण्डारों की यात्रा की थी। संवत् १६४४ द्वितीय वैशाख सुदी १५ के दिन राजस्थान के प्रसिद्ध दुर्ग रणथम्भौर में इस गुटके पर टीका (सूची) लिखी गयी थी। इसके पश्चात् उसने कहां-कहां की यात्रा की थी इसका उल्लेख नहीं मिलता लेकिन वह रणथम्भौर से नैणवा के शास्त्र भण्डार में पहुंचा और फिर जयपुर पहुंचा।

सांगु का दूसरा नाम सांसु भी मिलता है। कवि कहां के थे किस भट्टारक के शिष्य थे। माता पिता स्त्री सन्तान आदि के बारे में भी कवि की कृति मौन ही है। लेकिन जिस गुटके में इनकी कृति संग्रहीत है उसकी अन्य कृतियों के आधार पर यह अवश्य कहा जा सकता है कि कवि राजस्थान के ही निवासी थे और आचार्य सोमकीर्ति एवं ब्रह्म यशोधर से इनका निकट का सम्बन्ध था। यद्यपि चुपई में कवि ने अपने नाम के उल्लेख के अतिरिक्त किसी दूसरे विद्वान् का नाम नहीं दिया है। लेकिन उन कवियों के साथ इनकी रचना का संग्रह होना ही इनके पारस्परिक सम्बन्ध को प्रकट करने वाला है।

रचना काल

यद्यपि इस दृष्टि से भी "सुकोसलरायचुपई" में कोई उल्लेख नहीं मिलता लेकिन लिपिकाल के आधार पर इस कृति को हम संवत् १५४० के आसपास की रचना मान कर चलते हैं। इस कृति की एक पाण्डुलिपि देहली के एक शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है जिसका उल्लेख श्री कुन्दनलालजी ने किया है।[1]

काव्य परम्परा

सुकोसल का जीवन जैन जगत में पर्याप्त रूप से लोकप्रिय रहा है इस कथा का मूल स्रोत हरिषेण कृत "बृहत् कथाकोश[2] के १३७ वें एवं १५२ वें

---

1. देखिये
2. बृहत्कथाकोष (सिंघी जैन सीरिज बम्बई संस्करण १९४३)
3. वही पृष्ठ ३०५–३१४,

आख्यान में मिलता है लेकिन अपभ्रंश के महाकवि रइधू ने सर्वप्रथम संवत् १४९६ में सुकौसल के जीवन को "सुक्कोसल चरिउ" के नाम से खण्ड काव्य के रूप में प्रस्तुत करके उसकी लोकप्रियता में चार चांद लगाये। इस खण्ड काव्य में चार संधियाँ हैं जिनमें ७४ कडवक है। रइधू ने महाराजा नाभिराम से कथानक का सम्बन्ध जोड़कर अपने चरित नायक को भी इक्ष्वाकु वंशीय आदि तीर्थङ्कर ऋषभदेव का वंशधर सिद्ध किया है। इसलिये खण्ड काव्य की प्रथम दो संधियों में ऋषभदेव का ही जीवन वृत्त दिया गया है। काव्य की शेष दो संधियों में सुकोसल का जीवन क्रमबद्ध शैली में प्रस्तुत किया गया है।[1] रइधू के समकालीन ब्रह्म जिनदास हुये जिन्होंने अनेक रास काव्यों की रचना करने का यश प्राप्त किया। ब्रह्म जिनदास के इस काव्य के एक पाण्डुलिपि डूंगरपुर के शास्त्र भण्डार में मुझे देखने का अवसर मिल चुका है।

ब्रह्म जिनदास के पश्चात् सांगु कवि ने सुकोसल जीवन कथा को आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया। उसे काव्य रूप प्रदान किया तथा सुकोसल को युद्ध भूमि में भेज कर तथा सभी देशों के राजाओं पर विजयश्री दिलवा कर उसने जीवन को एक नया मोड़ दिया। उसने रइधू के समान अपने काव्य को महाराजा नाभिराय से आरम्भ कर दिया किन्तु मंगलाचरण के पश्चात् ही अयोध्या का वर्णन आरम्भ कर दिया तथा उसके राजा कीर्तिधर एवं रानी महिदेवी को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करके कथा को लम्बी नहीं की तथा साथ ही पाठकों को आरम्भ से ही सुकोसल के जीवन कथा को सुनने की रुचि पैदा करने में सफलता प्राप्त की। यही नहीं काव्य के अन्त तक पाठकों की रुचि बनाये रखने में भी वह किसी अन्य कवि से पीछे नहीं रहना चाहता। सुकोसल का जन्म, शिक्षा-दीक्षा, युद्ध एवं विजय का विस्तृत वर्णन, विभिन्न विजित देशों के नामों का उल्लेख, विजय प्राप्ति के पश्चात् नगर प्रवेश, प्रजाजनों द्वारा स्वागत, राज्य सुख, अकस्मात् वैराग्य होना, घोर तपश्चर्या, व्याघ्रिनी द्वारा शरीर भक्षण, कैवल्य एवं निर्वाण आदि घटनायें एक के बाद दूसरी जिस क्रम में आती है उससे पूरा काव्य ही रोचकर बन गया है।

काव्य का अध्ययन

कवि ने अपने इस चुपई काव्य में सभी वर्णनों को सजीव बनाने का प्रयास किया है। सर्वप्रथम वह 'अयोध्या नगरी' की महिमा एवं उसके निवासियों की समृद्धि का वर्णन करता है। वहां ऊंचे-ऊंचे महल हैं जो ऊंचाई में विन्ध्याचल के काम

---

1 विस्तृत परिचय के लिये डा. राजराम जैन का "रइधू साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन" देखिये।

के समान लगते हैं। नगर के घरों पर गुड़ियां उछलती रहती है। वहां की कामनियां अपने आपका शृंगार करने में ही व्यस्त रहती है। घरों में मोतियों के ढेर लगे रहते हैं जैसे मानों वे उसी नगर में पैदा होते हों। नगर के निवासी स्वर्ण दान बहुत करते हैं। वहां के प्रत्येक घर में वैभव बरसता है उनमें लक्ष्मी निवास करती है। यही वर्णन कवि के शब्दों में निम्न प्रकार है —

> घिरि घिरि बन्ध्याघरि के काएा, घिरि घिरि राउत गुडि निसाएा।
> घिरि घिरि नारी करि सिएागार, घिरि घिरि बंदी जय जयकार ॥ ६ ॥
>
> घिरि घिरि सोव्रण दीजि घणां, घिरि घिरि नहीं मोती नीमरणा।
> घिरि घिरि रयएा अमूलइक जेह, घिरि घिरि नहीं लक्ष्मी नु छेह ॥ ७ ॥

सुकोसल का युग सात्विक युग था। विषय वासना, भोग विलास एवं खान-पान में रुचि आयु ढलने के साथ-साथ स्वतः कम हो जाया करती थी और राजा महाराजा भी अपना अन्तिम समय राज पाट त्याग कर साधु जीवन के रूप में व्यतीत करना चाहते थे। इसलिये राजा कीर्तिधर ने भी अपनी यही इच्छा व्यक्त की

> घन योवननि जाथिम घणुं, सहिजी शरीर नही आपणु।
> अह्मे दीक्षा लेसुं वनि जाई, पंच महाव्रत पालुं सही।
> भुगति तणा सुख जो ना काजि, तिणि कारणि हूं मेहुण राज ॥ १४ ॥

लेकिन तब तक कीर्तिधर पुत्र विहीन थे। इसलिये मंत्रियों एवं महाजनों ने पुत्र होने तक राज्य काज करते रहने की प्रार्थना की। राजा के मन में बात बैठ गयी और उन्होंने वैराग्य लेने के विचार को कुछ समय के लिये स्थगित कर दिया। रानी के गर्भवती होने के पश्चात् पुत्र जन्म का भेद खुल ही गया। फिर क्या था चारों ओर उत्सव आयोजित किये गये। मंगलगीत गाये गये। ब्राह्मणों को एवं याचकों को खूब दान दिया गया। इसी की एक झलक कवि के शब्दों में देखिये —

> नयर माहि गूडी उछली, रायतणी मनि पूगी रली।
> बन्ध्यामणि ब्राह्मणिनि दीध, जन्म लगि अयाचक कीध।

एक ओर पुत्र जन्म के उत्सव आयोजित हो रहे थे तो दूसरी ओर राजा ने नवजात शिशु को राज्य भार सौंप कर मुनि दीक्षा धारण कर ली। चारों ओर

प्रसन्नता के स्थान पर हाहाकार मच गया। सबसे अधिक वेदना एवं दुःख रानी को हुआ। वह रोने पीटने लगी और अपने मन के भाव निम्न प्रकार प्रकट करने लगी—

सहिदेवी झूरि घणु, हीयडा आगिल बाल।
रे रे कुंयर सलखणा, किम नीगमसु काल ॥ २६ ॥
अंतेउरह धंधलु, जमी मेल्ही आवि।
एकह पीयडा कारणि, हुयि हुया निर नाथ ॥ २७ ॥

रानी को अपने पुत्र के लिये पति विरह के दुःख को भुलाना पड़ा। वह पुत्र पालन एवं उसकी शिक्षा दीक्षा में लग गयी और आठ वर्ष की आयु में ही उसे सब कलाओं में दक्ष बना दिया। उसका रूप निखर गया तथा उनके मनोज्ञ व्यक्तित्व को देख कर सभी ने उसे अपना राजा स्वीकार कर लिया।

वरस आठनु थउ जे जलि, सर्व कला सीख्यु ते तलि।
सोवनवानी परि झलकि देह, सेवक सजन सहू नव नेह ॥ ३२ ॥

सुकौसल बालक राजा थे इसलिये राज्य में दुश्मनों ने तोड़-फोड़ आरम्भ कर दी। प्रजा में खलबली मचने लगी। कौन अपनी जान जोखिम में डाल कर शत्रुओं का मुकाबला करे। लेकिन जब सुकौशल को उपद्रव की बात मालूम हुई तो उसने शत्रुओं को अच्छा सबक सिखाने का निश्चय किया। माता ने उसे बालक जान कर रोकना चाहा लेकिन सुकौसल ने माता से निम्न शब्दों में अपना दृढ़ निश्चय व्यक्त किया—…

कुंयर कहि सु सभलि मात, पिसुणा तणी छि थोडी बात।
भाजि नयर देश लूटीइ, सूणी पिठा किम छूटीइ ॥ ३६ ॥

सुकौसल ने युद्ध की पूरी तैयारी की। सेना को सब शास्त्रों से सज्जित किया गया। हाथी, घोड़ा, पदाति, रथ आदि की सेना तैयार की। इसके पूर्व सब राजाओं को सन्देश भेजे गये जिनमें उन्हें सुकौसल की अधीनता स्वीकार करने के लिये कहा गया। लड़ाई के बाजे बजने लगे। सुकौसल स्वयं रथ में बैठे तथा पैदल सेना को सबसे आगे रखा गया। समुद्र के समान उसकी सेना दिखाई देने लगी। इतनी धूल उड़ी की सूर्य का दिखना बन्द हो गया।

चाल्यां कटक जिस सायर पूर, खेहा रवि नवि सूझि सूर।

सुकोसल यद्यपि आयु में बहुत छोटा था लेकिन उसकी वीरता, साहस एवं पराक्रम देखते ही बनता था। उसकी सेना अत्यधिक दक्ष एवं संगठित थी तथा शत्रु सेना को परास्त करने में सक्षम थी इसलिये अधिकांश राजा महाराजा बिना युद्ध के ही अपनी पराजय मान कर सुकोशल की शरण में चले गये और यथोचित दण्ड देकर उसकी पराधीनता स्वीकार करली। वह अपनी सेना के साथ गुजरात, सौराष्ट्र, कोंकण, महाराष्ट्र, कर्नाटक आदि सभी प्रदेशों को रोंदता हुआ उन पर विजय पताका फहरायी।

गूजर सोरठ आणि लीध, नयीयाडा बंदर बिसकीध।
भांजि तखर पाडि वार, साध्यु कुंकणनि करणाट ।। ५८ ।।

लाड देश मरहठ मलहार, साध्यां कन्नड तिणि वार।
कुंडलपुर नु कंहीइ ईस, आवी साअण नामी शीस ।। ५९ ।।

सुकोसल राजस्थान के मेवाड़ एवं मारवाड़ भी गये तथा हस्तिनापुर एवं मुलतान भी गये। वे गौड देश एवं खुरासाण भी गये और वहाँ के सभी राजाओं को सहज ही वश में कर लिया। जिसने भी उसका मार्ग रोकना चाहा उसीको बन्दी बना लिया गया।

मेदपाट मुरकु मुलताण, खांडा बाले माध्यु खुरसाण।
मरुस्थली बहुली बहु जाण, गौड चौडगा जणु बखाण।।
हथणा डर सुं साध्या देश, पोयणपुर कीधु परवेश ।। ६३ ।।

इस प्रकार सुकोसल ने चारों दिशाओं को जीत लिये। सब जगह उसकी आज्ञा मानी जाने लगी। उसे अनगिनत लक्ष्मी, सम्पदा एवं सम्पत्ति प्राप्त हुई। हाथी, घोड़ा आदि की तो संख्या ही नहीं थी। कितनी ही राजकुमारियों से भी उसने विवाह कर लिया।

राह देश सब साधिया उत्तर दक्षिण जाणि।
पूरब पश्चिम साधिया, चिहुं दिशि वरती आणि ।। ६९ ।।

लक्ष्मी आणी लक्ष गणी, धन कण कंचणसार।
परणी अतीयल पदमणी, हय गय रयण भंडार ।। ७० ।।

सुकोसल अयोध्या आकर सानन्द राज्य करने लगा। चारों ओर सुख-

शान्ति थी। प्रजाजनों को अपार सुख था। नगर में कहीं कोई दुःखी एवं निर्धन नहीं दिखता था।[1]

सुकौसल की रानियां भी क्या थी सौन्दर्य एवं लावण्य की मानों प्रतिमूर्ति ही थी। वे विभिन्न प्रकार के श्रृंगार करती और अपने प्रियतम का मन प्रसन्न करने का उपक्रम करती। कभी वे काले वस्त्र पहिनती, कभी पीले कभी केसरियां रंग के और कभी दूसरे रंग के। वस्त्रों का पूरा मैचिंग रहता। वैसे ही आभूषण, एवं वैसा ही रंग सभी मिल कर इतनी अधिक सुन्दर लगती कि उनका सौन्दर्य देखते ही बनता था।

पीला सोवण सोहती ए, पीली चूडी बांहि तु।
पीली झालि झलामलीए पीलां केर त्यांह तु॥
उजल झंझार झलकती ए, उजल रयण अपार तु।
उजल दरपण नरपती ए, उजल मोतीय हार तु।

इस प्रकार अपार सुख सम्पत्ति को भोगते हुए पर्याप्त समय निकल गया। समय को जाते हुये देर नहीं लगती। पुण्य की महिमा को कौन नहीं जानता। पुण्य से ही यश, कीर्ति, धन सम्पत्ति तो मिलती है।

पुन्यि कीरति उजली, पुण्यि जस भंडार।
पुण्इ पिसुण पीडि नाहीं, पुण्य पृथ्वी माहि सार॥

सुकौसल के लिये १६ वें वर्ष में राज्य सम्पदा त्याग कर वैराग्य लेने की भविष्यवाणी थी। इसलिये राजमाता ने नगर में साधु मात्र के लिये प्रवेश बन्द कर दिया था। कुछ समय पश्चात् मुनि कीर्तिध्वज आये लेकिन वे भी नगर प्रवेश नहीं पा सके। राजमाता सहिदेवी का हृदय मात्सर्य से भर गया। लेकिन जब सुकौसल को यह बात मालूम हुई तो शीघ्र ही नगर के बाहर गये और मुनि महाराज को विनय सहित नगर में लाने का निश्चय किया। सुकौसल ने वहां जाकर निम्न प्रकार निवेदन किया—

अई सुकौसल नामि मोस, तम्हे कहि उपरि आणु रसि।
काया कष्ट करवां घणु, राज रिधि सहूइ तम्ह तणु।
माहारि नहीं संसारि काज, तिणि कारणि मि छोड्यु राज।

---

1. प्रजा सहू सुख भोगवि सा० दुखीय न दीसइ कोइ।

सुकौसल ने भी वैराग्य लेने का निश्चय कर लिया। उसके वैराग्य लेने की सूचना तत्काल चारों ओर फैल गयी। नगर में हाहाकार मच गया। जिसने सुना वही रोने बिलखने लगा। रानियों के विलाप का हृदयविदारक दृश्य था। कवि ने इन सबका अच्छा एवं प्रभावोत्पादक वर्णन किया है—

एक झूरि एक करि विलाप, एक कहि हम लागु पाप।
हा हा करीनि कूटि होउ, आज अंतेउर सुनुं थऊं।
एक अबला लाखि सिणगार, एक तोडी नवसर हार।
चीर दोर एक भाजि चाली एके धरणि पडी टल वाली।

सुकौसल के वैराग्य लेने के पश्चात् सारा घर ही चौपट हो गया। राजमाता महिदेवी बुरी तरह विलाप करने लगी और महल से गिरकर आत्मघात कर लिया। वह आर्त्तध्यान से मरने के कारण अगले जन्म में व्याघ्रिणी बनी।

इस प्रकार पूरा काव्य विभिन्न वर्णनों से ओतप्रोत है। सभी वर्णन स्वाभाविक है। नगर वर्णन, सुकौसल जन्म, शिक्षा-दीक्षा, शत्रु देशों पर आक्रमण एवं उनमें विजय, सौन्दर्य वर्णन, विषय सुख वर्णन, विरह वर्णन, तपस्या वर्णन, परिषह वर्णन, आदि सभी वर्णन एक से एक निखरे हुये हैं। कवि ने उनमें जीवन डाला है इसलिये वे सभी सजीव बन गये हैं।

सुकौसल यद्यपि राजकुमार थे। दुःख को कभी जाना ही नहीं था। लेकिन जब तपस्या करने लगे तो गर्मी, सर्दी एवं वर्षा की भीषणता की जरा भी परवाह नहीं की। भाद्रपद मास में डांस एवं मच्छर भयंकर रूप में सताते लेकिन वे तो आत्मध्यान में रहते। सर्दियों में जब ठण्ड से सारा शरीर कांपता था तब भी वे एकाग्रचित्त होकर नदी किनारे ध्यान करते रहते। गर्मियों में दोपहर की वेला, तपती हुई शिलाएं और तेज धूप सभी तो एक से एक बढ़ कर ध्यान में बाधक थे। कवि ने इन सभी का अपने लघु काव्य में अच्छा वर्णन किया है—

ताती वेलू तपती सिला, ते उपरि तप साधि भला।
माथा उपरि सूरज तपि, निभर कर्म घणेरा खपि ॥

एक ओर वह व्याघ्रिणी सुकौसल के शरीर को खाने लगी। दूसरी ओर सुकौसल मुनि आत्म ध्यान में इतने लीन हो गये कि शारीरिक कष्ट का उन्हें भान ही नहीं हुआ। और वे कर्मों की निर्जरा करने लगे। अठारह दोषों से रहित होकर पांच महाव्रतों का पालन करने लगे।

कर्म टालि टालि प्रतिहि सुजाण
अटवी मांहि एकलु मन माहि आतम ध्यान आणि ।
परमानन्द सेवि सदा जाणि धर्म विचार ।
बिहि मुनिवर प्रति सूयडा हुचि लेंसू भव पार

व्याघ्रिणी द्वारा भयंकर आक्रमण का एक वर्णन देखिये—

वाघिणी घर हरि लिणि अंबर थरहरि
पीडा न जाणिए ना तरतणीए ।
एह पापिणी पीढ न जाणि मडलां एहनां करणी
पुंछड लाली उंची उडि थर थर धूजी धरणी ।

छन्द—प्रस्तुत काव्य में चौपई एवं दोहा छन्द की प्रमुखता है लेकिन अन्य छन्दों में ढाल हीडोलानी, वस्तुबन्ध छन्द का भी प्रयोग हुआ है। पूरा काव्य गेय काव्य है जो गाया जाकर जन मानस में सुकौसल के प्रति श्रद्धा के भाव उंडेलता है।

भाषा--भाषा की दृष्टि से काव्य राजस्थानी भाषा का काव्य है। मांगु, लांगु, धिरि धिरि सिणगार, आपणु, जनम्यु सुंतु जैसे क्रिया-पदों एवं अन्य शब्दों का प्रयोग बहुतायत से हुआ है। सांगु कवि का यद्यपि गुजरात से सम्बन्ध था लेकिन गुजराती भाषा का प्रयोग नहीं के बराबर हुआ है। फिर भी कहीं कहीं क्लिष्ट शब्द भी प्रयोग हुआ है उससे यह काव्य सामान्य पाठकों के पल्ले नहीं पड़ता।

नगरों का वर्णन

अयोध्या के विशेष वर्णन के साथ २ अपने इस काव्य में कितने ही प्रदेशों एवं नगरों का उल्लेख किया है। इससे काव्य के प्रति आकर्षण सहज ही बढ़ गया है। गोपाचल (ग्वालियर) उज्जयिनी, गुर्जर देश, सोरठ (सौराष्ट्र) कोंकण, लाड, मरहठ (महाराष्ट्र), कन्नड (कर्नाटक) मेदपाट (मेवाड़) मुलतान, खुरासाण, मरुस्थली (मारवाड़), हथणाउर (हस्तिनापुर) पोयणपुर (पोदनपुर), चम्पापुर, पावापुर, अंगदेश, बंगदेश, मगध, चीण (चीन) पंचाल, राजगृही, आदि के नाम उल्लेखनीय है।

समाज वर्णन—सुकौसल चुपई में सामाजिकता वर्णन के प्रसंग बहुत कम आये हैं। पुत्र जन्म, आदि के अतिरिक्त कोई विशेष वर्णन नहीं मिलते। लेकिन

राजा भी राजपाट छोड़ कर साधु जीवन ग्रहण कर लेते थे तथा कभी-कभी छोटी अवस्था में भी वे मुनि जीवन अपना लेते थे। साधुओं का समाज पर विशेष प्रभाव था।

इस प्रकार 'सुकोसल चुपई' हिन्दी के आदिकाल की एक उत्तम कृति है। जिसके प्रचार प्रसार की आवश्यकता है। काव्य की पूरी कथा का सार निम्न प्रकार है।

कथा

इस पृथ्वीतल पर असंख्यात द्वीप हैं। उनमें जम्बूद्वीप सबके मध्य में स्थित है। उसी जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र है जिसकी विशेष महिमा है। उसमें अयोध्या नगर है जहाँ दान पुण्य होता रहता है। धनिक लोगों की जहाँ घनी बस्ती है। गरीब तो कहीं दिखता ही नहीं। नगर में चौरासी चौपड़ हैं तथा दुकानों की तो संख्या करना भी कठिन है। नगर की पूरी लम्बाई-चौड़ाई १२ योजन प्रमाण है। वहाँ ऊँचे-ऊँचे मकान थे जिन पर ध्वजाएं फहराती रहती थी। महलों में बैठी रमणियां शृंगार करती रहती थी तथा जिनमें अद्भुत धन राशि संग्रहीत थी। नगर उद्यान, सरोवरों से युक्त था तथा जिसमें अनेक महल थे।

इसी अयोध्या नगरी में 'कीर्तिधवल' राजा सपरिवार राज्य करता था। उसकी रानी सहदेवी थी जो सुन्दरता की खान थी। एक दिन कीर्तिधवल के मन में जगत से वैराग्य हो गया तथा उसने मुनि दीक्षा लेने का भाव प्रकट किया। उसने अपने मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को बुलाया और दीक्षा लेने के विचार उनके सामने रखे। वे उस समय तक पुत्रहीन थे इसलिये प्रधानमन्त्री ने उनसे पुत्रोत्पत्ति तक वैराग्य नहीं लेने के लिये निवेदन किया। क्योंकि पुत्र के अभाव में सारा राज्य ही समाप्त हो जावेगा। कुछ समय के पश्चात् रानी गर्भवती हो गयी। रानी ने पुत्र जन्म दिया तथा उसका नाम सुकोसल रखा गया। बालक को छिपाकर रखा गया जिससे राजा को पता नहीं चल सके। एक बार सरोवर पर बालक के वस्त्र धोने गयी थी तभी बात ही बात में एक ब्राह्मण से दायी ने कह दिया कि रानी सुकोसल को पाल रही है। ब्राह्मण के मन में बात कब रुकने वाली थी। उसने तत्काल राजा से पुत्र होने की बात जाकर कह दी।

सारे नगर में पुत्रोत्सव मनाया गया। गुड़ी उछाली गयी। राजा ने ब्राह्मणों को खूब दान दिया। याचकों को वस्त्राभूषण से तृप्त कर दिये। रानी सहदेवी राजमहल में गयी। राजा ने बालक को गोद में लिया। उसे खिलाया, पालना झुलाया तथा प्रजा की पालना करना ऐसा कहा और उसका राजतिलक करके राजभवन से चल दिया। राजा के इस आचरण से नगर में हाहाकार मच गया।

रानी महिदेवी के दुःख का ठिकाना ही नहीं रहा। वह विलाप करने लगी कि किस प्रकार राजा के बिना उसका जीवन कैसे व्यतीत होगा। वह पति होते हुये भी अनाथ हो गयी।

जैसे तैसे करके रानी ने अपना मन लगाया। पुत्र का पालन होने लगा। आठ वर्ष का होने पर उसने सभी कलाओं को सीख लिया। कुछ दुष्ट राजाओं ने जब उसके राज्य में लूटमार प्रारम्भ की तो सुकौशल बालक होने पर भी लड़ने को तैयार हो गया। माता ने उसे बहुत मना किया। लेकिन सुकौसल ने एक नहीं मानी। उसने सभी मित्र राजाओं को पत्र लिखा। और सेना एकत्रित करके युद्ध के लिये प्रस्थान कर दिया। चतुरंगिनी सेना तैयार हो गयी घुड़सवार, रथ सवार, आदि योद्धा तैयार होकर चलने लगे। ढोल ढमाके बजने लगे। शंख फूंक दिया गया। एक रथ में स्वयं राजा बैठे। उसके साथ ही अन्य वाद्य यन्त्रों के साथ शहनाई बजने लगी।

राजा सुकौसल अपनी सेना के साथ सर्व प्रथम मथुरा नगरी पहुँचा। वहाँ हाहाकार मच गया। यमुनापुरी को नष्ट कर दिया गया। उसके पश्चात् अयोध्या नगरी आये। वहाँ से गंगा किनारे पर आकर पड़ाव डाला। गोपाचल के राजा से दंड लेकर छोड़ दिया गया। इसी तरह उज्जैन नगरी के मामले में भी दण्ड स्वरूप उसे अपने में मिला लिया। चारों ओर सुकौशल की जय जयकार होने लगी। कोई अपनी कन्या देकर, कोई हाथ पैर जोड़कर अपनी जान बचाने लगे। इसके पश्चात् गुजरात, सौराष्ट्र, कर्णाटक, लाडदेश, महाराष्ट्र, काशी देशों पर विजय प्राप्त की। विधाधरों के साथ उसने लंका पर विजय प्राप्त की।

सुकौसल का मेदपाट (मेवाड़ मुलतान, हस्तिनापुर, पोदनपुर, पाटलीपुत्र, आदि नगरों में जोरदार स्वागत हुआ। अष्टा पद (कैलाश) के चैत्यालयों की उसने वन्दना की इसके अतिरिक्त अंगदेश, बंगाल, मगध, पंचाल, राजगृही नगरी के राजाओं से दण्ड लेकर उन्हें छोड़ा गया। इस प्रकार चारों दिशाओं में अपूर्व विजय प्राप्त करके पद्मनी रानी से विवाह करके, हाथी, घोड़े, रत्नभण्डार एवं विशाल सेना के साथ सुकौसल ने नगर में प्रवेश किया। राजा के स्वागत के लिये स्थान-स्थान पर तोरण द्वार लगाये गये, मंगल गीत गाये गये। महिदेवी माता ने दौड़ करके पुत्र को गले लगाया।

राजा सुकौसल आनन्दपूर्वक राज्य करने लगे। तथा उसकी रानियां राजा को अपने विभिन्न हाव भाव शृंगार आदि से प्रसन्न रखने लगीं। एक-एक बरस व्यतीत होने लगा। सोलहवें वर्ष के आते ही माता ने अपने रक्षकों से

कहा कि यदि कोई साधु नगर में आता हुआ दिखलाई पड़े तो उसे नगर में प्रवेश नहीं मिलना चाहिए।

कुछ समय पश्चात् कीर्तिधवल मुनि उधर आये। नगर के बाहर ठहर गये। मुनि के शरीर पर घाव का चिह्न देखकर महिदेवी ने उसे पहिचान लिया। वह रोने लगी। सुकौसल राजा ने इस बात को सुन लिया। अपने पिता मुनि को आहार न मिलने की बात से उसे और भी दुःख हुआ। और वह भी दुखित मन से वहीं चला गया जहाँ मुनि बैठे हुए थे। सुकौसल ने वन्दना की तथा मुनि से उपदेश सुना। और स्वयं ने वैराग्य लेने की घोषणा कर दी। अपने प्रिय पुत्र के वैराग्य लेने के समाचार से उसकी माता को अत्यधिक पीड़ा एवं संताप हुआ और परिणामों की संक्लेशता के कारण वह मर कर व्याघ्रि योनि में उत्पन्न हुई।

सुकौसल मुनि तपस्या करने लगे। ग्रीष्म ऋतु में पहाड़ की शिला पर, वर्षा-ऋतु में गिरिकन्दरा में, शीत ऋतु में बर्फ पर उन्हें आत्मध्यान करने में बड़ी प्रसन्नता होती। बारह भावनाओं का वे निरन्तर मनन करते, आर्तध्यान एवं रौद्रध्यान का उन्होंने सर्वथा परित्याग कर दिया, अठारह दोषों से वे रहित होने लगे। चारों कषायों को छोड़ दिया, आठ प्रकार के मदों का त्याग कर दिया, बाईस प्रकार की परिषहों एवं पन्द्रह प्रकार के प्रमादों से वे मुक्त हो गये। इस प्रकार की अवस्था को प्राप्त होने पर जब वे एक दिन तपस्या में लीन थे वह व्याघ्री घूमती हुई उधर आ निकली वह भूखी थी इसलिये उसने तपस्या में लीन मुनि के एक-एक अंग को खा लिया। लेकिन मुनि का ध्यान भी सर्वोच्च था। वे जरा भी विचलित नहीं हुए और तेरहवें गुणस्थान में पहुँच गये। उन्हें कैवल्य हो गया और तत्काल मुक्ति पद को प्राप्त किया तथा जन्म मरण, सुख दुःख से सदा के लिये मुक्त हो गये।

व्याघ्रिनी ने शरीर को खाने के पश्चात् जब उसने अंगों के निशान देखे पांव के नीचे का कमल चिह्न देखा तो उसको पूर्व भव का भान हो आया। वह स्नेह बिह्वल होकर रोने लगी। एक मुनि के उपदेश से उसने जीव हिंसा न करने का निश्चय ले लिया और अनशन करके देह त्याग दिया और स्वर्ग प्राप्त किया।

सुकोसल राय चुपई

जिन मुख्य वाणी २ मनि धरेस ।
पाय लागी पूंजा रच्युं सदा सिद्धि समत्ति मागुं ।
अनुकंपा करु प्रह्म तणी देवाध्यदेव तह्म चलणि लागुं ।
कर जोडी सांगु कहि सदगुरु सेव करयोस ।
कुंयर सकोसल चुपही हुं संक्षेप भणयोस ॥ १ ॥

दूहा

मात भगवती मनसुं धरी सेवुं सोभित आदि ।
सांगु कहि मनमा हरि जिम सरिस सवि काम ॥ १ ॥
भूत भाव्य समनि वर्त्तमान सिद्ध साधु जेह नाम ।
अरिहंत अर्था भारीया तेह्नि करूं प्रणाम ॥ २ ॥

चुपई

अवनी दीप असंख्या जाण, ते मध्य जंबूदीप प्रमाण ।
भरत क्षेत्र जे नामि सुणु, तेह तणु महिमा अति घणु ॥ ३ ॥
तेह मध्य नयर अयोध्या एक, दान पुण्यनु लहि ववेक ।
धनवंत लोक दीसि अति धणा, अभय नहीं तिहां कोहीं तणा ॥ ४ ॥
चउरासी चहूटां अतिसार, सेरी हाट तणु नही पार ।
जोयण बार ते फिरतुं वसि, तिणि दीठि नर हीयडु हसि ॥ ५ ॥
घिरि घिरि बंध्यावरिके काण, धिरि घिरि राउत गुडि नीसाण ।
घिरि घिरि नारी करि सिणगार, धिरि धिरि बंदी जय जयकार ॥ ६ ॥
घिरि घिरि सोभण दीजि घणां, घिरि घिरि नहीं मोती नीमणा ।
घिरि घिरि रयण अमूलइक जेह, घिरि घिरि नहीं लक्ष्मी नु छेह ॥ ७ ॥
वावि सरोवर लागु वाद, ठामि ठामि दीसि प्रसाद ।
झालिर ढोलकंसालां गुडि, नित परमेसर पूजा चेडि ॥ ८ ॥
कविता कहि मुखि जिह्वा एक, नयर तणु किम कहुं विवेक ।
ए ऊपम किम जाइ कही, जोतां जमलपुरी को नहीं ॥ ९ ॥

दूहा

अजोध्या नयरी अति भली, उत्तम कहीइ ठाम ।
राज करि परिवार सु', कीर्त्ति धवल तस नाम ॥ १० ॥
तस घरि राणी रूयडी, रूपवंत सुवसेष ।
सहिदेवी नामि सुणु, भक्ति भरतार विवेक ॥ ११ ॥
एक दिवस मनि चींतवि, मन माहि आण्यं ध्यान ।
विषय तणां सुष परिहरी, साधि मुगति निधान ॥ १२ ॥

चुपई

राइ प्रधान ते आव्या सही । राज तणी सीषामणि कही ॥
घन योवननि जोषिम घणु' । सहिजि शरीर नही आपणु' ॥ १३ ॥
महो दीक्षा लेसु' वनि जाई । पंच महाव्रत पालु' सही ॥
मुगति तणा सुख जोवा काजि । तिणि कारणि हु मेलहुं राज ॥ १४ ॥
कहि प्रधान सुणु वीनती । पुत्र बिना किम थासु यती ॥
राज भार सुतनि संभालि । पछि महाव्रत निश्चल पालि ॥ १५ ॥
परधानि राजा भोलव्यु । नयर मांहि उछव नव नवु' ॥
सहिदेवी प्रभ घरिउ जिसि । राय मंदिर थी टाली तिसि ॥ १६ ॥
राइ कहि राणी किहां गई । ध्याघ विशेषि विह्वल थई ॥
इणि भोलावि राख्यु भूप । जु सुत जन्म्यु असंभम रूप ॥ १७ ॥
सहिदेवी सुत जन्म्यु जेह । दीधु' नाम सकोशल तेह ॥
आपणि मंदिरि छानां बिहि । उग्यु सूर न ढांक्यु रहि ॥ १८ ॥
कुं यण तणां अंबर जे वली । वनि लेई महिलीनी कली ॥
ऊजडि रान सरोवर जेह । तिहां जाई यस्त्र पखालि तेह ॥ १९ ॥
ते सरपालि ब्राह्मण अछि । तिणि वटंतर पूछ्यु पछि ॥
ऊजडि रानि आवि सा भणी । तेविमासण छि मुझ घणी ॥ २० ॥
दासि कहि सुणि ब्राह्मण बात । कुं'यर सकोशल पालि मात ॥
जु सुत जन्म्यु' जाणि राउ तु तप लेईनि वनमाहि जाइ ॥ २१ ॥
तिणि अवसरि ब्राह्मण वलवल्यु । लेई भेट राजानि मल्यु ॥
वीहारि सुत जन्म्यु' संसारि । वणि महोछवि दान दे वारि ॥ २२ ॥

नयर माहि गुडी उछली। रायतणी मनि पूगी रली ॥
बघा मणी ब्राह्मणनि दीध। जन्म लगि अयाच कीध ॥ २३ ॥
सहिदेवी राइ मंदिर गउ। आई कुंयर उचेलि लीउ।
खोलि लेई हुलरावि बाल। तुं करजे परजा प्रतिपाल ॥ २४ ॥
तिलक करी राजा संचरयु। हाहाकार नयर माहि थऊ ॥
राजभार लेई सुंप्यु बाल। लीधी दीख्या परजा पालि ॥ २५ ॥
आस्या बेस होती ब्रह्म तणी। ते छेदी वनि चाल्यु धणी ॥
सहिदेवी दुख आणि घणु। पूरब पुण्य नही ब्रह्म तणु ॥ २६ ॥

दूहा

सहिदेवी भरि घणुं, हीयडा आणिउ बाल।
रे रे कुंयर सलखणा, किम नीगमसुं काल ॥ २७ ॥
अंतेउरक थंभलुं, ऊभी मेल्ही आथि।
एकहू प्रीयडा कारणि, हूवि हूयां निरनाथ ॥ २८ ॥
संयम लेवा संचरया, जसु हरस सिरा राज।
महल्यु मोह मही तणु, मुगति तणां फल काजि ॥ २९ ॥
पवक मेई गलि बंधीउं, कुंयर विसारयु पारि।
आणिए कुल उजलुं, सुदा सुमारग वाटि ॥ ३० ॥

चुपई

सुकोसल की शिक्षा दीक्षा

पुत्र प्रशंसा माता करि। नह्वाल कढा हरषि उचरि।
आपणि आणंदि बेलि बाल। ते देवी वीसरयु भूपाल ॥ ३१ ॥
वरस आठनु थउ जेतलि। सर्व कला सीख्यु ते तलि।
सोवणनी परिभ्रमकि देह। सेवक सजन सहू नव नेह ॥ ३२ ॥
राय तणी छिल धुवीवेश। दुर्जन मिली विणासि देश।
राय आगिल को न कहि इसि। असन भणी हीउं छांडसि ॥ ३३ ॥
शस्त्र तणुए न लहि लाम। भूभ तणु छि दारुण कम्मं।
सेवक वात करि सवि मली। तितलि नृपकाने सांभली ॥ ३४ ॥

राइ सकोशल बोलि इसुं। पिसुण मली मुझ करसि किसुं।
मछरचड्यु बोलि तीणी बार। पिसुण सवे मनावुं हार ॥ ३५ ॥
इसुं बाली राजा संचर्यु। तब सहिदेवी बांहि धर्यु।
तुं लघुवेसी नाहुं बाल। कटक सभा किम मलसु ताल ॥ ३६ ॥
कुंयर कहितु संभलि मात। पिसुण तणी छि थोडी बात।
भाजि नयर देश लूटीइं। पूणी पिठी किम छूटीइ ॥ ३७ ॥

दूहा

राइ प्रधान तेडावीया, राय राणा सहू तेड।
दुर्जन प्राच्या ढूकडा, हवि न कीजि जेड ॥ ३८ ॥
चीठी चाली चिहुं दिशि, कहि सकोशल धीर।
मासा माणि मह तणी, ते रहीमपीसु नीर ॥ ३९ ॥
वाजित्री बहूतेडीया, टैवाडी रण भेर।
सबल हीउं राजा तणुं, जाणे अचल गिरि मेर ॥ ४० ॥
प्रस्थानुं परगट कर्युं, निपूठि दीधुं गाम।
राइ सकोशल इम कहि, फेडुं दुर्जन ठाम ॥ ४१ ॥

चुपइ

सुकोसल द्वारा विभिन्न देशों पर विजय

राजा सीधम साहाणी कही। सार तुरंगम छोडु सही।
कर डाक्या हाथा नील किसोर् गंगा जल बहू हुरीया छोड ॥ ४२ ॥
पवन वेगी पीलाछितुरी। पाणी पंथा महुंडा हूरी।
कलषा कबर कज्जल देह। हीसारव जिम गाजि मेह ॥ ४३ ॥
तुरी पलाणीय्या असवार। तेह तणु नवि लाभि पार ॥
मेगल माता ढलकि ढाल। दुर्ज्जन तणां सला विशाल ॥ ४४ ॥
ते उपरि नेजा लह लहि। अंबरि लागी वासहू कहि।
रथ जोध्या जेहवा गिरि माल। ते उपरि बिठा महिपाल ॥ ४५ ॥
ढोल ध्रसूके कंपि मही। सुसमिस संख बजावि सही।
रौद्रसाद घोरि नीसाण। कंपि कायर पडि पराण ॥ ४६ ॥
बंरंगा भेर झालिर झडझडि। सिंग प्रझंदि परवत पडि।
सरणाई बाजि वर सार। अवर वाजित्रनु न लहुं पार ॥ ४७ ॥

रथ खिसी राजा संचर्यु । पायक परिगह आगलि करयु ।
हीसारव नवि सुणी इसाद । जाणे सायर मेल्ही मरयाद ।। ४८ ।।

चढ्यां कटक जिम सायर पूर । बेहा रवि नवि सूझि सूर ।
विरीतणा छतारि काज । पूरीपुर थई आव्यु गाज ।। ४९ ।।

मथूरां नगरी पढीउ त्रास । जमणपुरी ने कीधु नास ।
संभा डांमनि संका घणी । आव्यु नयर अजोध्या धणी ।। ५० ।।

साधि भोम सकोसल वीर । कटक पड्यु गंगानि तीर ।
ते आगलि किहां नाठा टलि । दंड देई राजा नि मलि ।। ५१ ।।

राय तणि मनि पुहुती रली । कटक पहूतु जमणावली ।
गोपाचल नु राजा जेह । देई दंड नि मलीउ तेह ।। ५२ ।।
चालि कटक दोयंगम वाट । परवत माहि कीधा वाट ।
जे राजा उजेणी तणु । दंड लेई कीधु आपणु ।। ५३ ।।

दूहा

लक्ष पंचास सुभट तणुं, केकी बाहि पराण ।
कोटी भट कहीइ सदा, कवण सहि तेह बाण ।। ५४ ।।

एक कन्या देइ रूयडी, एके नामि सीस ।
एक रिधि आपि घणी, एक वसता राखि देश ।। ५५ ।।

साह्या सूर समुभडि, अवर न घालि घाउ ।
रख्या करि प्रजा तणी, सही सकोसल राउ ।। ५६ ।।

पुन्यि लक्ष्मी पामीइ, पुन्यि निरमल देह ।
पुण्यइ रिधि आवि, पुण्य तणा फल एह ।। ५७ ।।

चुपई

गूजर सोरठ प्राणि सीध । नर्मीयाडा बेदर विस कीध ।
भांजि तख्यर पाडि वाट । साध्युं कुंकणनि करणाट ।। ५८ ।।

लाड देश मरहट मलबार । साध्यां कन्नड तिणि वार ।
कुंडलपुर नु कहीइ ईस । आपी सावण नामि सीस ।। ५९ ।।

राय विद्याधर मलीयां बहू । चडी विमान लंकायूं सहू ।
मेघवाहन सुत लंका राइ । मेल्ही माणनि लागु पाइ ॥ ६० ॥
सार विसागी आगि भेट । समुद्र तणां साध्या सहू बेट ।
सूरा सम महि जिवाबीउ । हेल मात्र सायर साधीउ ॥ ६१ ॥
राइ करक नु कीधु बंध । सहूठ नाथ सवि साधा सिंध ।
मेवपाट गुगु मुलताण । पांडा वलि साध्यु खरसाण ॥ ६२ ॥
मरुस्थली वहुली बहु आण । गौड चौड़गा जगु वषाण ।
हथणाउर सुं साध्या देश । पोयणपुर कीधु परवेश ॥ ६३ ॥
विजयारथनुं करूं वखाण । वाहोलमु नगरी तह जाण ।
नगर नयर पर तिजे कोडि ॥ इतलां गाम कहां कर जोडि ॥ ६४ ॥
तिणि परवति विद्याधर चंग । राय तणि दलि दीठु रंग ।
ते प्रसंसा करि अति घणी । मन जनणी सकोसल तणी ॥ ६५ ॥
विजयारथ धु पाछु वलि । नासि देश दुनी खलभली ।
अष्टापद जई नाम्यु सीस । चैत्यालय वंधा जगदीस ॥ ६६ ॥
चम्पापुर नुं मल्यु नरेस । सहिजि साध्यु डाहल देस ।
चक्रवत्तिनी परिचालि वणुं । पावापुर कीधु माहणुं ॥ ६७ ॥
अंग बंग साध्यं बंगाल । मगध चीण सरिसुं पंचाल ।
राजगृही नगरी नृप मल्यु । ते दंड लेई रा पाछु बल्यु ॥ ६८ ॥

दूहा

राइ देश सव साधिया, उत्तर दिक्षण जाणि ।
पूरब पश्चिम साधिया । चिहुं दिशि वरती आणि ॥ ६९ ॥
लक्ष्मी आणी लक्ष गणी, धन कण कंचण सार ।
परणी अलीयल पद्मणी, हय गय रयण भंडार ॥ ७० ॥

विजय के पश्चात् नगर में प्रवेश

नगरि पधारया आपणि, सूरयवंशी राय ।
तालीयां तोरण बंधाइ, घरि घरि मंगलचार ॥ ७१ ॥
मंदिर आव्या मा तणि, अधिक सकोसल सूत्र ।
सहिदेवी साईए मलि, उंछलि लीधु पुत्र ॥ ७२ ॥

अथ ढाल हीडोलानी

मंदिर आव्या आपणि साहेलडी रे, घरि घरि मंगलाचार ।
सजन व लोक व परमणु सा० । रयण अमूलिक सार ॥ ७३ ॥
प्रसंसा जननी करि सा० । घन घन साहस धीर ।
देश सविमि साविया सा० । जीतु सकोसल वीर ॥ ७४ ॥
मेघाडंबर छत्रडु सा० । उपरि छत्र घराइ ।
सिंहासण सोहि भलु सा० । पात्र नचावि नु राइ ॥ ७५ ॥
प्रजा सहू सुख भोगवि सा० । दुखीय न दीसइ कोइ ।
देवाले पूजा रचि सा० । भगति करि सहू कोइ ॥ ७६ ॥
वाडी निरूपी रूयडी सा० । तरुवर मुहिर गंभीर ।
तिहां नि सोहि पद्मकली सा० । भरीयां क्षिति जल नीर ॥ ७७ ॥
करि सकोसल क्रीलणु सा० । तकलीय तणां रे पलूर ।
पूरवं पुणिइ पामीउ सा० । सहीम सकोसल सूर ॥ ७८ ॥

वस्तु

वसंत आयु वसंत आयु अतिहिं आणंद,
वनसपति वनि गहि गहि ससरसाद कोयल दीसि ।
रामारानी राइसु नवरग यौवन तरुणि वेसि ।
सामा सवि सोहामणी बंध विसूषा नारि ।
राय सकोसल खेलवा सुंदरि कीया शृंगार ॥ ॥ ७९ ॥

अथ ढाल

राती पगनी वाणही ए दीसि सु कुलोल ।
सुराता दंत दाडिम कली ए राता मुखह तंबोल । तु ॥ १ ॥ ८० ॥
काला काचू पहिरती ए, काली वेणी देवि तु ।
काली कस्तूरी महि महि ए, काली काजल रेष ॥ २ ॥ ८१ ॥
नीला चरणा पहिरती ए, दीसि नव नव रंग सु
नीला मणिनी मुंदडीए, नीला पान सुरंगसु ॥ ३ ॥ ८२ ॥
पीला सोवण सोहती ए, पीली चूडी बांहि तु ।
पीली भाति भलामलीए, पीला केर त्यांह तु ॥ ४ ॥ ८३ ॥

ऊजल भांभर भवकती ये ऊजल रयण अपार तु ।
ऊजल दरपण नरषती ए, ऊजल मोतीय हार तु ॥ ५ ॥ ८४ ॥
झीणि कटियंम कामिनी ए झीणी सुललित बाहि तु ।
झीणीय वेण भवावती मे भीरणा वस्त्र प्रमाण ॥ ६ ॥ ८५ ॥
चंपु मरूड मालवी ए सोहि सेवंत्री फूल तु ।
चालुवेल सोहामणी ए टोडर अति बहुमूल तु ॥ ७ ॥ ८६ ॥
कैसर तरीय कंबोलडी ए मलयागर महिकंत तु ।
छांटणडा प्रीयसु करि ए रायसु रातीय रमि तु ॥ ८ ॥ ८७ ॥
पुष्प लेई लेई ताडती ए मावणा स्वामीय अंगितु ।
सोलकला सिसि सोहती ए जेहवु पूनिम चंद तु ॥ ९ ॥ ८८ ॥
सांतेउर महिमा रीझ ए इन्द्राणी सरहि इन्द्र तु ।
क्रीडा करी घरि आवीया ए आविल नाचि रंभ तु ॥ १० ॥
चोया चंदन महि महि ए मृग मद मलिहि सुरंभतु ॥ ११ ॥८९ ॥

दूहा

नित नित इणी विधि रमि सुखब सभा महीपाल ।
सुख सागर माहि भीलतां जातु न जाणि काल ॥ १२ ॥ ९० ॥
पुन्यि कीरति उजली, पुन्यि जस भंडार ।
पुणिइ पिसुण पीडि नहीं, पुण्य भयवो सारहि सार ॥ १३ ॥ ९१ ॥
सहिदेवी इम उच्चरि, सांभिल तु प्रतीहार ।
यती आएं तुं आमतु, परिहरि नगर दूयार ॥ १४ ॥ ९२ ॥
धर्म कथा जु संभलि तु, मनि थसि विराग ।
सोंबे वरषे सकोसलु तु, करसि सवि त्याग ॥ १५ ॥ ९३ ॥

चुपई

आव्या मुनिवर आदर नही । राज भवनि रखवाला रहि ।
यती वारें वा कीधु कर्म्म । राइ न जाणि तेह नु मर्म ॥ १६ ॥ ९४ ॥
छठा मास लगि पारसि । आव्यु पोल लगि वारसि ।
सहिदेवी तस मांडी मीट । कीरत घर तस नयणे दीठ ॥ १७ ॥ ९५ ॥
सहिदेवी मनि मच्छर थउ । योवन भरि मुझ मेल्ही गउ ।
सेवकनि सीखामणि देइ । तु मुनिवर ज्या पोलि वेहु ॥ १८ ॥ ९६ ॥

चल्या मुनीश्वर वगडि गया । काउसग लेईनि वन माहि रह्या ।
देषी धाव ते वलधी थई । नयणे नीर भरि रूपा रही ।। १९ ।। ९७ ।।
तेह रोयंती राजा सुणी । भणि भूप रोइ सा भणी ।
धाव कहि उथारू बाल । आहारन पाम्यु ताहारू तात ।। २० ।। ९८ ।।
ते राणी तै सेवक एह । भगति भली परिकतरां जेह ।
सहू सवारथ आपा पणि । स्वामि न राष्यु धरि पारसि ।। २१ ।। ९९ ।।
हूं राजकरू वन सेवि बाप । एतां कमि कमि लागि पाप ।
महा[illegible] सनाथी तेह । विरह [illegible] [illegible] करेस ।। २२ ।। १०० ।।
इसु सुणी सांचरीउ राय । पगलां जो तु पालु जाइ ।
रुदन करि मनि विह्वल थउ । जिहां मुनिवर तिहां
राजा गउ ।। २३ ।। १०१ ।।
जई सकोसल नामि सीस । तह्मे कहि उपरि आणु रीस ।
काया कष्ट करूकां थणु । राजरिषि सहइ तह्म तणु ।। २४ ।। १०२ ।।
आहारि नही संसारि काज । तिणि कारणि मि छोड्यु राज ।
राज तणां छि कारण जेह । सांभलि बच्छ
सकोसल तेह ।। २५ ।। १०३ ।।
बडे-बडे राजे नृप हूत । ते परलोके गया बहूत ।
राज रिद्धि सहूई धरि रही । ते उभी मेल्हीथ्या सही ।। २६ ।। १०४ ।।
पुत्र कलित्र कहिनु परिवार । कहिना लक्ष्मी कहिनी नारि ।
अभ्र पटल जिम दीसि मेह । तिसु कहीइ संसार सनेह ।। २७ ।। १०५ ।।

दूहा

विषय तणां सुष रूयडां, सांभलि राय सुजाण ।
सुख हुइ सरस बस, दुःख ते मेर प्रमाण ।। २८ ।। १०६ ।।
विषया केरी बेलडी, जेह न छेदी जाणि ।
धारि फूली फल गागेभी, त्यारि दुख देसि निरवाण ।। २९ ।। १०७ ।।
जे नर नारी माहीया, सुणि न सकोसल भूप ।
ते नर कहीइ बापडो, पड्या संसारह कूप ।। ३० ।। १०८ ।।
विषय तणां सुष परिहरी, छंडेवा भवपार ।
चलणे लागु गुरु तणे, मागि संयम भार ।। ३१ ।। १०९ ।।

चुपई

सुकोसल के वैराग्य के कारण चिंता

तिहां मली सहू आव्यु' जिसि । पाला पुर अ ते ज्र तिसि ।
राय राणी सहू मागि मान । पायलागी वीनवि प्रधान ॥ ३२ ॥ ११० ॥
असन थकुरा न लहि हेत, बालपणि तप कर नु केल ।
हवडां रहु अजोध्यां माहि, वृद्धि पाणि तप लेयो राय ॥ ३३ ॥ १११ ॥
राई कहिमि छोडी आ साथ, पदक आल्यु' परधानह हाथ ।
गर्भाधान प्रसव जेहसि, ते राजा पृथ्वी पालसि ॥ ३४ ॥ ११२ ॥
मेह्ला सोवरण जडित अवास, मेहली घरि घोडानी ह्लास ।
मेह्ली छि अबला सवि सती, आपणा स्वामीनि
नरमती ॥ ३५ ॥ ११३ ॥
मेह्ला सजन सहू परिवार, मेह्ला मोती रयण भंडार ।
कर्मतणां बहू बंधन टलु', तिणि संयम लीधु उजलु' ॥ ३६ ॥ ११४ ॥
जे होता राणा राजीया, आव आगणे घरि सहू गया ।
केतला रह्या तप लेइ अबला सहू मलावी देइ ॥ ३७ ॥ ११५ ॥
एक भुरि एक करि विलाप, एक कहि हम लागु' पाप ।
हा हा करीनि कुटि हीउ, आज अ तेउर सुनु' थउ' ॥ ३८ ॥ ११६ ॥
एक अबला लाखि सिणगार, एके तोडी नव सर हार ।
चीर चोर एक आति वली, एके घरणि पडी
टलि वलि ॥ ३९ ॥ ११७ ॥
प्रजा सहू बुवा रव करि, वली वली राजा संभरि ।
भूष तिरस सवि निद्रा गई, मूनु' नयर ते दीसि सही ॥ ४० ॥ ११८ ॥
गुख चडी सहिदेवी जोइ, पुत्र मनावी लावि कोइ ।
नयर तणा जब आव्या लोक, माता मनि थराउ
सोक ॥ ४१ ॥ ११९ ॥

माता की दशा

पुत्र तणी जब तूटी आस, पडी प्रथ्वी गति न लहि सांस ।
पडी विचार अचेतन हुइ, नाषि वाय तब बिठी थई ॥ ४२ ॥ १२० ॥
मछर घडी मनि आणि रीस, लेई पाथरनि कुटि सीस ।
घरणी लोटि पाडि रीव, हीउं फाटी सनि आइ जीव ॥ ४३ ॥ १२१ ॥

दूहा

सूनां ते मन्दिर मालीयां, सूनु दीसि पाट ।
ए दुख किहि आगलि, कहुं सुन सति उठी वाट ॥ ४४ ॥ १२२ ॥
योवन भरि प्री परिहरी, मनि पुत्रि आप्यु छेह ।
रे रे पामर प्राणीया, अजीय न छोडि देह ॥ ४५ ॥ १२३ ॥
बुंदा रस बहुली कहि, ओढि ते वेणी दंड ।
मुख चडी झंपावीउं, सरीर करयु सत खंड ॥ ४६ ॥ १२४ ॥
आरति पामी अति घणी, आतम घात पमाड ।
मोह करयु मनि पुत्रनु, वाघणि थई वन माहि ॥ ४७ ॥ १२५ ॥

वस्तु

सूर सकोसल रमनि धरि भाव भगति विवेक ।
भली करि सेवि सगुदढ पाय मन माहि जाणी ।
धर्म दया गुण आगलु वण गुप्ति मन माहि आणी ।
च्यार कषाय मनि मेल्हु सु इंद्री दमन कर्योस ।
गर्भवास दुख दोहिलो तु मुगति तणां
फल ल्योस ॥ ४८ ॥ १२६ ॥

चुपई

सुकोसल की तपस्या

वर्षा कालि वृक्ष हेठलि रहि, मेह तणी धारा सहि ।
तरुयर पान पड्डि नीतरि, तिमतिम कर्म सवे निरजरि ॥ ४९ ॥ १२७ ॥
भाद्रवडा गिरि किंदर रहि, डांस मछर ना चटका सहि ।
झड मांझी वरसि विकराल, वाघ सिंघ डह डहि
डढाल ॥ ५० ॥ १२८ ॥

कासग धरी महाव्रत पाल, बेला चडि बलि मेवा काल
तरुयर जाणी अहि रूवडि, पग तले डाभसी जडि ॥ ५१ ॥ १२९ ॥
तप साध्यु नयलनि तीर, त्रिस्न विहूणा दीसि धीर ।
सीयालि थिर हीमजठरि, तिमतिम तप घणा आचरि ॥ ५२ ॥ १३० ॥
महा मास घणु जामिहीम, नीभण रहि न लोपि नीम ।
पडिटाढ तिहिं अचडज घलि, मेर तणी परिचितन
चलि ॥ ५३ ॥ १३१ ॥

सुकोसल राय चुपई

उन्हालि भल वाजि वाय, तडका ताप सहि मुनिराइ।
डुंगर बलि दव दाभि जेह, तरूवर छांह न सेवि तेह ॥ ५४ ॥ १३२ ॥
ताती वेलू तपती सिला, ते उपरि तप साधि भला।
माथा उपरि सूरज तपि, तिमर कर्म घणेरां खपि ॥ ५५ ॥ १३३ ॥
कासग लेई उभा निरधार, जाणे थंभ रोप्या तिणी चार।
देखि देह जिसां पांजरां, आठ कर्म कीधां जाजरां ॥ ५६ ॥ १३४ ॥
द्वादश अनुप्रेक्षा अणसरि, बार भेद तप सूधु करि।
आरत रौद्र तज्यु तिणी वार, आतम हूस लीउ
आधार ॥ ५७ ॥ १३५ ॥

पांचि इन्द्री ते परिहरि, सेव तावीस विषि निरजरि।
दोष अठारह अलगा जेह, पंच महाव्रत पालि तेह ॥ ५८ ॥ १३६ ॥
सहस अठारि पालि सील, मुगति तणां फल लेवा लील।
च्यार कषायनां छेद्यां मूल, तप करतां तृष्णा गई तूल ॥ ५९ ॥ १३७ ॥
ए टां मदनु भांजि मोह, जिणि निरदलीउ काम कठोर।
बावीसह परीसा सवि सहि- पनर प्रमाद न उभा रहि ॥ ६० ॥ १३८ ॥

वस्तु

व्याघ्री द्वारा सुकोसल का भक्षण

कर्म टालि कर्म टालि अतिहि सुजाण।
अटवी माहि एकलु मन माहि आतम ध्यान आणि।
परमानंद सेवि सदा जाणि धर्म विचार।
मुनिवर अतिसूयडा हवि लेसु भवपार ॥ ६१ ॥ १३९ ॥

दूहा

जे जननी मुनिवर तणी, सहिदेवी गी साल।
ते भूखी वन माहि भमि, वाघिण थइ विकराल ॥ ६२ ॥ १४० ॥
भूख तिरस बहु सेवती, सोधंती वन माहि।
दीठा मुनिवर रूयडा, मछर धरयु मन माहि ॥ ६३ ॥ १४१ ॥

राग विराडी

सहि गुर बोलि रे मन रगे डोलि रे
लीहिए आवि सूर सलक्षणा ए

तुझ तणी शामनी मुझ तणी कामनी आतम घातिए
बाघिण हुई ए ।। चउपाइ ।।
आतम घाति वाघिण थई रे आपण सरसी चालि ।
मछर चडीमलपंती आदि पूरव दुःखमनि सालि ।
एह तणा परिसि सहिस पराणा ताहारि कुण कहु तोलि ।
सीहिए आवि सूर सकोसल मुनिवर इणी परि
बोलि रे ।। १ ।। १४२ ।।
मल तुनि इम भणि कांई मधुरी वाणी गुरु सुणि ।
आपुण कायां इसु कीजिइए च्यारां मति माहि अवतरयु ।
चुरासी लष रडवडयु छेहलानि भवनुए जो खोलीउ रे ।। च. ।।
छेहला भवनु एह बोलीउ हवि आतम सत साधु ।
सद्गुरु केरी सेव करी निस्पातीन आराधु ।
सुध चिद्रूप जोया गति जाणु हरष घणु मनि मझ तणि ।
कासग करीनि अणसण लीधु तु गुरु परति इम भणि ।। २ ।। १४३ ।।
साह्मानि द्रिष्टि रे सीहिणा वाहिरे दीठा नि मुनिवर
विहि रूडआए ।
वाघिणी थरहरि तिणि अंबर थरहरि पीडा न जाणिए
तां परतणीए ।। च. ।।
एह पापणी पीडन जाणि मझलां एह नां कारणी ।
पुंछड लालीउंची उडि थर थर धूजि धरणी ।
हाहि रती ढाढा गरि लीधु मछर घणु मन माहि ।
ध्यान धरी गुरु आगलि ऊभा साहमी द्रष्टि चाहि ।। ३ ।। १४४ ।।
कांई बल भरीबुं किरे नपरतणा घामुं किरे ।
ध्यान न चुकि मुनिवरनि न तणु'र ।
मछर चडी मोडिरे घसी रथं धंधोलि रे पगतणे पडधाए
जो पीडा करिए ।। च. ।।
पुग तणी पडिघाह करीनि मुनिवरनु सिर चूरि ।
विकराली तिहां वलगिविरणि विसमेनहर वलूरि ।

ए परीसह सहिवा कुण समरथ भडपि तरूवर सूकि ।
सींह सार्दूल करी सिर खंडि वाघिण बल भरी बुंकि रे ॥ ४ ॥ १४५ ॥

वस्तु

डसणि चंडि डसणि चंडि अति अणि
रोस नखरि व डारि देह दहि उपघात करि अति अप्रमाणि ।
अंग छेदन शरीर भेदन भखर चडी तनु ताणि ।
रुहिर पीइ रणि रातडी सोखि सर्व सरीर ।
परीसह सहि वाघिण तणु ध्यान न चूकि वीर ॥ ५ ॥ १४६ ॥

दूहा

चुथि पाइ पड वडिनि, साधि सुकल सध्यान ।
गुणस्थानिक गयु तेरमि, उपनुं केवल ग्यान ॥ १ ॥ १४७ ॥
स चराचर व्यापी रह्यु, ग्यान करी नहु जेह ।
आपि आप जऊ लह्युं, भागु सर्व संदेह ॥ २ ॥ १४८ ॥
केवल ग्यानि नरखतां, व्यापि लोक अलोक ।
हाथ तणी परि लीहडी, तिम देखि त्रिलोक ॥ ३ ॥ १४९ ॥
बंधन काटयां करमनां, जन्म जरानां आन ।
पुण दुःख छूटु संसारनां, पामु मुगति निधान ॥ ४ ॥ १५० ॥

चुपई

जिहां आकार न दीसि सोई । कर्म तणा नवि बंधण होइ ।
जामण मरण तणां दुख नहीं, ते ठाम सकोसल पाम्यु सही ॥ ५ ॥ १५१ ॥
भूख तिरस नही निद्रा नाम, वर्ण न गंध सदा सुख ठाम ।
रूप न राग निरंजन जेह, पाम्यु ठाम सकोसल तेह ॥ ६ ॥ १५२ ॥
मुनिवर सरीर पड्युं तिहां सही, वाघिण भक्ष्य करि तिहां रही ।
तेह कलेवर करि आहार, अंगि चिह्न दीठां तिणि वार ॥ ७ ॥ १५३ ॥
पग तलि दीठुं पद्मज सार, करतलि दीठउ छत्र प्रकार ।
नयण सुरंगा ते नरखती, राती रेख दशनि झलकती ॥ ८ ॥ १५४ ॥

मंगि चिह्न दीठु ते तरिए, चित चमकी मनि आपणी ।
खोलि लेई देती पय पान, तिणि अवसरि
ते आवी सानि ॥ ६ ॥ १५३ ॥

ढाल कराजारामी

मुनि द्वारा व्याघ्रिणी को उपदेश

सहि गुरु बोल्या ते बार एवडुं अखत्र कांइ आदर्युं
चेतहूईडलारेन कसमल भरयु रे भंडार । ॥ १५६ ॥
आज सकोसल वध करयु रे । चेतहु ।
पूरव प्रीति संभारए ताहरी कूषि जो अवतर्यु । ॥ १५७ ॥
अवतर्यु कूखि, रुहिर सोखि पिड पोखितुं तणु ।
संसारि समपण कांई न जाणि दुख ए परिभव तणु । ॥ १५८ ॥
रीस गाढी प्राण काढी वपु धरयु वाघिणि तणु ।
सिहि गुरु बोल्या तिवारि ए बडु अखत्र कांइ आदरयु ॥
वाघिणि करि रे विलाप पूरव भव मनि चींतवि ॥ चे. ॥ १५६ ॥
मोह धरयु मन माहि ढोर तणी परि ढाढहि ॥ चे. ॥
ढाढहि ढोरज तणी पिरि दुख संभारि अति घणुं । ॥ १६० ॥
सीस कूटि जीभ त्रुटि उदर फाडि आपणुं ।
परजल्युं पंजर रोस पूरीहोइ दुख सालि सवि ।
वाघणि करि रे विलाप पूरव भव मनि
चींतवि ॥ चेत. ॥ २ ॥ १६१ ॥

सहि गुरुदेइ प्रतिबोध आप हत्या जीव मां करे ॥
कीधां छि करम कठोर, वलीरे नवां कांइ आदरि ॥ १६२ ॥
लागी छि सहि गुरु पाय, मुनिवर वाणी मनि धरि ॥

व्याघ्रिणी द्वारा पश्चाताप एवं अनशन लेना

सांभलीय मुनिवर तणीय वाणी रौद्र आरत परिहरि ।
क्रोध टाली क्षांति आणी भाव हीयडा सुंधरी । ॥ १६३ ॥
अणसण लीधुं काज सीधुं देवलोक ज अवतरी ।
सहि गुरुदेइ प्रतिबोध आप हत्या जीव मां करे ॥ ३ ॥ १६४ ॥
काउग लेई निरधार मुनिवर वन माहि तप करि ॥
अचल जसु जाणे मेर देहडी दमि नित आपणी ॥ १६५ ॥

ध्यान धरि महावीर तारन केहनि कोइ नहीं ।। चे. ।।
धीरज केहनि कोय धारि नहुल पांडिउं मयाडि । ।। १६६ ।।
सुकल ध्यान परवेशे कीधुं गुणस्थानिक ग्यु तेरमि ।
उपनुं केवल महा निरमल मुगति नारी ते वरि ।
कासम लेई निरधार मुनिवर वन माहि
तप करि ।। चे. ।। ४ ।। १६७ ।।

दूहा

मुनिवर बिहि मुगति गया, सहिदेवी स्वर्ग सार ।
लासु कहि इम उच्चरु, जिम पामु भवपार ।। १६८ ।।

।। इति श्री सकोसल राय चुपई समाप्तः ।।

ब्रह्म गुणकीर्त्ति

ब्रह्म जिनदास के सात शिष्य थे। जिनके नाम हैं ब्रह्म मनोहर, ब्रह्म मल्लिदास, ब्रह्म गुणदास, ब्रह्म नेमिदास, ब्रह्म धर्मदास, ब्रह्म शान्तिदास एवं ब्रह्म गुणकीर्त्ति। ये सातों ही शिष्य साहित्य सेवी थे तथा ब्रह्म जिनदास को साहित्य निर्माण में सहयोग दिया करते थे। ब्रह्म जिनदास ने अपनी विभिन्न कृतियों में अपने शिष्यों के नामों का उल्लेख किया है। लेकिन उन्होंने अपनी कृतियों में जिस प्रकार दूसरे शिष्यों के नामों का उल्लेख किया है उस प्रकार ब्रह्म गुणकीर्त्ति का उल्लेख नहीं मिलता है। इससे पता चलता है कि ब्रह्म गुणकीर्त्ति उनके कनिष्ठतम शिष्य थे और उनके सम्पर्क में भी बहुत बाद में आये थे। यदि ऐसा नहीं होता तो ब्रह्म जिनदास उनका उल्लेख किये बिना नहीं रहते।

गुणकीर्त्ति नाम के एक भट्टारक भी हो गये हैं जिनका पट्टाभिषेक संवत् १६३२ में डूंगरपुर में बड़े उत्साह से हुआ था।[1] लेकिन हमारे नायक गुणकीर्त्ति तो ब्रह्मचारी थे। उनके गार्हस्थ्य एवं साधु जीवन के सम्बन्ध में नामोल्लेख के अतिरिक्त अधिक कुछ नहीं मिलता। कवि ने अपनी एक मात्र कृति में चित्तौड़गढ़ के नाम का दो बार उल्लेख किया है इससे यह तो अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि का सम्बन्ध चित्तौड़गढ़ से रहा होगा लेकिन उनका शेष जीवन किस प्रकार व्यतीत हुआ इसकी अभी खोज होना शेष है।

ब्रह्म गुणकीर्त्ति की एक मात्र कृति "रामसीतारास" अभी तक हमारे देखने में आयी है। इसके अतिरिक्त कवि की और कितनी कृतियां हैं इसके सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता। लेकिन रामसीतारास को देखते हुए इनकी और भी कृतियां कहीं मिलनी चाहिये। ब्रह्म जिनदास ने संवत् १५०८ में विशालकाय रामरास की रचना की थी। अपने गुरु की विशाल कृति होने पर भी गुणकीर्त्ति के द्वारा एक लघु रास काव्य के रूप में राम के जीवन पर कृति लिखने का अर्थ यही हो सकता है कि पाठकों को संक्षिप्त रूप में राम कथा को जानने की इच्छा रही होगी।

---

1. राजस्थान के जैन सन्त—व्यक्तित्व एवं कृतित्व—पृष्ठ १४०

प्रस्तुत रामसीतारास की पाण्डुलिपि उसी गुटके में संग्रहीत है जिसमें भट्टारक सोमकीर्त्ति, ब्र० यशोधर एवं अन्य कवियों के पाठ हैं। मुझे तो ऐसा लगता जैसे इस गुटके के पाठों का संकलन मैंने ही अपने उपयोग के लिये कभी किये थे। प्रस्तुत पञ्चम भाग के अधिकांश पाठ इसी गुटके में से लिये गये हैं।

रामसीतारास एक खण्ड काव्य है जिसमें राम और सीता के जन्म से लेकर लंका विजय के पश्चात् अयोध्या प्रवेश एवं राज्याभिषेक तक की घटनाओं का संक्षिप्त वर्णन किया गया है। इसमें १२ ढालें हैं जो ११ अध्यायों का काम करती है। जैन कवियों ने प्राचीन काल में इसी परम्परा को निभाया था। महाकवि ब्र० जिनदास ने भी अपने रास काव्यों को ढालों में ही विभक्त किया है। यह गीतात्मक काव्य है जिसको ढालों को गा करके पाठकों को सुनाया जाता था।

समय—रामसीतारास का रचना काल तो मिलता नहीं जिससे स्पष्ट रूप से किसी तथ्य पर पहुँचा जा सके लेकिन ब्र० जिनदास का शिष्य होने के कारण तथा गुटके के अन्य पाठों के समय निर्णय के देखते हुये प्रस्तुत रास को संवत् १५४० के आस पास की रचना होनी चाहिये। ब्र० जिनदास का संवत् १५२० तक का समय माना गया है। प्रस्तुत कृति उनकी मृत्यु के पश्चात् निबद्ध होने के कारण उक्त रचना काल मानना उचित रहेगा। इसी तरह हम इस कृति के आधार पर ब्र० गुणकीर्त्ति का समय भी संवत् १४९० से १५५० तक का निर्धारित कर सकते हैं।

भाषा—रास की भाषा राजस्थानी है यद्यपि गुजरात के किसी प्रदेश में इसकी रचना होने के कारण इस पर गुजराती शैली का प्रभाव भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है लेकिन क्रिया पदों एवं अन्य शब्दों को देखने से यह तो निश्चित ही है कि कवि को राजस्थानी भाषा से अधिक लगाव था। विचारीउ (विचारकर) मांडीड (मांडे) आवीयाए (आये) यानकी (जानकी) घणी (बहुत) पाणी (हाथ) आपणा (अपना) घालीइ (डालना) जाणुए, बोलए, लीजिए जैसे क्रिया पदों एवं अन्य शब्दों का प्रयोग हुआ है।

सामाजिक स्थिति—रामसीतारास छोटी-सी राम कथा है। कथा कहने के अतिरिक्त कवि को अन्य बातों को जोड़ने की अधिक आवश्यकता भी नहीं थी उनके बिना वर्णन के भी जीवन कथा को कहा जा सकता था लेकिन कवि ने जहाँ भी ऐसा कोई प्रसंग आया उसके वर्णन में कवि ने सामाजिकता को अवश्य स्पर्श किया है। प्रस्तुत रास में रामसीता के विवाह के वर्णन में सामाजिक रीति-रिवाजों का वर्णन मिलता है। राम के विवाह के अवसर पर तोरण द्वार बांधे गये थे।

मोतियों की बांदरवाल लटकायी गयी। सोने के कलश रखे गये। गंधर्व एवं किन्नर जाति के देवों ने गीत गाये। सुन्दर स्त्रियों ने लकाछन। किया। तोरण द्वार पर आने पर खूब नाच गान किये गये। सास ने द्वाराप्रेक्षण किया। जब चंवरी के मध्य आये तो सौभाग्यवती स्त्रियों ने बधावा गाया। लग्न बेला में पंडितों ने मंत्र पढ़े। हथलेवा किया गया। खूब दान दिया गया।

उस समय वृद्धावस्था आते ही अथवा अपनी सन्तान का विवाह होने के पश्चात् संयम लेने की प्रथा थी। संयम लेने के लिये सभी प्रकार के सांसारिक ऋणों से मुक्ति ली जाती थी। कर्ज चुकाया जाता था। दशरथ को भी अपने दिये हुये वचनों को निभाने के लिये केंगामती की दोनों बातों को मानना पड़ा।

नगरों का उल्लेख—राम लक्ष्मण एवं सीता जिस मार्ग से दक्षिण में पहुंचे थे उसी प्रसंग में कवि ने कुछ नगरों का नामोल्लेख किया है। ऐसे नगरों में चित्तुडगढ (चित्तौड़) नालछिपाटण, अरुणग्राम, बंशथल के नाम उल्लेखनीय है।

वर्णन की दृष्टि से अध्ययन—कवि ने रामकथा की लोकप्रियता, जन-सामान्य में उसके प्रति सहज अनुराग, एवं अपनी काव्य प्रतिभा को प्रस्तुत करने के लिये रामसीतारास की रचना की थी। महाकवि तुलसी के सैकड़ों वर्ष पूर्व जैन कवियों ने रामकथा पर जिस प्रकार प्रबन्ध काव्य एवं खण्ड काव्य लिखे यह सब उनकी विशेषता है। जैन समाज में रामकथा की जितनी लोकप्रियता रही उसमें महाकवि स्वयम्भु, पुष्पदन्त एवं रविषेणाचार्य का प्रमुख योगदान रहा है। तुलसी ने जब रामायण लिखी थी उसके पहिले ही जैन कवियों ने छोटे-बड़े बीसों राम काव्य अथवा रास लिख दिये थे। ब्र० गुणकीर्ति का रामकाव्य भी इसी श्रेणी का है जिसका संक्षिप्त अध्ययन निम्न प्रकार है—

काव्य का प्रारम्भ—कवि ने सर्व प्रथम जिन स्तुति की है जो ऋषभदेव से लेकर मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकर स्तवन के साथ समाप्त होती है। दशरथ साकेता नगरी के राजा थे अपराजिता उनकी महारानी थी। इसके अतिरिक्त सुमित्रा, सुभमती एवं केंगामती ये तीन और रानियां थी चारों रानियों के एक-एक पुत्र हुये जो राम, लक्ष्मण, शत्रुघ्न एवं भरत कहलाये। जनक मथुरा के राजा थे। विदेहा उसकी रानी थी। सीता उसकी पुत्री थी जिसको वैदेही भी कहा जाता था। सीता बहुत सुन्दर थी। कवि ने उनकी सुन्दरता का निम्न प्रकार वर्णन किया है—

ते गुणह ग्राम मन्दिर काम रूपधाम रसालती।
चन्द्रवदना मृगह नयना सघन घन तन पातली।

ते हाव भाव विलास विच मलय लावण्य कापिका ।
गौरवर्ण सुवर्ण छाया सुगंध परिमल कूपिका ।।७।।

सीता का स्वयंवर रचा गया । अनेक राजा महाराजाओं ने इसमें भाग लिया । धनुष चढ़ाने की शर्त थी लेकिन धनुष चढ़ाने में जब अन्य राजाओं को सफलता नहीं मिली तो दशरथ ने अपने पुत्र राम को धनुष चढ़ाने के लिये कहा । राम ने पिता की आज्ञा को शिरोधार्य करके आनन्दित मन से धनुष चढ़ा दिया ।

आपणा पिता तणी वाणी सुणवि स्वामी अणंदीया ।
सिंहू जिम सिंहासण मेल्हीय सकल सुर नर वंदीया ।।
वंदीय इन्द्र ते कनकधारे रत्न वरिषा करि घणी ।
जय जयारव साधु कलिरव कंधा नव तिहुयण धणी ।।१०।।

× × ×

निरमलह वेदीय उपरि चडि करि वाम हस्ति धनुलीउ ।
दक्षिण हस्ति गुण धरिवि रामिवि जावसं चडावीयो ।
टणकर नादि दह दिसि, गंगन मंडल टलटल्या ।
पाताल शेषनि असुर सुर नर, दैत्य दाणव सलवल्या ।।१७।।

राम द्वारा धनुष चढ़ाते ही सागर हिलोरे लेने लगा, सुमेरु पर्वत कांपने लगा, कितने ही तालाब फूट गये, देवता जय-जयकार करने लगे, सुगन्धित वायु बहने लगी एवं भ्रमर झंकार करने लगे ।

जयो जयो श्रीराम देवहू कंठि वरमाला वालीयि ।

स्वयम्वर में वरमाला द्वारा पति स्वीकार करने के पश्चात् राम और सीता का विवाह हुआ । लग्न मंडप तैयार किया गया । तोरण द्वार बांधा गया । मोतियों की बांदरवाल लटकायी गयी । स्वर्ण कलश रखे गये । स्वयं राम भी विभिन्न अलंकारों से सज्जित किये गये । गंधर्व एवं किन्नर गा रहे थे । उनके सिर पर छत्र सुशोभित थे । चंवर ढोले जा रहे थे तथा सौभाग्यवती स्त्रियां मंगल गीत गा रही थीं तथा लवाछना ले रही थी ।

राम जब तोरण द्वार पर आये तो सब आनन्दित हो गये । उनकी सास ने द्वारा प्रेक्षण किया और जब लगन मंडप में आये तो सौभाग्यवती स्त्रियों ने बधावा

गाया। पंडितों ने लगन पढ़ा तथा शुभ बेला में विवाह सम्पन्न हुआ। हथलेवा हुआ। चारों ओर जय जयकार के मध्य राम और सीता का विवाह सम्पन्न हुआ।

विदेहा अक्षाणु लीद्धुं, सासू वर पुंखणुं कीधु।
वर चवरी माहि आव्या साहासणीयि बषाव्या।
पंडित बोलए मंत्र, लगन तणा आव्या मंत्र।
सुभ बेला तिहां जोइ, वरति मगल सोई ॥६॥

शुभ योग सघलुउ भागु, सुलगनि हथोलु लागु।
सब हुउ जय जयकार, परणीय यानकी नार ॥७॥

राम के विवाह के पश्चात् लक्ष्मण, भरत एवं शत्रुघ्न इन तीनों भाइयों का भी सुन्दर कन्याओं से विवाह हो गया। वे सब मथुरा से अयोध्या लौट आये और राज्य सुख भोगने लगे। कुछ समय पश्चात् दशरथ ने वैराग्य लेने का विचार किया। उन्होंने अपने इस विचार को सभी को बता दिया। मन्त्री परिषद् की मीटिंग बुलाकर राम को राज्य तिलक देने की घोषणा कर दी। दशरथ की इस घोषणा से चारों ओर प्रसन्नता छा गयी। लेकिन भरत की माता केगामती को राम का राजा बनना अच्छा नहीं लगा। उसे चिन्ता हुई कि राम के राजा बनते ही भरत को उनकी आज्ञा माननी पड़ेगी। पहिले तो उसने भी दीक्षा लेने की सोची लेकिन बाद में भरत के प्रति मोह के कारण उसने अपना विचार बदल दिया। और राज्य सभा में जाकर दीक्षा लेने के पहिले दिये हुए दो वचनों की पूर्ति करने के लिये दशरथ से कहा।

षणुयन मागु देव भरत नरेसर पामयो।
दिउ मुझ पुत्रनि राज, तो स्वामी संयम लीयो ॥१२॥

जब दशरथ ने केगामती के प्रस्ताव सुने तो तत्काल भरत को राज्य देने का निश्चय किया गया। वैराग्य लेने के पूर्व सांसारिक ऋणों से मुक्ति पाना आवश्यक माना जाता है क्योंकि जिसके कर्ज होता है उसे दीक्षा नहीं दी जाती।

वाचारण पिता तणुं पुत्र उतारि इस जाणीइ।
केगामती का पुत्र भरतह राज देवा आणीइ।
राम स्वामी मुगति गामी पिता भाव ते जाणीउ।
भरत कुमरह बांहि साही रामि राज सभा माहि आणीउ ॥

भरत को राज्य देने के पश्चात् राम पिता के चरण छूकर तथा धनुषबाण हाथ में लेकर अपने भाई लक्ष्मण एवं पत्नी सीता के साथ बन को चल दिये।

राम पिता पगि वेग लागो, धनुषबाण ते करि लीउ।
बंधव लक्ष्मण सहित स्वामी सीता साथि वनवास भउ ॥

राम वनवास में चले तो गये लेकिन अयोध्या उनके बिना सूनी हो गयी। चारों ओर हाहाकार मच गया। दशरथ तो कितनी ही बार मूच्छित हुए लेकिन दोष किसको दिया जावे। कर्मों की लीला विचित्र होती है—

राम गये वनवास कर्मना अषर त्रिम टलिए।
दोस न दीजि काम मूरछा आवी धरणी परयुए।

राम का बन गमन—

अयोध्या से राम मेवाड देश में आये और चित्तौडगढ़ गये। वहां से वे तीनों नलकक्षपुर मालखिरा(टण) आये। विन्ध्याचल पर्वत को पार करने के पश्चात् रामपुरी बनाने का यश प्राप्त किया। फिर सोमापुर आये और तप एवं ध्यान करते हुए कुलभूषण एवं देशभूषण पर आये हुए उपसर्ग को दूर किया। इसके पश्चात् दण्डकवन में आकर रहने लगे। और वहां भी दो चारण ऋद्धिधारी मुनियों का उपसर्ग दूर किया।

दण्डक वन में राम सीता और लक्ष्मण रहने लगे। यहां भरत का शासन नहीं था इसलिये एक अलग ही नगर बसाने की योजना के लिये राम ने लक्ष्मण से कहा। लक्ष्मण उपयुक्त भूमि देखने के लिये निर्भय होकर घूमने लगे। शंबुक ने लक्ष्मण का मार्ग रोकना चाहा। इस संघर्ष में लक्ष्मण द्वारा शंबुक मारा गया। खरदूषण की स्त्री चन्द्रनखा अपने पुत्र की देखभाल के लिये वहां जब आयी और अपने पुत्र को मरा हुआ देखा तो रोने लगी। जब चन्द्रनखा ने राम सीता तथा लक्ष्मण को देखा तो उसे अत्यधिक क्रोध आया और वह पाताल लोक में जाकर खरदूषण से जाकर शिकायत की। खरदूषण चौदह हजार विद्याधरों के साथ वहीं आये जहां राम लक्ष्मण थे। लेकिन अकेले लक्ष्मण के सामने वे कोई नहीं टिक सके। इसके पश्चात् चन्द्रनखा रावण के पास गयी और उसने राम लक्ष्मण के बारे में पूरा वृत्तान्त कहा। चन्द्रनखा की बात सुनकर रावण के हृदय में राम लक्ष्मण के प्रति विद्रोह हो गया और वह पुष्पोत्तर विमान द्वारा वहां पहुंचा। उसने सीता को देखा और उसका हरण करना चाहा। वहां उसने मायामयी लक्ष्मण का रूप बनाया और वन में सिंहनाद किया।

राम छला किम हुकं ए रामा, लक्षण विद्या समरी माया
बामाभेद जणाव्यो

माया रूपि लक्ष्मण कीयो, मिघनाद तीणी तब दीयो
लीयो धनुषते बाण

रावण ने सीता का हरण कर लिया और उसे अशोक वाटिका में रहने के लिये छोड़ दिया। सीता बहुत रोयी चिल्लायी हाथ पैर पीटे लेकिन उसकी एक भी नहीं चली।

विलाप करंती दुःख धरंती राम नाम उच्चार ए
स्वामी लक्ष्मण वीर विचक्षण गृह संबर टालए ॥ १ ॥

कवि ने सीता के विलाप एवं रावण के साथ वार्तालाप का बहुत अच्छा किया है। इसी तरह राम के विलाप का कवि ने जो वर्णन किया है उसमें दर्द है, वियोग जन्य वेदना है।

सीता सीता साद करता कीधां कर्म ते सहए।
तरवरह डुंगर परति श्रीराम सीता सुधिज पूछए ॥८॥

राम सरोवर के पास जाकर चकोर से पूछने लगे कि उसकी सीता कहां गयी। क्या कोई दुष्ट उसे ले गया अथवा किसी व्याघ्र ने उसका भक्षण कर लिया अथवा किसी सिंह के मुख में पड़ गयी।

पूछए सुधि श्री राम नरेश्वर सरोवर कांठि ऊभु रही रे।
कहु न चकोर तम्हे चक्रवाकी दीठी सीतल मुझ सहीरे।
सहीय सीता हरण हुवो कवण पापी लेइ गयो।
कि व्याघ्री आवी भक्षण कीध तेह तणो कटिण हीयो।
सार्दूल सकल कि सिंघ स्वापद सती सीता मुखि पडी।
वनह मज्झिम कोई मेहली कवण पुछुती यम घडी ॥६॥

धीरे धीरे सीता हरण का रहस्य खुलने लगा। सुग्रीव ने सीता हरण की पूरी बात राम को बता दी। साथ ही रावण की शक्ति एवं वैभव का भी उसने अच्छा वर्णन कर दिया जिससे राम लक्ष्मण को भी उसकी शक्ति का पता चल जावे। लेकिन राम को तो यह भी पता नहीं था कि लंका किस दिशा में है। जब सुग्रीव ने राम की बात सुनी तो वह भी हंसने लगे

राम पूछि कहु न सुग्रीव लंका कवण दिखाई बलि ।

सुग्रीव तणी मम वाणी राम तणी सुण विहसि ॥१४॥

इसके पश्चात् राम ने सुग्रीव की सहायता से युद्ध की बड़ी तैयारी की । सर्व प्रथम हनुमान को अपनी मुद्रिका देकर लंका भेजा और उसमें अभूतपूर्व सफलता लाने के पश्चात् राम ने हनुमान को पूरा सम्मान किया ।

रामचंद्र दीउ मान धन धन जनम वन तम्ह पिता ।

धनि जननी कवि भानु । रा० । रामचंद्र दीउ मान ॥

लंका में अपनी पूरी सेना उतारने के बाद भी राम ने रावण से सीता को वापिस लौटाने का प्रस्ताव किया ।

सीता दीजि प्रीति कीजि राम राउ भावीइ ।

अन्त में राम रावण के मध्य घमासान युद्ध हुआ । रावण नें चक्र चलाया जो लक्ष्मण के हाथ में आया । वही चक्र लक्ष्मण द्वारा चलाया गया जिससे रावण का अन्त हुआ ।

युद्ध में विजय के पश्चात् लंका में चारों ओर राम की जय जयकार होने लगी । मंगल गीत गाये जाने लगे । गरीबों को खूब दान दिया गया । चारों ओर स्वर्ण ही मानों बरसने लगा । इतने में ही नारद ऋषि ने आकर राम से माता के दुःख एवं पुत्र वियोग का वृतान्त कहा । नारद की बात सुनकर तत्काल अयोध्या जाने का निर्णय लिया गया । और पूरे दल के साथ राम लक्ष्मण एवं सीता वहाँ से चल पड़े । राम की सेना बल का कवि ने निम्न प्रकार वर्णन किया है—

नव कोडी तोरंगमा तु पायदल कोडि पंचास तु,

रथ लक्ष बैयालीस तु, गज तेतला गुण रास तु ।

सोल सहस मुगट बंध तु, सेवा करि राम पाय तु ।

लच्छ तणी संख्या नहीं तु विभीषण आमिल जाइ तु ।

राम ने सपरिवार अयोध्या में प्रवेश किया । उस समय अयोध्या को खूब सजाया गया चारों ओर तोरण द्वार बनाये गये । बाजे बजने लगे तथा जय जयकार के नारों से आकाश गूंज उठा । कवि ने नगर प्रवेश एवं आगे राज्याभिषेक का अच्छा वर्णन किया है ।

वाजि दुंदुभि नाद तु, साद सोहामणाए ।

मवन भेरीय झणकार तु, ढोल नीसाण घणाए ।

कुसम वरसिय अकास तु, पंच शबद नादिए ।
मलपत मयमल कुंभि तु, झरइ सुगंध मदए ।।३।।

राज्याभिषेक का एक वर्णन निम्न प्रकार है—

कलस कनकतणा आणि तु, नीर कने नीरे भरिए ।
पंच रतन तणो चुक तु, पुरोउ मनि रलीए ।
रयण मणिमय थापितु, सिंघासण तिहां वली ए ।

राम ने राज्याभिषेक के पश्चात् लक्ष्मण को युवराज पद, शत्रुघ्न को मदचिन मथुरा का राज्य, बिभीषन को लंका का राज्य दिया । हनुमान, नल नील आदि को अलग-अलग उपहार देकर सम्मानित किया ।

कवि ने रास समाप्ति पर अपनी लघुता प्रगट करते हुये लिखा है कि रामायण ग्रंथ का कोई पार नहीं पा सकता । वह तो स्वयं ही मतिहीन है इसलिये राम कथा को अति संक्षेप में वर्णन किया है ।

ए रामायण ग्रंथ तु एह नु पार नहीं ए
हु मानव मतिहीण तु, संखेपि गीत कही ए
विद्वांस जे नर होउ तु, विस्तार ते करिए
ए राम भास सुणोवि तु, सुभ परि वयाभरा ए ।।३४।।

राम को ग्रंथ प्रशस्ति में कवि ने अपना कोई विशेष परिचय नहीं दिया है केवल अपने गुरु ब्रह्म जिनदास एवं बाई धनश्री एवं ज्ञानदास जिनके आग्रह से प्रस्तुत रास की रचना की गयी थी का नामोल्लेख किया गया है—

श्री ब्रह्मचार जिणदास तु, परसाद तेह तणोए ।
मनवांछित फल होइ तु, बोलीइ किस्युं घणुए ।।३६।।
गुणकीरति कृत रास तु बिस्तस मनि रलीए
बाई धन श्री ज्ञानदास तु, पुण्यमती निरमलीए ।
गावउ रली रंगि रास तु, पावउ रिद्धि वृद्धिए ।
मनवांछित फल होइ तु, संपजि नवनिधिए ।

प्रस्तुत रास में १२ ढालें हैं जिनकी पद्य संख्या निम्न प्रकार है—

प्रथम ढाल	११
दूसरी ,,	१५

तीसरी ,,	१४
चौथी ,,	१४
पञ्चम ,,	११
षष्ठम ,,	१८
सप्तम ,,	२४
अष्टम ,,	१६
नवम ,,	८
दशम ,,	११
ग्यारहवीं ,,	१५
बारहवीं ,,	३८
	२०७

इस प्रकार १२ ढालों में २०७ पद्य हैं जो अलग-अलग भास रागों में निबद्ध हैं।

रामसीतारास

ॐ नमः

प्रथमह प्रणमीइ श्रीय जिन गणहर सारदा
सुंदरि नियगुरूए ।
तस पाय मनिधरी प्रणवुं विविध,
परिसमय सिद्धांतवरी एक चित्त ।

त्रोटक—एक चित्त दृढ़ करी वंदु, भवीयण आदि जिणवर नंदुये ।
अजित संभव धर्मह, धामतणो जिन कंदए ।
अभयनंदन सुमति पद्मप्रभ जिन सुपासु ए ।
चन्द्रप्रभह पुष्पदंतह, सीतल श्री गुणवासुए ।१।
गुणहतणा स्वामिश्रेयांस जिणवर ।
वासुपूज्य भवहर विमलनाथ ।
अनंत धरमनाथ शांति कुंथ अरनाथ ।
मल्लिनाथ जिन मुनिसोव्रत नाथ ।

त्रो०—मुनिहिसोव्रत स्वामि वारि आठमु
हलि उपनु तस तणुय वंश हरि ।
हरवसुं सुरज वंसि नीपनु ।
साकेता नयरीय राय दसरथ ।
अपराजिता तस भामिनी ।
लक्षमीय सादृस रूप निरुपम ।
चन्द्रवदना कामिनी ।।२।।
चन्द्रवदनी सती सुमित्राए ।
सुप्रभाति बीजी राणी केगामती सुप्रजा सुभी ।
च्यारि राणी रायो घरे करि ।
राजइणी परे दशरथ पुण्यकरि जयवंताए ।।त्रो०।।
जयवंत जय जुगिसार सुंदर रामचन्द्र वखाणीइ ।

लक्ष्मीधर अर भरत सत्रुघन च्यारि पुत्र घर जाणीइ ।
कुलकमल दिनकर सकल सुरनर सुखानंदन सदामणी ।
देव धरमह गुरु परीक्षण रामचन्द्रह क्षतिपती ॥३॥
क्षतिपती मथुराहां नयर नरेसर जनक भूचर वर राज करीए,
तस तणी पटराणी सतीय सिरोमणी,
विदेहा सुंदरी एह गुण धरिए ।
त्रोटक–गुणह तणी जे धारिणि वाणी सारद सामिण आणीइ ।
तेह कुखिसहि सुंदरि चानकीय वखाणीइ ।
कलाज्ञान विज्ञान संपन रूप यूयन अवतरिये ।
जनक तणी पुत्री सीता महादेवी धरमभार तिणी धरये ॥४॥
धरयो धरम भार जनक नरेसर देखीय रूप मनि चमकीउ ए ॥
हुकारिया परधान रायां दीउ बहुमान सयल मली तिहां विचारीउए ।

सीता स्वयंवर

त्रोटक–विचारीउ तिहां सयल भूपति सीता सयंवर मांडीइ ।
अवर राजा दुष्ट दुरजन तेह तणां मन खांडीइ
नयर बाहिर वन निरोपम मेडा मंडप घलावीया ।
कंकोतरी चिहुं दिस मोकली राय तन सयल भूप बोलावीया ॥५॥
आवीया सर्वमली वंशु सुभ महाबली ।
पगघरा मंडलीक आवीयाए ।
मलीयाए च्यारि वंस छत्रीस ए ।
कुलईम तिहां रामनरेश र आवीयाए ॥भोट०॥
आवीया चिहुंदिस चपटचुरी कनक केरी तिहां घडी ।
रयण माणिक उर मोतीहल हीरा हीर कण घणी जडी ।
झगमगति दह दिसि सुद्र सरासन चवरी उपरि रुपीया ।
वारवणीयर तणुं तेजह तिहा तीणे धनुषे लोपीया ॥६॥
लोपीया शशिकर वज्रावर्त्त परिकर,
सागरावर्त्त वर धनुयनाम ।
सयल शृंगार करी जानकी सुंदरी,
मयनि उपनि परिसुणह नाम ॥

सीता का सौन्दर्य

ते सुगह धाम मंदिर काम रूपधाम रसातली ।
चंद्रवदना मृगहनयना सघनघन तन पातली ।
ते हाव भाव विलास विभ्रम लावण्य वापिका ।
गौर वर्ण सुवर्ण छाया सुगंध परिमल कूपिका ।।७।।
कूपिका सुघतणी सहीयर ए साथि घणी,
वरमाला लेई पाणी आवीयाए ।
वेदीय उपरि चढावीय,
दशरिपरि यानकी सुंदरि आवीयाए ।।भो०।।
भावीया जन मन सयल सुंदर देखि राय चमकीया ।
रंभराणी कि तिलोत्तम अंब पदमनि समकीया ।
एह पंच सर वर समरभेदीय अनंग रंग बहु उपना ।
चित्त चपल चलंति चलव सकल मनोभाव नीपना ।।८।।

स्वयंवर का वर्णन

नीपना जय जय पंच शब्द
घन कलिरव करि जन मन उलास ।
बोलए विरद घनां अनेक रायां तणा ।
प्रताप सोहामणा गुण निवास ।।भो०।।
गुणनिवास सहास बोलवि, सयल भूपति जोवए ।
अहंकार धरी करी एक उठवे धनुष काढि जाई सोवए ।
एक राय उपाय चीतवि धनुष साहामु जोवए ।
सबल बल अभिमान सुंदर सकल अहंकार खोवए ।।६।।
खोवए पुरुषारथ तव राजा दशरथ ।
सबहुं परिसमरथ इम भणिए ।
उठउ तम्हे राम देवगुरुकरि तह्म सेव,
धनुष चढावु देव आपणुं ए ।।भो०।।

राम द्वारा धनुष चढ़ाना

आपणा पिता तणी वाणी सुणि स्वामि आणंदीया ।
सिंह जिम सिंहासण मेल्हीय सकल सुर नर वंदीया ।
वंदीया इन्द्र ते कनक धारे रत्नवरिषा करि घणी ।
जय जयारव साधु कलि रव ऊच्या तब तिहुयण धणी ॥१०॥
तिहुं चंड तणु राय लागो पिता तणे पाय ।
धनुष साहामु जाय मतिबलुए ।
मलपतु पग मेल्हि वरणि टोडर बोलि ।
नहीं कोए राम तोलि निरमलोए ॥ओ०॥
निरमलह वेदीय उपरि चढि करि वाम हस्ति धनु लीउ ।
दक्षिण हस्ति गुणधरवि रामिवि ज्ञावर्त्त चडावीयो ।
टणकार नादि दह दिसि गगन मंडल टलटल्या ।
पाताल कंपि असुर सुर नर देव दाणव खलबल्या ॥११॥
खलभल्या सायर अष्ट कुल गिरवर कंपीया भूधर तिहां घणाए ।
तडाय फूटां सही थरहरी एह मही जय सही तिहां कही
देवतणाए ॥ओ०॥
देव शब्द सुणवि सुंदर सार शृंगार सीतावती ।
करहि माला कुसुम परिमल भ्रमर रण झणझणरती ।
हंस गमणीय सुभस रमणीय सीता तिवर आणीए ।
जयो जयो श्रीराम देवह कंठि वरमाला धालीय ॥१२॥
धालीइ वरमाला सोहए कमला ।
राम पासे निरमला ऊभी रहीए ।
सयल विद्याधर सुर नर नर वर ।
कुसुम आंजलि भरी तिहां सहीए ।
कुशमांजलि सवि भरवि,
राजा राम स्वामि वधाविया ।

जनकभूपति विदेहा राणी साथि वेष वर मन भावीया।
रयण मणिमय जडित घन घन करीय परीयल भारगी।
मोतिय थालि भराविं सामू मनह रंगि वधावती ॥१३॥ (१)
मास मध्यात्व मोडनी
वधावए सविमली निरमली श्राविल नावए पावरे,
धन धन सीतल बहु वर धन धन रामनीं मातरे ॥१॥
धन धन एह कुल निरमल सोहए सूरज वंस रे।
पुरुषोत्तम एह उपनो नीपनो रघुराज हंस रे ॥२॥
सुधन धन राय दशरथ समरथ कौशल्या माए रे।
रामदेव सेवा सुर करि समरतां पातिक जाइ रे ॥३॥
तब जनक राउ हरषीउ नरखीउ चहूवर चंग रे।
राजाधिन तव अरचीउ, रचीउए मंडप रंग रे ॥४॥

विवाह वर्णन

थांभ कनक केरी घडीयाए, जडीयाए रयणमिमा तीरे।
बेल भरी परवाल डेवगा, घणा हीरलायोति रे ॥५॥
कुसम माला तिहां लह लहे महमहि परिमल वास रे।
रिमझिम करि भमरला समरला गावए भास रे ॥६॥
तोरणि कोरणी अतिघणी, मोतीडे बन्दरवाल रे।
मण्डप द्वार समारीया समीचित नाटक साल रे ॥ ७ ॥
पट्ट कूल बहु आणीय आणीय मण्डप छाइ रे ॥
राय कनक जनकह तिहां सीतल वितान उभाइ रे ॥८॥
थांभला परतिय निरमली सोहजली लह लहे धज रे।
सोना कलश माणिक जडी शोभाघडी झबकए तेज रे ॥९॥
छत्रीस कुलीय अति भली क्षत्रि वंसते आव्या रे।
इन्द्र फणींद सुचंदह मानसि श्रीराम भाव्या रे ॥ १०॥
सयल शृङ्गार ते अङ्गहि रंगहि रचीया श्रीराम रे।

गन्धर्व किन्नर सुंदर गावए ते गुण ग्राम रे ।। ११ ।।
मयमल मेगल चतिबल उपरि ढालि ग्रम्बाडी रे ।
चिहुँ दिशाइ घज मेल्हीय हेलीय जोवये नारी रे ।।१२।।
गय वर चर आरोहीया सोहीया जिम जगनाथ रे ।
पञ्च शबद घण वाजए गाजए अम्बर नाद रे ।।१३।।
शिरि गिरी छत्र सोहामणा भामणां बोलए चंग रे ।
चमर ढलि गंगा जयणीय जीवन जाणुए गंग रे ।।१४।।
धवल देइ वर कामणी भामणी लुछणां कीजइ रे ।
राम नाम संभरंतहां जनमतणा फल लीजिए रे ।।१५।। (२)

भास भी हीं ।।

तीसरी ढाल

विवाह उत्सव

तीजइ फल बहुसंग । एक नाचि नव नवरंग ।
कनक धारा मेघ बरसि, देखीय दशरथ हरषि ।
एक आनन्द रस दावि, वीजीय भावना भावि ।।१।।
छाणाकर सहामु तै चढए, बहु परिस लोका पढए ।
सुललित ते गुणग्राम उत्तर चालि श्रीराम ।।२।।
बाजां बहु परिवाजिनादि निसाण गाजि
ढोल तिबल भेरी भावा, ताल कंसाल सोहावा ।।३।।
तिम तिम वाजि मृदंग, तिवलीय साद सुरंग ।
इम वर तोरण आव्या, सजन मनि बहु भाव्या ।।३।।

तोरण एवं विवाह मण्डप का वर्णन

विदेहा अक्षणु लीधु, सासू वर पुंखणु कीधु ।
वर चवरी माहि आव्या, सीहासणीयि बसाव्या ।।४।।
पण्डित बोलए मन्त्र, लगन तणा आवया यन्त्र ।
सुभ वेला तिहां जोइ, वरति मंगल सोइ ।।६।।
सब योग सघलऊ भाग, सुलगनि हथोलु लागु ।
तब हुइ जय जयकार, परणीय जानकी नार ।।७।।

सजन दान मान दीधा, जनम तणां फल लीधा।
माइ बाप हीउ आणंद, वाध्यु धर्मनु कंद ॥८॥
इणि परि लक्षमण वीर, प्रतिबल साहस धीर।
बीजु धनुष जे चंग, सागरावर्त्त उत्तंग ॥९॥
धनुष तीणि ते चडावी, अठार किन्या तिहां आवी।
परणीउ लक्षमण चंग, होउ तिहां अभिनवु रंग ॥१०॥
जनक रायां तणो भाई, कनक राजा ते सरवाई।
तेह तणी बेटी सुचंग, परणीउ भरत उत्तंग ॥११॥
अनेक रायां तणी धीय, रूपतणा छइजे लीह।
शत्रुघ्न कुंवर ते सार, ते परण्यु गुणधार ॥१२॥
च्यारि कुंवरि सोहाव्या, परणीय अजोध्या आव्या।
दशरथ राय जयवन्त, भोगवि राज महंत ॥१३॥
धरम तणु ए विस्तार, पूजि जिणवर सार।
पालिए विविध आचार, दान देई भवसार ॥१४॥ (३)

चोथी ढाल

भास वणजारानी— वणजारा रे सूरज वंशीय राय इणी।
परिराज करि घणुं वणजारा रे ॥४०॥
दशरथ हुवो विराग राज लेवा मुनिवर तणु।
मुनिवर तणुं राज लेवा भावना भावि घणुं।
मुणवि सजन सयल परिवार अन्तःपुररेइ घणुं।

राम का राजतिलक करने की घोषणा

हुंकारीया सवि भूप मन्त्री राज देवा कारणि।
राम नाम कुमार तेडउ राजा दशरथ इम भणि॥
आण्या कलस भरि नीर सिंहासन तिहां थापउं।
केगामती तव जाणि राम तणी लोभ व्यापीउ।

केगामती द्वारा विचार

व्यापीउ मनि मान अतिघणु सजन आगिलि।
किम कहुं कंम पापि सुत तणाए पराभव हुं किम सहुं।
कौसल्या नंदन जगत्र जीवन राम राजा थायसे।

सुभ तणु पुत्र हवि भरत नर वर, सेहतणों मान लोपसे ।।२।।वण०।।
लोपसि सुभतणी आण तु जीवीनि किसुं करूं ।
हवि जाउं कंत पासि पति साथि संयम धरूं ।
संयम लीति तप कीति पुत्र मोह न छूटए ।
काम क्रोधह मान माया सहित करम न खूटए ।
आठ आगला बीस मूल गुण चलण पालण दोहिलुं ।
एह वेगंबर तणों मारग तप नहीं ए सोहिलुं ।।३।।विण०।।
दोहलुं अति घोर कंत मनावा आइस्यूं ।
नहीं मानिसु ... हु भरतह ... ।
राज पालुं दुःख टालुं सुख भोगवुं अतिघणां ।
सवी समरथ सयल भूपति सेवक होसि पुत्र तणां ।
राम मंत्री सेहूत लक्ष्मण चमर ढाल सत्रुघन ।
इणी गिरि पुत्र पवित्र अह्मतणो राज भोगवसिए सु मन।४।।व०।।
मनह तणि रे विचार केगामता उठी मनि रली ।
राजसभाह मझारि ततक्षण आवी निरमली ।

केगामती का राज्य सभा में आकर अपनी बात कहना

निरमलीय कर कमल जोडवि कांत ने पाये लागये ।
हुलहुलिय नयणां जीवन छंडि आपणु वर मांगये ।
रविवंश कमल विकाशह णीयर सुणु स्वामी वीनतडी ।
वैरागि गतु सुगति मातु अह्मे किहि तणी बापडी ।।५।।णव०।।
बापडी नारि विचारि कंत विहूणी किसुं करि ।
शिशियर विण जिम राति तिम प्रभु विण जीव किम धरिवि
किम जीव धरीइ राजकरीइं कंत विहूणी कामिनी ।
वेलडी तरवरह पाखि भान, पाखि कमलणी ।
मातड विवेक विहूणी सील विहूणी भामिनी ।
आचार पाखि कीरति स्वामी तिम कंत विहूणी कामिनी ।।६।।व०।
कंत विहूणी नारि चारित्र पाखि मुनिवरो ।

दया करुहवि नाथ संयम भावना परिहरु ।।
नवि तप कीजि राज कीजि सौख्य भोगवु अतिघणां ।
च्यारि राणी च्यार पुत्रह सयल बहूयर नेह तणां ।
सुकमाल कोमल अङ्गरंगिहि सयन आसन पाल्हीउ ।
पच इन्द्रीय विषय सयल ते अष्ट भोग मन लालीउ ।।७।।अग०।।
लालीइ मन अति घोर तपलिधि किमवि सहुइ ।।
दीक्षा दुरधर जाणि षडग धार ते इम जोउ ।।
खडग धारा उपरि चालि अञ्जन भरी छिउ वरीऊ ।
जल वस्त्रह मांहि पयसी कवण नीसरि घइ हूरी ।
मयमत्त मय गलकाननि साहु किम मलपतु मावए ।
दयदीप्यमान कि अग्नि ज्वाला सांइ देवा को भावए ।।८।।वस्तु०।।
भावीइ मिण मिदांत कवण चावि लोहमि चणा ।।
मेर कारागलि तोलि निम चारित्रह भार घणा ।
चारित्र भारते भावि दोहिलु पंच महाव्रत पालतां ।
ठामि पाणी भात परिघरि दोहिलु मोह टालतां ।
वीर बिहूण अंग स्वामी दंशमशक भूंचि घणा ।
भूमिसयन बावीस परीसह कष्ट सहिसु किम तणा ।।९।।वण०।।

दशरथ का उत्तर

कष्ट साध्यइ तप जाणि सुण नारि ।
तपह बिना मुगति हि नहीं ।।
हवि तप तपसुं जप जपसुं कर्म्म षपिसुं अति घणा ।।
संसार सागर जन्म मरणह दुःख टालिसुं जग तणां ।।
सपल धन यौवन जाणीय सकल कुटम्ब ते कारिमुं ।।
जिनवाणीय जाणीय सयल सम्पत्ति छांडीय
तप ब्रह्म धारिसु ।।१०।।व०।।
नारि कैमामती जाणि कंत वयण सुणाति करी ।
रुदन करिए अपार मनमाहि कपट माया धरी ।
कपट माया वयण बोलि स्वामी संयम लेईसो ।
ब्रह्म तणी भंनारि प्रसन हुया तेहवर ब्रह्म देयसो ।

केगामती द्वारा दो वचनों की मांग

सांभलीय दशरथ भणि कामिणी वर मांगु तुह्मे आपणो ।
संयम विना नवहु वांछित जे मांगु ते देउं घणो ।।११।।७०।।
घणुय न मांगु देव भरत नरेसर थापयो ।।
दिउ मुझ पुत्रनि राज तो स्वामी संयम लीयो ।।
संयम लेवा राय दशरथ नारि बोलविति घरि ।
जो भरत कारणि राज देवा राजा सव आरंभ करि ।
तेडावीया श्रीराम लक्ष्मण अरु शत्रुघ्न आवीया ।
पिता तणे पगि वेगि लागीय दशरथ पुत्र मन भावीया ।१२।।७१।
पिताय भणि सुणु राम अनुक्रमि राजए तह्मतणु ।।
तपलेवा हुं वि जाउ ऋण उतारू मह्म तणु ।।
वाचा रख पिता तणु पुत्र उतारि इम जाणीइ ।
केगामती का पुत्र भरतह राजदेवा जाणीइ ।
रामस्वामी मुगति गामी पिता भाव ते जाणीउ ।
भरत कुमरह बांहि साही रामि राजसभा माहि आणीउ ।।१३।।७०।
राजपालु तह्मे सार बाप तणो ऋण टालीइ ।।
अह्मे य जाउं वन वास बाप तणो बोल पालीइ ।
पालीइ परमाण वाचा भरत राजा थपीउ ।
केगामती को लोक माहि सयल अपजस व्यापीउ ।
राम पिता पगि वेग लागी अनुग्र काण ते करि लीउ ।
बंधव लक्षमण सहित स्वामी सीता साथि वनवास गउ ।।१४ (४)

पांचवीं ढाल

भास नरेसूवानी

राम के वियोग में विलाप

रामस्वामी वनवास गया रे नरे सूवालो करिए।
विलाप जननीस शोकि अति घणु ए ।।
उदय आव्यु मुझ पाप दशरथ राजा बीनवि ए ।।
अनुक्रम लोप्युमि सार सूरज वंसनु राजीउ ए ।।
राम गयो वनवास कर्मना अक्षर किम टलिए ।।

दोस न दीजि कास मूरछा आवी धरणीपडयुए ।। न. ।।
तब हुवो हाहाकार शीतल उपचारह करीए ।। न. ।।
चेत वाल्यु तत्र सार तब दशरथ राइ चामीउ ए ।। न. ।।
संयम लेवा काजि गुरह स्वामी तब दीनव्याए ।। न. ।।
ते थाप्यु मुनिराज संयम पालि निरमलोए ।। न. ।।
तप जप ध्यान करेइ मोह मच्छर सब चुरीयाए ।। न. ।।
महीयल सुजस लेइ राम उपदेशि राज करिए ।। न. ।।
भरत सत्रुघन मानि छत्र सिंहासन पट हस्तीए ।। न. ।।
ते नवि भोगवि जाणि रामनाम तणी रूयडीए ।। न. ।।
वरति मारग अपार कौशल देशनु राजीउए ।। न. ।।
पालि अनुक्रम सार जिहां राम तिहां अजोध्याए ।। न. ।।
सोहला रायजि रानि पुण्यवंत जीवकारणिए ।। न. ।।
पगि पगि नवह निधान राम स्वामी क्रीला करिए ।। न. ।
ऊलंधि वनह अपार हास विनोद कतूहलिए ।। न. ।।

वनवास

वन क्रीडा करि सार सकल भूषण करी मंडियाए ।। न. ।।
नर भय सिंह समान भेदपाट देश थोईउए ।।न. ।।
चीत्रकगढ ते जाणि ।। ११ ।। ५ ।।

षष्टम ढाल

भास सही की—चीत्रकगढ जोई केरी पछि आव्या देशा पुरी ।
वर्जकरण राजा महलावीउए । सहीए ।। १ ।।
नरलछि पाटणि आवीया, कल्याणमाला मनि भाविया ।
वालक्षेण राजा तिहां थापीउ रे । सहीए ।। २ ।।
वीन्ध्याचल परवत कही, लक्ष भील जीता सही ।
अरूणग्रामि आव्या ते निरमलाए । सहीए ।। ३ ।।
कवि तब दीठो अति घणा, कपि लह बाह्य तेह तणा ।
नागकुमार देव ते आवीयोए । सहीए ।। ४ ।।
अज्ज थाइ वहिर कीधु, नाग भरी नाम दीधु ।

रामपुरी बसावी जस लीधुए। सहीए॥ ५॥
च्यार महीना राम राषीया, भगति गुण तिणि दाषीया।
तिहां थका स्वामी ते वली चालीयाए। सहीए॥ ६॥
वनमाला लक्षमण वरी, पछि आव्या क्षेमापुरी।
पंचसांम तिहा लक्षमण साहीए।सहीए॥ ७॥
क्षेमश्री वरी निरमली, लक्षमणां कुंवरि मनि रली।
तेह तिहां मूकी निकली चालियाए। सहीए॥ ८॥
वंशथल नयर वली, वांसी परवत तेह तली।
परवत मस्तिकि मुनिवर रूयडाए। सहीए॥ ६॥

कुलभूषण देशभूषण मुनियों पर उपसर्ग दूर करना

कुलभूषण देशभूषण, तप जप ध्यान विचक्षण।
चारित्र पात्र ते चिंतामणीए। सहीए॥ १०॥
तेह तणां उपसर्ग टालीया, ध्यान फले कर्म्म चालीया।
केवलज्ञान स्वामी ते पामीयाए। सहीए॥ ११॥
सुर नर सवे तिहां आवीया, राम लक्षमण मनि भाविया।
धन धन पुरषोत्तम तह्मे अवतरयाए। सहीए॥ १२॥
तिहां रहीया महीना च्यारि, सहूराय भगति करि।
पछइए दंडकवन माहि पैठाए। सहीए॥ १३॥
करणरवा आवी नदी, भोजन तणी सामग्रि कीधी।

चारण ऋद्धिधारी मुनियों को आहार देना

चारण मुनिवर दान दीधुए। सहीए॥ १४॥
पंचाचर्य तिहां पामी, हरष वदन श्री रामस्वामी।
जटा पंषी आवी तिहां मल्युए। सहीए॥ १५॥
तिहां पंषी आधी कही, करणरवा नदी सही।
तव राम स्वामी ते तिहां गया ए। सहीए॥ १६॥
तिहा परवत एक निरमलो, गुफा सहीत ते सुह भलो।
तिहां च्यारे जणे स्थिति कीधीए। सहीए॥ १७॥

चुमासु तिहां लीधु, धरम ध्यान निरमल कीधु ।
दीपोछव तिहां वली नीपनुए । सहीए ।। १८ ।। ६ ।।

सप्तम ढाल
भास तीन चुवीसीनी

राम रायां रंग भरि भणि वीर, लक्ष्मण बांधव साहस धीर ।
सुणउ वचन मुझ सार ।। १ ।।
एह वन माहि रह्या सुजाण,
इहां नहीं भरतहनी आण जाणी करु विचार ।। २ ।।
नगर एक इहां नीपजावु भूमि,
सकुन निमत्त पारखी तुम्हें कीजि काज अमूल ।। ३ ।।
नगर एक इहां नीपजावु,
ऊंवऊ लक्षमण बार मलावु लुभावो मनि रंग ।। ४ ।।
पछि आणीवा तु जाए, कौसल्या सुमित्रा माए ।
राज सूरजवंसि कीजिए ।। ५ ।।
रामवयण सुण्या तव सार, लक्षमण उठ्यु तिहां सुविचार ।
धनुष बाण करि लीधु ।। ६ ।।
भूमि जोवा लक्षमण चंग, हैडउ उतरउ मनि रंग ।
नरभय जैसु सिंघ ।। ७ ।।
एकसमस हीडइ वनमाहि, निरमल जल सूरो मुंड चाहि ।
माहि परिमल पूर ।। ८ ।।
परिमल लागु लक्षमण चालि, मयमत्त मयगलनी परिमालि ।
बोलि अलि कुल चंग ।। ९ ।।
आगलि आतां तेज प्रकास्यो, बार दिनकर जिम संकास ।
भासि सूरज हास ।। १० ।।
झगमग तेज वह दिगिदीपि, सूरजहास षडग अरि जीपि ।
दीपि अमूत भार ।। ११ ।।
एक छेह लागु गयणंगणि, मुष्टि भावी वषस्तलि रंगणि ।
लक्षमण चाह्यु हाथ ।। १२ ।।
लक्षमण देव षडग करि साह्यु, हरष वदन हुवो ऊरमाह्यो ।

चाहूशी वंसह जाल ॥ १३ ॥
वंश जाल छेदतां तूटउ, शंबूक तणो माथु ते त्रूटउ ।
रूठउ जमत कालि ॥ १४ ॥

दण्डक वन में शंबूक का वध

सिर तूटी धरणी तब पडीउ, लखमण भणिए पाति अडीउ ।
पडीउए अपराध ॥ १५ ॥
खडग लेई रामनि दीधु, भाजि नमस्कार तिणि कीधु ।
लीधु प्राछित चंग ॥ १६ ॥
खरदूषण नी नारि विशाल, चन्द्रनखा आनी गुणमाल ।
करवा पुत्र संभाल ॥ १७ ॥
पुत्र पडयु दीठउ तीणी [illegible], चंद्रनखा करि [illegible] ।
पति आव्यु पाप ॥ १८ ॥
लक्षमण मारि मारि बोलंती, तीणी गुफाइ आवीय तुरंती ।
ऊभी रही रोवंती ॥ १९ ॥
राम लक्षमणनि सीता देखी, इन्द्राणी मन माहि पेखी ।
कोप भयो ते काल ॥ २० ॥

चन्द्रनखा का खरदूषण के पास जाना

पुत्र मारियो इणि इम जाणी, चाली पाताल लंका भणी ।
बिठी तेह विमान ॥ २१ ॥
खरदूषण आगिल कही बात, पुत्र तणु हूवो ते घात ।
दुःख पामीहुं नाथ ॥ २२ ॥
चोदस सहस्र विद्याधर साथे, सगलं सुभट उठ्या एक हाथे ।
चाल्या जिहां छि राम ॥ २३ ॥
राम भणि लक्षमण देव उठउ, विद्याधर जिकमसे रूठउ ।
छूटो लक्षमण वीर ॥ २४ ॥
धनुष बाण लीधो साहस, करि सोहि ते सूरय हाथि ।
साहांमु चाल्यु वीर ॥ २५ ॥

रौद्र झूझ हुउ सविचार, एकलडो लक्षमण कुमार ।
कलहू न लागि पार ॥ २६ ॥
तैणि अवसरि तै चंद्रनखा, ततक्षण आईय सुहुतीय लंका ।
शंका रहित ते नारि ॥ २७ ॥
रावण बंधवनि तीणी कहीयो, महीयल रूप मर्यादा रहीउ ।
सहीए लक्ष्मी होइ ॥ २८ ॥

रावण द्वारा सीता हरण

रावण मनि उपनु नेह, नयणडे देषु नारिज तेह ।
जेहनु रूप विशाल ॥ २९ ॥
एकलडो तस लागो ध्यान, पुष्पोत्तर रचीयोय विमान ।
मा नमई रूप दीठि ॥ ३० ॥
राम छता किम हरू ए रामा, ततक्षण विद्या समरी नामा ।
वामा भेद जणाव्यो ॥ ३१ ॥
माया रूपि लक्षमण कीयो, सिंघनाद तीणी तब दीधो ।
लीयो धनुष ते बाण ॥ ३२ ॥
रामि सीतल गुफाइं मूकी, रक्षण मूक्यो जटायु पक्षी ।
सुखी चाल्यो वीर ॥ ३३ ॥
रावण गुफा माहि ते पिठो, सीतल हरी विमानज बिठो ।
दीठो ते जटा पक्षी ॥ ३४ ॥

अष्टम ढाल

भास श्री ह्री श्रावकाचारमी

रावण सीता रण ते कीउ, लीयो संग्राम विहंगमि रे ।
झकपि मारीय मुगट लिणि, पाड्यो ताड्यो स्रवणें
संगमि रे ॥ चट।वी०॥
संग्रामि ताड्यो धरणि पाड्यो करा करा करि घणी ।
संतीय सीता मनिहि चिंता उपनी पक्षी तणी ।

सीता का विलाप

विलाप करंती दुःख भरंती राम नाम उच्चारए ।

धामि लक्षमण वीर विचक्षरा एह संकट टाल ए ।।१।।
टालु रे संकट मुझ तणां हो देवर सहोदर भावु विद्याधर रे ।
सानधि सयल सुरासुर कीधो लीधो यस सीयल तणो रे ।।च०।।
सीयल संपन [illegible]
तात जनक कनक काका वेगि विहिला पावयो ।
राम राम राम नाम क्षरिए क्षणि वलीन वाचा मूकए ।
वैहु कुल कमल उद्योत किरिणी सतीय सत्त न चूकए ।।२।।
सतीय सीता गयणंगणि रावण लालचि करय अपारन रे ।
पंचबाण घणु जीवन भेद्यु वेध्यु तह्न कपि सारन रे ।।च०।।
सार सुंदरि सुणवि वाणीय प्रान सुखी तिहां हुई ।
सुण रे दुष्ट कुनेष्ट रवानर तेह नारि लक्षरा जुई ।
हुं सतीय बहुमति संत कंतह राम मुझ तणो आतमा ।
अन्य नर जे सयल तिहूयण मुझनि ते बंधव समा ।।३।।
बंधव समा मुझ सुरपति इंद्रह धरणेन्द्र रवि शशिकर रे ।
सती सुं आलिम करे स हो मूरखा पुरषाम मेल्हं
कुसुम सर रे ।।च०।।
कुशम सर सु भाव परिहरि सील सबल सती तणो ।
जु ध्रुव लोटि बज्र फूटि मूरगा हुइ गगनिनि घणो ।
सौधर्म्म स्वर्ग जो ठाम छांडि मेर मंदिर चाल ए ।
इम जाणी विवेक आणी एह वयण इम बोलए ।।४।।
बोल्या बोल जु केवलि चूकि मूकि जल जलधेरवरे ।
अष्ट कुल गिरि पायाल जो पिसि तुहि नवि सीयल
हुं परिहरु रे ।।च०।।
परिहरीय सील जे नरह नारि संसार माहि घणुं भम्या ।
परनारि लंपट दुष्ट कुष्ट ते सातमि नरगि रम्या ।
जिहां छेदन भेदन तलीय तापन सूलारोपण अति घनां ।
तेत्रीस सागर आयु पामी दुःख भोगवि तिहां तणां ।।५।।
सतीय सीता तणी वाणी सांभली रावण राणु होउ दुःखी रे ।

चिंतातुर थो लंका पैठो प्रमोदावन माहि मूकी रे ।।
मूकीय प्रमदा वनह मझमि यानकी हृद्द चित करी ।

अशोक वाटिका वर्णन

अशोक तरवर तलि निरमल सती बिठी आसण पुरी ।
शृंगार परिहरि धर्डिहि मन धरि नीम लीधो आहार नो ।
राम स्वामी सुद्धि पामुं तब करूं हुं पारणो ।। ६ ।।
पारणो तब जब प्रभु सुधि पामुं नामुं सीसकंत पाउ रे ।
एवडउ निरधारिउ यानकी सेवकी हुई राक्षसी सरीरे ।। च० ।।
परहुदूषण बीर लक्षमण भणि विचक्षण राम स्वामी आवीया ।
यानकी वनमाहि एकली मूकी कांइ सही आवीया ।। ७ ।।
आव्या एकली मेह्ली यानकी कुड कीधुं खगि घणुं रे ।

राम की व्यथा

हवि वहंत वलो राम जगनाथ साथम मेह्ल सीता तणु रे ।।च०।।
सीतहि तसु वाणि सांभली राम चाल्यु रंग भरी ।
आवीय गुफा माझि स्वामी नवि दीठी ते सुंदरी ।
सती सीता साद करता कीधां कर्म ते सहए ।
तर वरह डुंगर परति श्रीराम सीता सुधि ज पूछए ।।८।।
पूछए सुदि श्रीराम नरेश्वर सरोवर कांठि ऊभु रही रे ।
कहू न चकोर तह्ने चक्रवाकी दीठी सीतल मुख सही रे ।।च०।।
सहीय सीता हरण हूयो कवण पापी लेइ गयो ।
कि व्याघ्र आवी भक्षण कीधु तेह तणो कविण हीयो ।
सार्दूल सकल कि सिंघ स्वापद सती सीता मुझि पडी ।
वनह मझभमि कांइ मेह्ली कवण पुहुती यम घडी ।।९।।
जम रूठो सीणि अवसरि जाण्यो खरदूषण वग हण्यो रे ।
लक्षमण बीरि सिर तस छेदी भेदीय रिपुदल जाण्यु रे ।।च०।।
जाणीय रिपु दल उपरि कुंवर विराधित ते आवीयो ।
विरीय मारीय बहूंत लक्षमण राम कह्नि ते आवीयो ।

रामस्वामी सुगति गामी गलि लागी रोयए ।
बेहू बंधव वनह मझमि सीता काजि जोवए ।।१०।।
जोतां चिहुं दिसि रामलक्ष्मी धरनवि पामि कोही वातु रे ।
तिणि अवसरि वैरी जीपीनि विराधित आवी पगे लागु रे ।।च०।।
भणि विराधित बात बांकी एक काज तो सारीये ।
रावण तणो जमाइ तम्हे तां खर दूषण खग मारियो ।
हवि इमि कीजि ठाम लीजि भेद कुहु हुं तीह्ल सही ।
पैयाल लंका नही संका सीता सुधि कसूं तिहां रही ।।११।।
तिहां रहीनि रामकी जसे सकल काम विमान बिसू स्वामी
अह्ल तणे रे ।
विराधित कुमरनी वाणी सांभली राम भणि धन जीवी
तह्ल तणी रे ।।च०।।
धन विराधित दोहिली वेलां परोपकार चडावीया ।
इम कहीय विमान चडीया पाताल लंका आवीया ।

सुग्रीव से भेंट

साहससमल्ल साहस गति खग सुग्रीव कपि मारीयो ।
सुग्रीव साग सैस भरिनि कपि काज ते सारीयो ।।१२।।
सारीय काज सुग्रीव इम जाणी विमान बिसी सीता सुधि गउ रे ।
गयणंगणि धकु दीठु रतन जटी तब आनंद मनमाहि
भयो रे ।।च०।।
भयो आनंद आवीय सुग्रीव रतन जटी नि आण ए ।
कहु न भ्राता राम कांता शुद्धिजु तुं जाणए ।
रतन जटी तब भणे सुग्रीव बात सुणु न अह्ल तणी ।
जे जानकी जनक तनया रावण लई गयो लंका धणी ।।१३।।
धणी त्रिभुवन तणु राम भेटावुं आवु तह्लो अह्ल साथि
सहोदर रे ।
सयल कथावत्तिय सीता तणी राम स्वामी आगिल कहुं रे ।।च०।।
कहीय सुग्रीव रतन जटीनि राम कह्लि ते आणीयो ।

सीताय हरण वृतांत सघला राम लक्ष्मण ते जाणीयो ।
राम पूछि कहु न सुग्रीव लंका कवरण दिशांइ वसि ।
सुग्रीव तरणो मंत्र वारणी राम तणी सुण विहसि ।।१४।।
हसिय वांणी इम भणि रामचन्द्रह इन्द्र जे दसानउ रे ।
रावण नामि विख्यात विद्याधर अरि परि तपि जिम
भानु रे ।।च०।।

भानुतणो संकास वास विख्यात लंका जाणीइ ।

रावण की शक्ति का वर्णन

राक्षस वंस वितंस रावण हवि तेह तणो भय धाणीइ ।
जिणि इंद्र चंदनि भानु राजा ग्रह बंदी ते राषीया ।
असुर खग नर दैत्य दाणव तेहां अभिमान लांषीया ।।१५।।
लांषीया अहंकार सोल सहस राया मुगटबंधउ सग करीए ।
नवकोटी वाजीनि मयमत्त मध गल बेतालीस लक्ष तनु
धरिए ।।च०।।

धिरि बितालीस लक्ष रथ वर बियालीस कोटीय पायक ।
सोल सहस जे देश भोगवि तिहुं षंडनु नायक ।
सुणु न राम अति वीर लक्षमण दोहिलु रावण अति बलो ।
हवि सीतल तणी तह्मे आस मूको अजोध्यां भणी
पाछा वलो ।।१६।।

नवम ढाल
भास साहेलडानी

मंत्रीय वाणि सुणवि चार बोल्यु कवण रावण तणु नाम ।
सयल निशाचर खचर अमर नर लंका सहीत फेडुं ठाम ।
साहेलडी राम तणो परसाद लक्षमण धीर गंभीर वीर सिरोमणि
भणि अरि जुलारिसुं नाद ।
साहेलडी रामतणो परसाद ।।चडालो।।
परसाद साधु सुग्रीव बोलि बाप बलीउ वीर तुं ।
एह रामनामि एक लुपुण रावणनिहुं जीपि मुं ।

सुग्रीव तणौ चोद श्रोहणी कटक बहु परि मेलए।
कपि वंश मंडण अरय खंडण श्रावि नल नील वीर ए ॥१॥
नलनील गवय गवखराइ आवि सुग्रीव सेस पठावि।
चतुरंग दल बल सबल विमान चढी हनमंत वीर तव आवि,
साहिलडीपवन राजा तणौ पुत्र अजना उपरि सुहो
रयण मणि रावण पाइ भदमुल साहेलडी। पवन राजा
तणो० ॥चढावो॥
पवन पुत विशाल भल लांगि परोपकार चतुर नर।
राम नाम दुलंभ पामीय पगि लागि जोडीय कर।
तव राम स्वामी सुगति गामी आणी आलिंगन दीउ।
पछि लक्षमण वीर विचक्षण हणमंतही पासु लीउ ॥२॥

हनुमान का लंका जाना

लीधो बीडो तिसि रामचन्द्र तणु गुण लीधो राम मुद्री।
लंका जाइ ने शास गढ मोडीय आणी यानकी सुद्धि ॥सा०॥
रामचन्द्र दीउ मान धन धन जनम धन तह्ल पिता।
धनि जननी कुलि भानु साहेलडी रामचन्द्र दीउ मान ॥च०॥
मान दीउ जस्म लीउ कपि वंश मंड ॥ आविया।
रामस्वामी तणे पासे अनेक राय ते आविया।
सैन संख्या सुभट लेखा सहस्त्र वि अक्षोहणी।

राम रावण युद्ध

विमान मढी श्री राम लक्ष्मण आव्या तव लंका तणी ॥३॥
आवीय हय गय रथ रे विविध परि विमान तणु नहीं पार।
वीस जोयण तणि फेरि कटक बैठु श्रीराम देवनु सार ॥सा०॥
वाजि भेर नीसाण ढोलति बल धन साव सोहावा।
कपिवंस राव सुजाण साहेलडी वाजि भेर नीसाण ॥च०॥
भेरीय नाद नीसाण संभलि लंक लोक ते खलभल्या।
रतनश्रवानि केकसीतणा चेतर कलकल्या।

अठार सहस्र अधिक राणी मंदोदरी इम बोलए ।
सुणि न कंत विख्यात मुनि बल अवर नहीं तुझ तोलए ।।८।।
अवर नही तझ सम बड़ि रावण न्यायवंत सवि सविचार ।
सतीय सीता तणु हरणसि कीधु सीधु अपजस भार ।।भा०।।
"आज सपन(?)हि दीठो राचि रावण मार ... (?) ।
विभीषण लंका राज थाप्यु साहेलडी आज सपनमि दीठो ।।च०।।
दीठो अभिनवु सपन स्वामी कृपा करु मुझ उपरि ।
सती सिरोमणि जनक तनया मेल्हि राम अंतेउरि ।
परि रमणि रती रंग ने नर राता ते विगूता बहु परे ।
राक्षस वंसि विष वेलडी ए तु आपि आपि ए सुंदरि ।।५।।
सुंदरी मंदोदरी तणी सुणी वाणी रावण धरि अभिमान ।
विभीषण भण भणि सुणु राम दशानन ।
हवि य गई तुझ सान साहेलडी काइ न जाणु तुम्हे आज ।
नलनील जंबूनाद हनमंत सुग्रीव विमान बांधी सिधु काज
साहेलडी काइ न जाणु तुम्हे आज ।।च०।।
आज पाज उलंघीया श्रीराम लक्षमण धावीया ।
सकल दलबल चपल वानर सैन सहित ते आवीआ ।
हवि वेगविहलास विहि पहिला राम राणु मनावीइ ।
सीता दीजि प्रीत कीजि एम रूड भावीइ ।।६।।
भावीइ इणी परि रूडा हो बांधव मनि म धरे अहिंकार ।
अमीय समाण विभीषण बोल बोल्या ।
कोप्यु रावण गमार साहिलडी तव जाण्यु विपरीत ।
घरि काढी विभीषणह् विचार । हवि कीजि जीवहित ।।सा०।।
तव जाण्यु विपरीत ।।च०।।
विपरीत जाणीय हीइ आणीय वीन अक्षोहणी दल भावीयु
विमान चडी बहु कणय रयण सु विभीषण वीर ते आवीयो ।
कर कमल जोडवि मौलि मुगटह राम तणे पमि आवियु ।
रामि विभीषण भगत जाणी पंचमु बांधव थापियु ।।७।।
थापिउ विभीषण प्रबल लंकापति सतीय सीता मनि भाव्यु ।

तब रावण बहुदलह करीनि लंका थकु रणभूमि आव्यु ॥सा०॥
साजेहणी सहस दीवार • श्री. वीर हरे रण रंग भरि ।
आसन कीधि पीवारी साहेलडी अक्षोहणी सहस बीयार ॥चा०॥
च्यार सहस्र अक्षोहणी दल मलीय बहु निसाचर ।
सहस्र थोड अक्षोहणी श्रीराम कहिन्हि वानर ।
संग्राम भेरी ते तब बहु परिनाद बह दिसि वाजए ।
नीसाण घण सु सइ संभलि वीर बहु परि गाजए ॥८॥

दशम ढाल

मास राउरीक

युद्ध की भीषणता

गाजि वीर पडग करि साह्या बाह्या अरि सिर धार ।
कुंभड धड धड ऊपरि लोटिय तन हुइ असवार ॥साहेलडी॥
झूझे रघुवंसी राम लक्षमण वीर महाबल भांजि ।
राक्षसनि नहीं ठाम साहेलडी झूझे रघुवंसी राम ॥१॥
सुग्रीव अंगद नल नील राज । मरु रेवि गर्वित वीर ।
कुंभकरण मेघ मय दैत्य इंद्रजित संग्रामि रण रंगि धीर

साहेलडी० ॥२॥
रामनाम तणी पाषरि पहिरी हनमंत वीर सरि चूवु ।
राक्षस रंगि चरचा बरिनाचि जाण्यु यम ए रूठो ॥सा०॥३॥
विभीषण रावण समवडि लागा, भागा रथ रे विमान ।
सकति समरि करि रावण लीधी, लक्षमण धरि अभिमान

॥सा०॥४॥
लक्षमण रावण रावण सनमुख रही विभीषण पाल्यु वांझि ।
मूकि सकति रे रावण ता परी दशरथ नंदन हसि ॥सा०॥५॥
लंकेसर तब कोपि चडीउ सक्ति मेल्ही वीर पाडच्यु ।
हनमंत वीर विशल्या आणी शक्ति भेद निगि काढय्यु ॥सा०॥६॥
तब रावण मनि विलपु हीउ समरिउ चक्र विशाल ।
आरा सहस्र सुं तेज पुंज करि आव्यु ते गुणमाल ॥ सा० ॥ ७ ॥
रावण भणि रे बाला लक्षमण काइ यमह तेहाँ आज ।
सीता राम रमणि मुझ आलु सुखिय मय तह्ने राज

॥ सा० ॥ ८ ॥

लक्षमण भणि तुभ मारीय रावण विभीषण लंका राज थापुं
जनक तणीए दुहिता सीता रामचन्द्रनि आपुं ॥ सा० ॥ ६ ॥
तव कोपारुण हुवो लंकेसर लक्षमण बोल न भाव्यु ।
फेरीय चक्र मेहल्यु तीणि अतिबल लक्षमण हाथि
ते आव्यु ॥ सा० ॥ १० ॥
रामतणें पग लागीय लक्षमण चक्र मूक्यु रे पचारि ।
भेदीय हृदय रावण तीणि पाड्यु राक्षसनि
आवी हारि ॥ सा० ॥ ११ ॥

ग्याहरवीं ढाल
भास भमारुलीनी

लंका विजय पर प्रसन्नता

हरख्यु राक्षस दल विरातु भमारुलीनी हाजिम पुग आविउ तु ।
रघुनंदन दलि जयत बोलु भमारुलीनी
वरतीय राम नीयाण तु ॥ १ ॥
लंका नगर सोहामणुं तु भमारुलीनी तलीयाए तोरण चंग तु ।
धवल मंगल गीत नाद करीतु भमारुलीनी पात्र नाचि
नवरंग तु ॥ २ ॥
घरि मंदिर महोछव हुवोतु भमारुलीनी गुडीयम हवर करेई तु ।
राम नाम राक्षस जपितु भमारुलीनी पिछित करि तिहां
सांति तु ॥ ३ ॥
ढोल तिवल भेरीय तणा तु भमारुलीनी नाद हुइ घणा आगिण तु ।
रामदेव गय वर बैठा तु भमारुलीनी आगिल बाजि
नीसाण तु ॥ ४ ॥
गिरि वर छत्र सोहमणुं तु भमारुलीनी चमर ढली मक्षीर तु ।
याचक जन वांछित पूरि तु भमारुलीनी दानदेइ विभीषण
वीर तु ॥ ५ ॥
देव सयल आनंदीया तु भमारुलीनी कनक धारा वरषंति तु ।
प्रमदा वन भणी चालीया तु भमारुलीनी मानक मनि
होइ हरष तु ॥ ६ ॥

राम रमणिए रंग भरो तु भमा० साहारीय मालीय सार तु ।
राम सीता मेलावडु तु भमा० होउ तिहां
जय जय कार तु ॥ ७ ॥

मातु मयगल मलपंतु तु भमा० राम चड्यु सीता साथि तु ।
लक्षमण विशला साथि तु भमा० बयठा ए
मलपति हाथि तु ॥ ८ ॥

बेहू बंधव अति रूवडा तु भमा० लंका कीयउ प्रवेस तु ।
नव वरसां तिहां रह्या तु भमा० राम लक्षमणह
नरेस तु ॥ ९ ॥

तिणि अवसरि नारद मुनि तु भमा० अजोध्यां थका
आव्या चंग तु ॥
तह्य तणी माता दुःख करि तु भमा० बार बरसह विग्रोग तु ॥
तह्य विण पामी दुःख खाणि तु ॥ १० ॥
नारद वयण सुणी करी तु भमा० राम मनि हुवो आनंद तु ।
माता मिलवा कारणि तु भमा० चाल्यु ए
दशरथ नंद तु ॥ ११ ॥

नव कोडी तोरंगमा तु भमा० पायदल कोडि पंचास तु ।
रथ लक्ष बैंयालीस तु भमा० गज तेतला
गुण रास तु ॥ १२ ॥

सोल सहस मुगट बंध तु भमा० सेव करि राम पास तु ।
लच्छ तणी संख्या नही तु भमा० विभीषण आगिल
जाइ तु ॥ १३ ॥

पनर दिन पंच रत्न तु भमा० मेघ रूपे कीउ वर्षा तु ॥
अजोध्या नयर भलो तु भमा० आण्यो अमरावती
भाव तु ॥ १४ ॥

बारहवीं ढाल

भास रनादेवनी

राम लक्षमण का अयोध्या प्रवेश

अमरावती जिम जाणि तु, अजोध्या नयर कीउए ।

तोरण मुखह मंडाण तु, ईणी परिजय लीउए ।
सहीय समाणीय चालि तु, मोतिय थालि भरीए ।। १ ।।
राम लक्षमणह बधावि तु, मन माहि भाव धरीए ।
वाजि दुंदुभि नाद तु, नाद सोहामणाए ।
मदन भेरीय झणकार तु, ढोल नीसाण घणाए ।। २ ।।
कुसम बरसिय अकास तु पंच शबद नादि ए ।
मलपतं मयगल कुंभि तु, झरइं सुगंध मद ए ।। ३ ।।
इणी परि आव्या श्रीराम तु, पुष्पक विमान बिसी ए ।
सोहि इन्द्र जिम जाणि तु, सीता इन्द्राणी जिसी ए ।। ४ ।।
मन धणो चढी बाट जोइ तु, जननीय राम तणी ए ।
भरत सत्रुघन बीर तु, सेना भली अति घणी ए ।। ५ ।।
हय गय रथ सिणगार तु, पायक अति बली ए ।
बेहू बंधव सविचार तु, चाल्या निरमला ए ।। ६ ।।
महाजन सयल विचार तु, नाना विधि भेट लीधीए ।।
रयण मणि मोती आदि तु, आपणी आपणी रिधि ए ।। ७ ।।
इणी परिमल्यु बहुलोक तु, कलिरव करि घणु ए ।।
राम साहा माते जाइ तु, पार नही तेह तणु ए ।। ८ ।।
गगन मंडल थका जोइ तु, राम स्वामी निरमला ए ।।
भरत सत्रुघन होइ तु, बंधव सुह जला ए ।। ९ ।।
जानकी पूछि श्री राम तु, साह्या आवि माहाजन ए ।
देवर देषुं स्वामि तु, भरत सत्रुघन ए ।। १० ।।
राम भणि सुणु नारि तु, पेलु भरत कही ए ।
गयवर उपरि बैठु तु, मुकुट झलकि सही ए ।। ११ ।।
हय वरि असवार वीर तु, पेलो देषुं सत्रुघन ए ।
जानकी जोइ मनि रंगीतु, देवर धनु धन ए ।। १२ ।।
समीप आव्या सबे जाणि तु, राम स्वामी निरमला ए ।
उतरया विमान वा सार तु, भूमि आव्या सुहजला ए ।। १३ ।।
राम लक्षमण दीठा सार तु, गरूड़ धजा लहलहिए ।
भरत सत्रुघन वीर तु, सजन सुं गहगहिए ।। १४ ।।

बाहरण छाड्या तव जाणि तु, भूमि चालि ग्रति वगा ए ।
मुगट उतारीय बंध तु, पगे लागा रामतणे ए ।। १५ ।।
राम लक्ष्मण एह वीर तु, भरत सत्रुघन ए ।
आलिंगन हवो सविचार तु, पछि भेटया महाजन ए ।। १६ ।।
ति हवो जय जयकार तु, मेघ कनके वूठा ए ।
ग्राज सु धन दिन चंग तु, राम देव ग्रह्म तूठाए ।। १७ ।।
इणि परि बंधव सुसार तु, ग्रजोध्या प्रवेश कीउ ए ।
मायने पगि सिर नामि तु, रामदेव जस लीयो ए ।। १८ ।।
मलीया ग्रति बहु रूप तु, विचारि मनि रली ए ।
अंगद सुग्रीव हनमंत तु, नल नील महाबली ए ।। १९ ।।
विभीषण भणि ग्रति चंग तु, भरति तप लीउ ए ।
राज रिद्ध मने छांडि तु, मुगति हिं मन कीउ ए ।। २० ।।

राम का राज्याभिषेक

राजपाट देउ सार तु, सयल धरा तणो ए ।
रामस्वामी नि काजि तु, महोछव करु घणो ए ।। २१ ।।
विभीषण तणी सुणी वाणि तु, भूप हरष धरी ए ।
कलस कनक तणां जाणि तु, तीरथ ने नीरें भरीए ।। २२ ।।
पंच रतन तणो चुक तु, पूरीउ मनि रली ए ।
रयण मणिमय थापि तु, सिंघासण तिहां वली ए ।। २३ ।।
तिहां राम सीता बिसाडि तु, जय जयकार करी ए ।
आणंदि पूरीया धूप तु, कलस त करि धरी ए ।। २४ ।।
धवल मंगल गीत नाच तु, बीह कर सालीयां ए ।
महोछव सहित ते कुंभ तु, राम सिर ढाली ए ।। २५ ।।
सयल प्रथ्वी तणो स्वाम तु, रामचन्द्र निरमलो ए ।
युवराजह पद बैठु सार तु, लक्ष्मण ग्रतिबलो ए ।। २६ ।।
लंका नगर को स्वाम तु, विभीषण थापियो ए ।। २७ ।।
करण कुंडल हणमंत तु, नल नील विषपुरी ए ।
सत्रुघन बंधव ते सार तु, दक्षण मथुरां भणीए ।। २८ ।।
जे यथा योग्य होता भूप तु, ते तिहां थापीया ए ।
इणी परि करि राम राज तु, बहु जस व्यापीया ए ।। २९ ।।

अह निशि करि दया धर्म तु, दान देय मनि रलीए ।
त्रिभुवन माहि जयकार तु, जस बोलि सहूजलीए ।। ३० ।।
सोल धनुष तस देह तु, ऊंचा रामदेव कही ए ।
सतर सहस वृष आयु तु, तेह परमाण कही ए ।। ३१ ।।
एतला माहि सविचार तु, श्रीराम अति बली ए ।
च्यार पदारथ सार तु, साध्या निरमला ए ।। ३२ ।।

कवि प्रशस्ति

ए रामायण ग्रंथ तु, एहनु पार नही ए ।
हूं मानव मति हीण तु, संखेपि गीत कही ए ।। ३३ ।।
विद्वांस जे नर होइ तु, विस्तार ते करि ए ।
ए रास भास सुणेवि तु, मुझ परि दया धरु ए ।। ३४ ।।
अक्षर मात्र हूं वि तु, पद छंद गण चूक ए ।
सरसिति सामिण देवि तु, अपराध मुझ मूकु ए ।। ३५ ।।
श्री ब्रह्मचार जिणदास तु, परसाद तेह तणो ए ।
मनवांछित फल होइ तु, बोलीइ किस्यु घणु ए ।। ३६ ।।
गुणकीरति कृत रास तु, विस्तार मनि रली ए ।
बाई धनश्री ज्ञानदास तु, पुण्यमती निरमली ए ।। ३७ ।।
गावउ रली रंगि रास तु, पावउ तु, पावउ रिद्धि वृद्धि ए ।
मनवांछित फल होइ तु, संपजि नव निधि ए ।। ३८ ।।

इति श्री **रामसीतारास** समाप्तः ।।

गटका—पृष्ठ संख्या ६५ से ६१

भट्टारक यशःकीर्ति

भट्टारक यशःकीर्ति नाम के कितने ही भट्टारक एवं विद्वान् हो गये हैं जिनका वर्णन विभिन्न ग्रन्थ प्रशस्तियों में मिलता है।

इनमें से कुछ भट्टारकों का परिचय निम्न प्रकार है—

(१) प्रथम यशःकीर्ति काष्ठा संघ माथुर गच्छ के पुष्कर गण शाखा के भट्टारक थे जो अपने युग के श्रेष्ठतम साहित्यकार, कठिन तपस्वी, प्राचीन एवं जीर्ण शीर्ण ग्रंथों के उद्धारक एवं कथा साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् थे। वे भट्टारक गुणकीर्ति के शिष्य थे। अपभ्रंश के महान् वेत्ता पं. रइधू जैसे उनके शिष्य थे। जिन्होंने उनकी विद्वत्ता, तपस्या, तेजस्विता एवं अन्य गुणों का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। उनके अनुसार वे आगम ग्रन्थों के अर्थ के लिये सागर के समान, ऋषीश्वरों के गच्छ नायक, विजय श्री [illegible], सुन्दर, निर्भीक, ज्ञान मन्दिर एवं क्षमागुण से सुशोभित थे।[1] महाकवि सिंह ने अपने पज्जुण्णचरिउ में उन्हें संयम विवेक-निलय, विबुध-कुल लघुतिलक, भट्टारक भ्राता कहा है। यशःकीर्ति द्वारा प्रणीत चार रचनाएं उपलब्ध होती हैं जिनके नाम पाण्डव पुराण, हरिवंश पुराण, जिणरत्ति-कहा एवं रविवयकहा है। पाण्डवपुराण का रचना काल सं. १४९७ एवं हरिवंश पुराण का सं. १५०० है।

यशःकीर्ति अपभ्रंश के महान् वेत्ता के साथ-साथ ग्रन्थों की प्रतिलिपियां भी करते थे। राजस्थान के शास्त्र भण्डारों में उनके द्वारा लिपिबद्ध कितनी ही पाण्डु-लिपियां मिलती हैं।

दूसरे भट्टारक यशःकीर्ति भट्टारक सोमदेव की परम्परा में होने वाले प्रमुख भट्टारक थे, वे अपने आपको मुनि पद से सम्बोधित करते थे। इनका विस्तृत वर्णन आगे किया जावेगा।

तीसरे भट्टारक रामकीर्त्ति के प्रशिष्य एवं विमलकीर्ति के शिष्य यशःकीर्त्ति हुए। ये भी अपने आपको मुनि लिखते थे। इन्होंने जगत्सुन्दरी प्रयोगमाला नामक आयुर्वेद ग्रंथ की रचना की थी। प्राकृत भाषा में निबद्ध आयुर्वेद विषय की एक मात्र कृति है जिसकी एक पाण्डुलिपि जयपुर के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है।

---

1. देखिये रइधू साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास—डा. राजाराम जैन पृष्ठ ७४–७५.

चौथे यशःकीर्ति नागौर गादी पर भट्टारक हुए। जिनका संवत् १६७२ की फाल्गुन शुक्ला पंचमी को रेवासा नगर में भट्टारक पद पर पट्टाभिषेक हुआ था। एक भट्टारक पट्टावली में इनका परिचय निम्न प्रकार दिया हुआ है—

"संवत् १६७२ फाल्गुन सुदी ८ यशःकीर्ति जी गृहस्थवर्ष ६ दीक्षा वर्ष ४० पट्ट वर्ष १७ मास ६ दिवस ८ अन्तर दिवस २ सर्व वर्ष ६७ जाति पटनी पट्ट रेवासा।

रेवासा नगर के आदिनाथ जिन मन्दिर में एक शिलालेख के अनुसार यशःकीर्ति के उपदेश से रायसाल के मुख्य मंत्री देवीदास के दो पुत्र जीत एवं नथमल ने मन्दिर का निर्माण करवाया था। उनके प्रमुख शिष्य रूपा एवं डूंगरसी ने धर्मपरीक्षा की एक प्रति गुणचन्द्र को भेंट देने के लिये लिखवायी थी तथा रेवासा के पंचों ने उन्हें एक सिंहासन भेंट किया था।

पांचवें यशःकीर्ति ने संवत् १८१७ में हिन्दी में हनुमच्चरित्र की रचना की थी जिसकी एक पाण्डुलिपि डूंगरपुर (राजस्थान) के कोटड़ियों के मन्दिर के शास्त्र भण्डार में संग्रहीत है।[1]

छठे यशःकीर्ति भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा में भ. रामकीर्ति के शिष्य हुए जिन्होंने धुलेव में सं. १८७५ में चारुदत्त श्रेष्ठिनो रास की रचना समाप्त की थी। इसकी एक पांडुलिपि दि. जैन संभवनाथ मन्दिर उदयपुर में संग्रहीत है। इनका भट्टारक काल संवत् १८६३ से प्रारम्भ होता है।

उक्त यशःकीर्ति नाम वाले भट्टारकों के अतिरिक्त और भी यशःकीर्ति हो सकते है। हमारे चरित्र नायक यशःकीर्ति १५-१६ वीं शताब्दि के विद्वान् थे। वे रामसेन की परम्परा में होने वाले भट्टारक थे जो भ. सोमकीर्ति के उत्तरवर्ती थे तथा सोमकीर्ति के पश्चात् भट्टारक पद पर अभिषिक्त हुये थे। ब्रह्म यशोधर ने नेमिनाथगीत में एवं बलिभद्र चुपई में इन्हें अपने गुरु के रूप में स्मरण किया है।[2]

यशःकीर्ति का समय १५०० से १५६० तक का माना जा सकता है। संवत् १५८५ में जब ब्रह्म यशोधर ने बलिभद्र चुपई की रचना की थी उस समय उनके पश्चात् भ. विजयसेन और हो चुके थे। यदि एक भट्टारक का काल २५ वर्ष का भी मान लिया जावे तो इस हिसाब से संवत् १५६० ही ठीक बैठता है।

---

1. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची पंचम भाग—पृष्ठ सं. ४१६.
2. श्री यसकीरति सुपसाउलि ब्रह्म यशोधर भणिसार। नेमिनाथ गीत।

साहित्य सेवा---भट्टारक यशःकीर्ति की अभी तक कोई बड़ी रचना नहीं मिल सकी है। केवल २ पद, योगी वाणी एवं चौबीस तीर्थङ्कर भावना मिली है। ये लघु रचनायें हैं। दो पद उपदेशात्मक है जिनमें मनुष्य भव में अच्छे कार्य करने के लिये कहा गया है। गढ़, मठ, मन्दिर, घोड़ा हाथी कोई भी साथ जाने वाले नहीं है। केवल धर्म ही साथ जाने वाला है। दोनों ही पद भाषा एवं भाव की दृष्टि से अच्छे पद है।

योगी वाणी में ज्ञान एवं ध्यान में रहने वाले योगियों के चरणों की वंदना करने को कहा गया है। यशःकीर्ति ने कहा है कि जो शुद्ध ध्यान को धारण करता है उसी योगी के चरणों की वन्दना करनी चाहिये। योगी वाणी में आगे कहा गया है कि क्रोध, लोभ माया और मान इन सभी को अपने आप से दूर हटा तथा त्रस एवं स्थावर जीवों की रक्षा कर, काया से प्रेम मत कर तथा परीषह सहने के डर से चारित्र को मत छोड़ यही योगियों की वाणी का सार है। योगी संयमी एवं संतोषी होते हैं अल्प आहारी एवं अल्प निद्रा लेने वाले होते हैं। योगियों की पहचान योगी ही कर सकते हैं। इस प्रकार योगी वाणी लघु कृति होने पर भी गूढ़ अर्थ को लिये हुये हैं।

चौबीस तीर्थङ्कर भावना में चौबीस तीर्थङ्कर गुणानुवाद है। तथा अन्त में कहा गया है कि जो नर नारी भाव पूर्वक इनका साधन करेगा गुणानुवाद गावेगा वही भव से पार होगा।

इस प्रकार यशःकीर्ति अपने समय के अच्छे कवि थे तथा अपने भक्तों को शुभ कार्य करने की प्रेरणा दिया करते थे।

यशःकीर्ति भट्टारक होते हुए भी अपने आपको मुनि लिखा करते थे इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे संभवतः नग्न रहते हों। सोमकीर्ति भी अपने आपको आचार्य लिखना अधिक पसन्द करते थे इसलिये यशःकीर्ति ने अपने गुरु से आगे न बढ़ कर मुनि लिखने में संतोष धारण कर लिया।

(१)

राग सबाक

तडकि लागि जिम देह भूटि।
अंजलि उदक जिम आउपुं छूटि।

---

1. श्री रामसेन अनुक्रमि हुआ, यसकीरति गुरु जाणि।
श्री विजयसेन पदि थापिया, महिमा मेर समाण ।। १८६ ।।
तास शिष्य इम उच्चरि ब्रह्म यशोधर जेह। बलिभद्र चुपई

अथिर धन योवन नही कोए केरा ।
कांई लाई जीवडा करि फोकट फेरा ॥ १ ॥
गढ मढ मंदिर घोड़ा रे हाथी ।
अंतकाल कोई नावि रे साथी । अथि ॥ २ ॥
मानव भवछि अति रे दोहेलु ।
कर एक धर्म जिम पामि सोहेलु । अथि ॥ ३ ॥
अहू निशि हींडिकांइ हा हा हू तु ।
माया रे जाल कादव माहि खुतु । अथि ॥ ४ ॥
काया रे कुटंब सहू भाडूत जाणी ।
पंचि रे इंद्री मन विण करे प्राणी । अथि ॥ ५ ॥
सीष सुणु सहू एहछि सारी ।
श्री यश.रे कीरति गुरु कहि रे विचारी । अथि ॥ ६ ॥

(२)

राग आसावरी

मयरण मोह माया मदि मातु ।
तु उपरि रमणी रंगि रातु ।
रे लक्ष्मी कारणि हींडि धातु ।
जीव जाणेस परिभव जातु ।
काया कारमीए घट काचु ।
जीव करि एक जिन धर्म साचु रे ॥ काया का ॥ १ ॥
अंति काल जाए सजीव नागु ।
कांई विषयाचे रस लागु ।
लक्ष चुरासी भमी भमी भागु ।
आता काऊीले सिवागु रे ॥ काया का ॥ २ ॥
पुत्र परिवार अथिर सवि जाणी ।
अजीय कोइ नवि जाणि ।
श्री यशकीरति मुनिवर इम बोलि ।
अचीलध्या दोहधागि रे ॥ कावा का ॥ ३ ॥

(३)

योगी वाणी

दास विभूती ध्यान लंगोटा पंच महाव्रत पालि रे।

मोटा तस योगी चे पाय प्रणमीजि।

सुद्ध चिद्रूपनु ध्यान धरीजि, तस योगी चे पाय प्रणमीजि ॥ १ ॥

आगम सीगी दह दिशि कंथा जिनमारग प्रकाशि रे पंथा

तस योगी० ॥ २ ॥

क्रोध लोभ मद मछर टालि, थावर त्रस जीव षट काय पालि

तस योगी० ॥ ३ ॥

काया योगिण गुं माया न मांडि, परीषह मुद्द चारित्र न छांडि

तस योगी० ॥ ४ ॥

संयम संतोष काने मुद्रा, अल्प आहारनि अल्पछि निद्रा

तस योगी० ॥ ५ ॥

योगीयतेजे योग ज जाणि, मनमां कछ इंद्री वसि आणि

तस योगी० ॥ ६ ॥

श्री यस रे कीर्ति गुरु योग वखाणि डाहु ते ये मन माहि आणि

तस योगी० ॥ ७ ॥

इति योगी वाणी

(४)

चौबीस तीर्थंकर भावना

श्री रिषभनाथ जिन स्वामि नामि रे नव निधि मंदिर पामीइ रे।

तीर्थंकर चुवीस पूजिइ रे स्वर्ग मोक्ष सुख पामीइ रे ॥ तीर्थं ॥ १ ॥

प्रणमु अजित जिणंद जिणि जीता रे क्रोध लोभ मनमथ घणा रे

॥ तीर्थं ॥ २ ॥

भव भय भंजन नाथ संभव रे गिरूड स्वामी भेटीइ रे ॥ तीर्थं ॥ ३ ॥

अभिनंदन आनंद पूरि रे सेवक जन संपति घणी रे ॥ तीर्थं ॥ ४ ॥

सुमति सदा फल देव सिद मति रे दाता जुग माहि जाणीइ रे

।। तीर्थ ।। ५ ।।

पद्मप्रभ गुण ग्राम जपंता रे २ संकट सवि दूरि पुलि रे ।। तीर्थ ।। ६ ।।

श्री सुपास मनि आस भवीयण रे २ पूरि स्वामी मन तणी रे

।। तीर्थ ।। ६ ।।

चन्द्रप्रभ चन्द्रगोति ध्याइ रे २ पाप तिमर दूरि हरि रे ।। तीर्थ ।। ८ ।।

पुष्पदंत शिशिवस समरि रे २ आठ कर्म दूरि करि रे ।। तीर्थ ।। ६ ।।

शीतलनाथ सुरिंद शीतल रे २ वाणी आतपनी गमि रे ।। तीर्थ ।। १० ।।

श्रेयांस श्रीदातार श्रीकर रे २ स्वामी भावि भेटीइ रे ।। तीर्थ ।। ११ ।।

वासुपूज्य मनि रंगि मन रंगि रे २ वासव इंद्रि पूजीउ रे

।। तीर्थ ।। १२ ।।

विमलनाथ जिनराउ निर्मल रे २ केवल ज्ञान भूषीउ रे ।। तीर्थ ।। १३ ।।

अनंतनाथ अनंत अनंत रे २ चतुष्टय करी भूषीउ रे ।। तीर्थ ।। १४ ।।

धर्मनाथ सुधर्म धरम रे २ दाता स्वामी पूजीइ रे ।। तीर्थ ।। १५ ।।

सांतिनाथ सुभ शांति नामि रे २ शिवसुख निश्चल पामीइ रे

।। तीर्थ ।। १६ ।।

कुंथनाथ सुरनाथ सुरवर रे नामि रे दुख दालिद्र सवि वामीइ रे

।। तीर्थ ।। १७ ।।

अर स्वामी जिनराउ अरि रिपु रे २ मयणगइ

जिणि गांजीउ रे ।। तीर्थ ।। १८ ।।

मल्लिनाथ प्रभु देव सेविइ रे २ मोक्ष पदारथ पामीइ रे ।। तीर्थ ।। १६ ।।

मुनिसुव्रत व्रत धार सुरव्रत रे २ मारग स्वामी दाषवि रे

।। तीर्थ ।। २० ।।

नमिनाथ सुर राइ सुरपति रे २ तीन भुवन सुर भेटीइ रे

।। तीर्थ ।। २१ ।।

नेमिनाथ बाल ब्रह्मचार बाल परिण २ संयम धरी रे ।। तीर्थ ।। २२ ।।

श्री पासनाथ जिन राउ अतिसय रे २

दीसि महीयल दीपतु रे ॥ तीर्थ ॥ २३ ॥

श्री महावीर जिनराव इंद्रि रे २ मेरु सिहर

महिमा कीउ रे ॥ तीर्थ ॥ २४ ॥

जे जपमि नर नारि भावि रे २ गुणगाइ स्वामी तणा रे ॥

ते पामि भव पार श्री यसकीरति मुनिवर भणि रे ॥ २५ ॥

इति चौबीस तीर्थंकर भावना

ब्रह्म यशोधर

ब्रह्म यशोधर १६ वीं शताब्दि के कवि थे। भट्टारक सोमकीर्त्ति के शिष्य एवं भट्टारक यशःकीर्ति के प्रशिष्य भ० विजयसेन को इन्होंने अपना गुरु माना है जिससे यह स्पष्ट है कि इन्होंने दोनों का ही शासनकाल देखा था।[1] और यह भी संभव है कि इन्हें अपने प्रारम्भिक जीवन में भ० सोमकीर्त्ति के भी पास रहने का सुअवसर मिला हो क्योंकि कुछ पदों में इन्होंने सोमकीर्त्ति भट्टारक को भी अपने गुरु के रूप में स्मरण किया है।[2]

भट्टारक सोमकीर्त्ति की परम्परा के अतिरिक्त, इन्होंने भट्टारक सकलकीर्ति की आम्नाय में होने वाले भट्टारक विजयकीर्त्ति का भी गुरु के रूप में स्मरण किया है और अपने गुरु की प्रशंसा में एक गीत भी लिखा है।[3] इससे यह स्पष्ट है कि ब्रह्म यशोधर सभी भट्टारकों के पास जाया करते थे और उनके चरणों में बैठ कर साहित्य साधना किया करते थे।

जन्म

ब्रह्म यशोधर का जन्म कहां हुआ था। कौन इनके माता पिता थे, कितनी आयु में इन्होंने ब्रह्मचारी पद प्राप्त किया तथा कितने समय तक वे साहित्य साधना करते रहे इन प्रश्नों का उत्तर देना कठिन है क्योंकि उन्होंने अपनी कृतियों में इस सम्बन्ध में कोई प्रकाश नहीं डाला। साधु बनने के पश्चात् गृहस्थावस्था का सम्बन्ध बतलाना शास्त्र सम्मत नहीं माना जाता इसी दृष्टि से ब्रह्म यशोधर ने भी अपना कोई परिचय नहीं दिया। लेकिन अपनी दो रचनाओं में रचनाकाल दिया है जिनमें नेमिनाथ गीत में संवत् १५८१ एवं बलिभद्र चुपई में संवत् १५८५ दिया

---

1. श्री रामसेन अनुक्रमि हुआ, यसकीरति गुरु जाणि।
   श्री विजसेन पदि थापीया, महिमा मेर समान
   तास सख्य इस उच्चरि, ब्रह्म यशोधर जेह ।। १८७ ।।
2. श्री सोमकीर्त्ति गुरु पाट धराधर सोल कला जिमु चंद्र रे।
   ब्रह्म यशोधर इणी परि वीनवी श्री संघ करि आणंदू रे ।। ७ ।।
3. श्री काष्ठा संघ कुल तिलु रे, यती सिरोमणि सार।
   श्री विजयकीरति गिरुअ गणधर श्री संघ करि जयकार ।। ४ ।।

है। इसी संवत् १५८१ में इन्होंने गुटके में कुछ पाठों की लिपि भी की थी।

जिन भट्टारकों का इन्होंने अपनी रचनाओं में स्मरण किया है। उनके आधार पर ब्र० यशोधर का जन्म संवत् १५२० के आस पास हुआ होगा। इनके जन्म स्थान के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। किन्तु इन्होंने अपनी रचनाओं में वंसपालपुर (बांसवाड़ा) गिरिपुर (डूंगरपुर) एवं स्कंधनगर का उल्लेख किया है। इससे पता चलता है कि इनका बागड प्रदेश मुख्य स्थान था और इसलिये जन्म भी इसी प्रदेश के किसी ग्राम अथवा नगर में हुआ होगा।

ब्रह्म यशोधर के पूर्व ब्रह्म जिनदास हो चुके थे जिन्होंने राजस्थानी में विशाल साहित्य की सर्जना करके सबको चकित कर दिया था। ब्र० यशोधर भी उन्हीं के पद चिह्नों पर चलने वाले साधु थे। यही कारण है कि उन्होंने जीवन के अन्तिम क्षण तक साहित्य देवता को अपने आपको समर्पित रखा।

शिक्षा

ब्रह्म यशोधर ने सर्व प्रथम भ० सोमकीर्ति के पास एवं उनके पश्चात् भ० यशःकीर्ति के पास शिक्षा प्राप्त की थी। संस्कृत एवं राजस्थानी भाषा पर अधिकार प्राप्त था। सर्व प्रथम इन्होंने ग्रन्थों की प्रतिलिपि करने का कार्य प्रारम्भ किया। इनकी लिपि बहुत सुन्दर थी। छोटे एवं गोल आकार वाले अक्षर लिखना इन्हें बहुत प्रिय था। इनके स्वयं के द्वारा लिखे हुये गुटके में पाठों का संग्रह मिलता है जैसे इनके अक्षर वैसा ही इनका निर्मल स्वभाव था।

विहार

कविवर ब्र० यशोधर अधिकांश समय भट्टारकों के साथ रहते थे या फिर उनकी गादी में रह कर अध्ययन एवं लेखन किया करते थे। स्वतन्त्र रूप से विहार नहीं होता था वैसे इनका अधिकांश समय साहित्य निर्माण में व्यतीत होता था।

रचनायें

कवि की अब तक निम्न रचनायें उपलब्ध हो चुकी हैं।

1. नेमिनाथ गीत—(रचना काल सं० १५८१)

---

1. संवत पनर एकासीइ जी वंसपाल पुर सार। नेमिनाथ गीत
2. गिरिपुर स्वामीय मंडणु श्री संघ पूरवि आस रे।। मल्लिनाथगीत
3. संवत पनर पञ्चासीइ स्कंध नयर मझारि
   भवणि अजित जिनवर तणि, ए गुण गाया सार।। १८२ बलिभद्र चुपई

2. बलिभद्र चुपई (रचना सं० १५८५)
3. विजयकीर्त्ति गीत
4. वासुपूज्य गीत
5. वैराग्य गीत
6. नेमिनाथ गीत
7. ,,
8. मल्लिनाथ गीत
9. पद संख्या १८

उक्त रचनाओं का संक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार है--

१. नेमिनाथ गीत

कवि की संवतोल्लेख वाली दो रचनाओं में से नेमिनाथ गीत प्रथम रचना है जिसका रचना काल सं० १५८१ है। रचना स्थान वंसपालपुर (बांसवाड़ा) है। प्रस्तुत गीत में २८ अन्तरे हैं जिनमें २२ वें तीर्थंकर नेमिनाथ की एक झलक मात्र प्रस्तुत की गयी है। गीत में राजुल नेमिनाथ को सम्बोधित करके अपनी वेदना व्यक्त करती हैं और जब समझाने पर भी नेमि वापिस नहीं लौटते हैं तो स्वयं भी दीक्षा ले लेती हैं।

> नेमिकुमार भड सांचरया जी अलुगा लहिर मझारि।
> पंच महाव्रत आदरयां जी, राल्यु सवि सिरणगार।
> हे राजिल मम करि मोह अयाण मोह हुइ परम नीहाण रे राजोल।

प्रस्तुत कृति की अपूर्ण प्रति गुटके में संग्रहीत है। केवल अन्तिम कुछ पद्य उपलब्ध होते हैं। २७ वां पद्य निम्न प्रकार है—

> ब्रह्म यशोधर इम कहि जी भणसि जे नर नारि।
> स्वर्ग तणां सुख भोगवी जी लहिसि मुगति दूयार। हो स्वामी।

२. **बलिभद्र चौपई**—यह कवि की अब तक उपलब्ध रचनाओं में सबसे बड़ी रचना है। इसमें १८६ पद्य हैं जो विभिन्न ढाल, दूहा एवं चौपई आदि छन्दों में विभक्त हैं। कवि ने इसे सम्वत् १५८५ में स्कन्ध नगर के अजितनाथ के मन्दिर में सम्पूर्ण[1] किया था।

---

१. संवत पनर पच्यासीइ, स्कन्ध नगर मझारि।
भवंणि अजित जिनवर तणी, ए गुण गाया सारि॥ १८८॥

रचना में श्रीकृष्ण जी के भाई बलिभद्र के चरित्र का वर्णन है। कथा का संक्षिप्त सार निम्न प्रकार है—

द्वारिका पर श्रीकृष्णजी का राज्य था। बलिभद्र उनके बड़े भाई थे। एक बार २२ वें तीर्थंकर नेमिनाथ का उधर विहार हुआ। नगरी के नरनारियों के साथ वे दोनों भी दर्शनार्थ पधारे। बलिभद्र ने नेमिनाथ से जब द्वारिका के भविष्य के बारे में पूछा तो उन्होंने १२ वर्ष बाद द्वीपायन ऋषि द्वारा द्वारिका दहन की भविष्यवाणी की। १२ वर्ष बाद ऐसा ही हुआ। श्रीकृष्ण एवं बलराम दोनों जंगल में चले गये और जब श्रीकृष्ण जी सो रहे थे तो जरदकुमार ने हरिण के धोखे में इन पर बाण चला दिया जिससे वहीं उनकी मृत्यु हो गई। जरदकुमार को जब वस्तुस्थिति का पता लगा तो वह बहुत पछताये लेकिन फिर क्या होना था। बलिभद्र श्रीकृष्ण जी को अकेला छोड़कर पानी लेने गये थे, वापिस आने पर जब उन्हें मालूम हुआ तो वे बड़े शोकाकुल हुए एवं रोने लगे और मोह से छह मास तक अपने भाई के मृत शरीर को लिए घूमते रहे। अन्त में एक मुनि ने जब उन्हें संसार की असारता बतलाई तो उन्हें भी वैराग्य हो गया और अन्त में तपस्या करते हुए निर्वाण प्राप्त किया। चौपई की सम्पूर्ण कथा जैन पुराणों के आधार पर निबद्ध है।

चौपई प्रारम्भ करने के पूर्व सर्व प्रथम कवि ने अपनी लघुता प्रगट करते हुए लिखा है कि न तो उसे व्याकरण एवं छंद का बोध है और न उचित रूप से अक्षर ज्ञान ही है। गीत एवं कवित्त कुछ आते नहीं है लेकिन वह जो कुछ लिख रहा है वह सब गुरु के आशीर्वाद का फल है —

न लहूं व्याकरण न लहूं छन्द, न लहूं अक्षर न लहूं बिंद।
हूं मूरख मानव मति नहीं, गीत कवित्त नवि जाणुं कहीं ॥२॥

दोहा

सूरज ऊग्यु तम हरि, जिम जलहर वूठि तांप।
गुरु वमणें पुण्य पामीइ, भाजि भवंतर पाप ॥४॥
मूरख पणि जे मति लहि, करि कवि मतिसार।
ब्रह्म यशोधर इम कहि, ते सहि गुरु उपगार ॥६॥

उस समय द्वारिका वैभव पूर्ण नगरी थी। इसका विस्तार १२ योजन प्रमाण था। वहां शान से तेरह मंजिल के महल थे। बड़े-बड़े करोड़पति सेठ वहां निवास करते थे। श्रीकृष्ण जी याचकों को दान देने में हर्षित होते थे, अभिमान नहीं

करते थे। वहां चारों ओर वीर एवं योद्धा दिखलाई देते थे। सज्जनों के अतिरि दुर्जनों का तो वहां नाम भी नहीं था।

कवि ने द्वारिका का वर्णन निम्न प्रकार किया है—

नगर द्वारिका देश मझार, जाणे इन्द्रपुरी अवतार।
बार जोयण ते फिरतु वसि, ते देखी जन मन उलसि ॥११॥
नव खण तेर खणा प्रासाद, हह श्रेणि सम लागु वाद।
कोटीधज तिहां कहीइ घणा, रत्न हेम हीरे नहीं मणा ॥१२॥
याचक जननि देइ दान, न हीयडि हरष नहीं अभिमान।
सूर सुभट एक दीसि घणा, सज्जन लोक नही दुर्जणा ॥१३॥
जिण भवने धज वड लरहरि, शिखर स्वर्ग सु वातज करि।
हेम मूरति पोढी परिमाण, एके रत्न अमूलिक जाण ॥१४॥

द्वारिका नगरी के राजा थे श्रीकृष्ण जी जो पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान सुन्दर थे। वे छप्पन करोड़ यादवों के अधिपति थे। इन्हीं के बड़े भाई थे बलिभद्र। स्वर्ण के समान जिनका शरीर था। जो हाथी रूपी शत्रुओं के लिए सिंह थे तथा हल जिनका आयुध था। रेवती उनकी पटरानी थी। बड़े-बड़े वीर योद्धा उनके सेवक थे। वे गुणों के भण्डार तथा सत्यव्रती एवं निर्मल-चरित्र के धारण करने वाले थे—

दूहा

तस बंधव अति रूयडु रोहिण जेहनी मात।
बलिभद्र नामि जाणयो, वसुदेव तेहनु तात ॥२८॥
कनक वर्ण सोहि जिसु, सत्य शील तनुवास।
हेमधार वरषि सदा, ईहण पूरि आस ॥२९॥
अरीयण मद गज केशरी, हल आयुध करि सार।
सुहड सुभट सेवि सदा, गिरुउ गुणह भंडार ॥३०॥
पटराणी तस रेवती, सील सिरोमणि देह।
धर्म धुरा भालि सदा, पतिसु अविहड नेह ॥३१॥

उन दिनों नेमिनाथ का विहार भी उधर ही हुआ। द्वारिका की प्रजा ने नेमिनाथ का खूब स्वागत किया। भगवान श्रीकृष्ण, बलभद्र आदि सभी उनकी वंदना के लिए उनकी सभागृह में पहुंचे। बलभद्र ने जब द्वारिका नगरी के बारे में प्रश्न पूछा तो नेमिनाथ ने उसका निम्न शब्दों में उत्तर दिया—

दूहा—सारी वाणी संभली, बोलि नेमि रसाल ।

पूरव भवि अक्षर लखा, ते किम थाइ आल ।।७१।।

चुपइ—द्वीपायन मुनिवर जे सार, ते करसि नगरी संघार ।

मद्य भांड जे नामि कही, तेह थकी वली बलसि सही ।।७२।।

पौरलोक सवि ऊलटि जिसि, वे पंखव [illegible] तिसि ।

तह्मह सहोदर जरा कुमार, ते हनि हाथि मरि मोरार ।।७३।।

बार बरस पूरि जे तलि, ए कारण होसि ते ललि ।

जिणवर वाणी अमीय समान, सुणीय कुमर तब चाल्यु रानि ।।७४।।

बारह वर्ष पश्चात् वही समय आया । कुछ यादवकुमार अपेय पदार्थ पीने से उन्मत्त हो गए । वे नाना प्रकार की क्रियायें करने लगे । द्वीपायन मुनि को जो वन में तपस्या कर रहे थे उन्हें देखकर वे चिढ़ाने लगे ।

तिणि अवसरि ते पीधु नीर, विकल रूप ते थया शरीर ।

ते परवत था पाछावलि, एकि विसि एक धरणी ढलि ।।८२।।

एक नाचि एक गाइ गीत, एक रोइ एक हरषि चित्त ।

एक नासि एक उंडलि धरि, एक मुइ एक क्रीडा करि ।।८३।।

इणि परि नगरी आवि जिसि, द्विपायन मुनि दीठु तिसि ।

कोप करीनि ताडि ताम, देर गालवली लेइ नाम ।।८४।।

द्वीपायन ऋषि के शाप से द्वारिका जलने लगी और श्रीकृष्णजी एवं बलराम अपनी रक्षा का कोई अन्य उपाय न देखकर वन की ओर चले गये । वन में श्रीकृष्ण की प्यास बुझाने के लिए बलिभद्र जल लेने चले गये । पीछे से जरदकुमार ने सोते हुये श्रीकृष्ण को हरिण समझ कर बाण मार दिया । लेकिन जब जरदकुमार को मालूम हुआ तो वे पश्चाताप की अग्नि से जलने लगे । भगवान श्रीकृष्ण ने उन्हें कुछ नहीं कहा और कर्मों की विडम्बना से कौन बच सकता है यही कहकर धैर्य धारण करने को कहा—

कहि कृष्ण सुणि जराकुमार, मूड पणि मम बोलि गमार ।

संसार तणी गति विषमी होइ, हीयडा माहि विचारी जोइ ।।११२।।

करमि रामचन्द वनिगउ, करमि सीता हरणज भउ ।

करमि रावण राज जटिली, करमि लंक विभीषण फली ।।११३।।

हरचन्द राजा साहस धीर, करमि अधमि घरि आण्यु नीर।
करमि नल नर चूकू राज, दमयन्ती वनि कीधी स्याज। ११४॥

इतने में वहीं पर बलिभद्र आ गये और श्री कृष्ण जी को सोता हुआ जानकर जगाने लगे। लेकिन वे तब तक प्राणहीन हो चुके थे। यह जानकर बलिभद्र रोने लगे तथा अनेक सम्बोधनों से अपना दुःख प्रकट करने लगे। कवि ने इसका बहुत ही मार्मिक शब्दों में वर्णन किया है।

जल विण किम रहि माछलु, तिम तुझ विणु बंध।
विरीइ वनखिन सासीउ, साल्या असला रे संध ॥१३०॥

छन्द

यद्यपि रचना में मुख्यतः चुपई एवं दोहा छन्द है लेकिन वस्तु बंध छन्द, एवं दो ढालों का भी प्रयोग हुआ है। जैसे कवि को दोहा एवं चौपई छन्द में काव्य रचना में अभ्यस्त था। १६ वीं शताब्दि में दोहा एवं चौपई दोनों ही छन्द अत्यधिक लोकप्रिय हो चुके थे तथा पाठक भी इन्हीं छन्दों को पसन्द करते थे।

भाषा

बलिभद्र चुपई राजस्थानी भाषा की कृति है। यद्यपि कवि का गुजरात से अधिक सम्बन्ध था लेकिन राजस्थानी भाषा से उसे अधिक लगाव था। फूल्या (४२) रयण (रत्न) सिंघासण (सिंहासन) ३६, आव्या (आया ४८) मानथंभ (मानस्थंभ ५६) खंच्यु (खेंचा १०६) जाग्यु (जगना १२६) जैसे शब्दों को बहुलता से देखा जा सकता है।

बलिभद्र चुपई के कुछ वर्णन तो बहुत ही अच्छे हुए हैं। भगवान नेमिनाथ का समवसरण क्या आया मानों चारों ओर धन धान्य, हरियाली, सघन वृक्ष, बसंत जैसी बहार ही आ गयी इसी का एक वर्णन कवि के शब्दों में देखिये—

फूल्या वृक्ष फली घण लता अनेक रूप पंखी सेवता।
ठामि ठामि कोइल गहि गहि, मधु पल्लव केतकि महि महि ॥४२॥
जिणवर महिमा न लहुं पार, रतु छोडी तरु फलीया सार।
मारया भेद ते चरसि सदा, दुर्भाख्य वात न सांयणें कदा ॥४३॥

जैन दर्शन में कर्म सिद्धान्त पर गहन विवेचन मिलता है। कवि ने भी कर्मों की भाषा का सोदाहरण वर्णन करके कर्मों के प्रभाव की पुष्टि की है। इसी पर आधारित एक पाठ देखिये—

करमि ऋद्धि वृधि पामि बहू एके निरधन करमि सहू
करमि करि ते निश्चि होइ करम कारण नवि छूटी कोइ ।।११३।।
हरचंद राजा साहस धरि, करमि ग्रधम घरि ग्राण्यु नीर ।
करमि नल नर चूकू राज, दमयंती वनि कीधी त्याज ।।११४।।

लेकिन धर्म की महिमा कम नहीं है। जिसने भी धर्म को जीवन म उतारा उसी का जीवन सफल हो गया। बलिभद्र चुपई में कवि ने धर्म के महात्म्य का वर्णन करते हुए लिखा है—

धरमि धन बहू संपजि, राजा रमण भंडार ।
धरमि जस महीयल फिरि, उत्तम कुल ग्रवतार ।।१८२।।
धरमि मन चींत्यु फलि, दूर देशांतर जेह ।
हय गज रथ फिरि नित [illegible] करौं [illegible] ।।१८३।।
धरमि नर महिमा हुइ, धरमि लहीइ ज्ञान ।
धरमि सुर सेवा करि, धरमि दीजि दान ।।१८४।।
धर्म तणा गुण बहू ग्रछि, ते बोलया किम जाइ ।
चुगि फेरु टालसि, जो धुरि धर्म दयाल ।।१८५।।

3. विजयकीर्त्ति गीत

विजयकीर्त्ति भट्टारक थे तथा भट्टारक ज्ञानभूषण के शिष्य एवं भट्टारक शुभचन्द्र के गुरु थे। ये भट्टारक सकलकीर्त्ति की परम्परा के साधु थे। उनके महान् व्यक्तित्व के कारण परवर्ती कितने ही भट्टारकों एवं कवियों ने उनकी प्रशंसा की है। भ० कामराज ने उन्हें सुप्रचारक के रूप में स्मरण किया है।[1] भ० सकलभूषण ने यशस्वी महामना, मोक्ष सुखाभिलाषी आदि विशेषणों से उनकी कीर्त्ति गायी है।[2] भ० शुभचन्द्र भी उन्हें यतिराज, पुण्यमूर्त्ति आदि विशेषणों से अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। भट्टारक देवेन्द्र कीर्त्ति[3] एवं लक्ष्मीचन्द चांदवाड[4] ने भी अपनी कृतियों में विजयकीर्त्ति का गुणानुवाद किया है।

---

1. विजयकीर्त्तियो ऽभवन भट्टारकोपदेशिनः । जयकुमार पुराण
2. भट्टारकः श्रीविजयादिकीर्त्तिस्तदीयपट्टे वर लब्धकीर्त्तिः ।
   महामना मोक्षसुखाभिलाषी बभूव जैनावनी प्राच्यं पादः । उपदेश रत्नमाला
3. विजयकीर्त्ति तस पटधारी, प्रगटया पूरण सुखकार रे । प्रद्युम्न प्रबन्ध
4. तिन पट विजयकीर्त्ति जैवंत, गुरु ग्रन्यमति परवत समान । श्रेणिक चरित्र

ब्र० यशोधर ने भी भ० विजयकीर्ति की प्रशंसा में एक पूरा गीत लिखा है। जिससे पता चलता है कि उनकी विजयकीर्ति के प्रभावक जीवन में पूर्ण श्रद्धा थी। यशोधर ने लिखा है कि बचपन में ही विजयकीर्ति ने संयम धारण कर लिया तथा सकलकीर्ति की वाणी को सुन कर प्रसन्नता से भर गये थे। संसार को असार जानकर पंच महाव्रत स्वीकार किये तथा विश्वसेन मुनि के पास जाकर दीक्षा ले ली। वे बाईस परिषहों के सहने लगे।

विजयकीर्ति की [illegible] का नाम [illegible] था। विजयकीर्ति के प्रभाव के सामने अनेक राजा महाराजा नत मस्तक थे जिसमें मालवा, मेवाड़, गुजरात, सौराष्ट्र एवं सिंध के अनेक राजा थे। दक्षिण में महाराष्ट्र, कोंकण के प्रदेश थे। वे ३६ लक्षणों वाले थे तथा ७२ भाषाओं के जानकार थे। वे काष्ठा संघ के यति शिरोमणि थे।

आगम वेद सिद्धान्त व्याकरण भाषि भवीयण सार।
नाटक छंद प्रमाण बूझि नित जपि नवकार ॥
श्री काष्टसंघ कुल तिलु रे यती सरोमणि सार।
श्री विजयकीरति गिरुड गणधर श्री संघ करि जयकार ॥४॥

४ वासुपूज्य गीत

बंसपाल (बांसवाड़ा) नगर में वासुपूज्य स्वामी का जिन मन्दिर था। ब्र. यशोधर की उनके प्रति अतीव श्रद्धा थी इसीलिये सभी समाज से वासुपूज्य स्वामी के दर्शन, पूजा एवं स्तवन करने के लिये आह्वान किया है। कवि ने लिखा है कि वासुपूज्य स्वामी के आगे भाव विभोर होकर अष्टमकारी पूजा करने के लिये कहा है तथा निम्न प्रकार पूजा करने का फल बतलाया है –

अष्ट प्रकारी जिनवर पूज करेसि रे।
भावि भक्ति लक्ष्मी सक्ति संसार तेरसि रे॥
नयर बंशवाला मंडण तु स्वामी रे
ब्रह्म यशोधर असि घणु वलिवि
देयो लह्य गुणग्राम रे ॥१२॥

गीत की राग कामोद धन्यासी है जिसमें १२ पद्य है।

५. वैराग्य गीत

यह गीत राग धन्यासी में लिपि बद्ध है। इस गीत में मनुष्य जन्म की

दुर्लभता का वर्णन करते हुए विभिन्न प्रकार के पापों से बचने के लिये प्रेरणा दी गयी है। गीत बहुत छोटा है।

६. नेमिनाथ गीत

राजुल नेमि के जीवन पर यह कवि का दूसरा गीत है। इस गीत में राजुल नेमिनाथ को अपने घर बुलाती हुई उनकी बाट जोह रही है। गीत छोटा सा है जिसमें केवल ५ पद्य हैं। गीत की प्रथम पंक्ति निम्न प्रकार है—

नेम जी आघु न घरे घरे।
वाटडीयां जोइ सिवधामा (ला) डली रे ॥

७. नेमिनाथ गीत

यह कवि का नेमिनाथ के जीवन पर तीसरा गीत है। पहले गीतों से यह गीत बड़ा है और वह ६६ पद्यों में पूर्ण होता है। इसमें नेमिनाथ के विवाह की घटना का प्रमुख वर्णन है। वर्णन सुन्दर, सरस एवं प्रवाह युक्त है। राजुलि-नेमि के विवाह की तैय्यारियां जोर शोर से होने लगी। सभी राजा महाराजाओं को विवाह में सम्मिलित होने के लिये निमन्त्रण पत्र भेजे गये। उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम आदि सभी दिशाओं के राजागण उस बारात में सम्मिलित हुये। इसे वर्णन को कवि के शब्दों में पढिये:—

कुंकम पत्री पाठवी रे, नुप आवि अतिसार।
दक्षिण मरहठा गालवी रे, कुंकण कन्नड राउ ॥२२॥
गूजर मंडल सोरठीयारे, सिन्धु सबाल देश।
गोपाचल नु राजाउरे, ढीली आदि नरेस ॥ २३ ॥
मलवारी मारुयाडना रे, खुरसाणी सवि ईस।
बागडी उदल मजकरी रे, लाड गउडनाधीस ॥ २४ ॥

कवि ने उक्त पद्यों में दिल्ली को 'ढील्ली' लिखा है। १२ वीं शताब्दी के अपभ्रंश के महाकवि श्रीधर ने भी अपने पासचरिउ में दिल्ली को 'ढिल्ली' शब्द से सम्बोधित किया था।[1]

बारातियों के लिये विविध फल मंगाये गये तथा अनेक पकवान एवं मिठाइयां

१. विक्कमणरिंद सुपसिद्ध कालि, ढिल्ली पट्टणि धण कण विसालि।
सनवासी एयारह सएहिं, परिवाडिए वरिसह परिगएहिं ॥

बनवायी गई। कवि ने जिन व्यञ्जनों के नाम गिनाये हैं उनमें अधिकांश राजस्थानी मिष्ठान हैं कवि के शब्दों में इसका आस्वादन कीजिये—

पकवान नीपजि नित नवां रे, मांडी मुरकी सेव।
खाजा खाजडली दही थरां रे, फेवर घेवर हेव ॥ २५ ॥
मोतीया लाडू मूंग तणा रे, सेवइया अतिसार।
काकरी पापड सूधीयारे, साकिरि मिश्रित सार ॥ २६ ॥
सालीया तंदुल रूपडारे, उज्जल अखंड अपार।
मूंग मडोरा अति भला रे, घृत अखंडी धार ॥ २७ ॥

राजुल का सौन्दर्य अवर्णनीय था। पांवों के नुपूर मधुर शब्द कर रहे थे वे ऐसे लगते थे मानों नेमिनाथ को ही बुला रहे हों। कटि पर सुशोभित 'कनकती' चमक रही थी। अंगुलियों में रत्नजटित अंगूठी, हाथों में रत्नों की ही चूडियां तथा गले में नवलख हार सुशोभित था। कानों में झूमके लटक रहे थे। नयन कजरारे थे। हीरों से जड़ी हुई ललाट पर राखड़ी (बोरला) चमक रही थी। इसकी वेणी दण्ड उतार (उपर से मोटी तथा नीचे से पतली) थी इन सब आभूषणों से वह ऐसी लगती थी कि मानों कहीं कामदेव के धनुष को तोड़ने जा रही हो—

पायेय नेउर रणझणिरे, घूघरी नु घमकार।
कटियंत्र सोहि रुडी मेखला रे झूमणु झलक सार ॥४३॥
रत्नजड़ित रूड़ी मुद्रकारे, करियल चूड़ीतार।
बांहि बिठा रूड़ा बहिरखारे, हीयडोलि नवलखहार ॥४४॥
कोटीय टोडर रूयडुं रे, श्रवणे झबकि झाल।
नलविट टीलुं तप तपि रे, खीटलि खटकि चालि ॥४५॥
वांकीय भमरि सोहामणी रे, नयले काजल रेह।
कामिधनु जाणु तोडीडरे, नर मन पाड़वा एह ॥ ४६ ॥
हीरे जड़ी रूड़ी राखड़ी, वेणी दंड उतार।
मयणि पन्नग जाणे पासीउरे, योफणु लहि किसार ॥४७॥

नेमिकुमार ६ खण के रथ में विराजमान थे जो रत्न जड़ित था तथा जिसमें हांसना जाति के घोड़े जुते हुये थे। नेमिकुमार के कानों में कुण्डल एवं मस्तक पर छत्र सुशोभित थे। वे श्याम वर्ण के थे तथा राजुल की सहेलियां उनकी ओर संकेत करके कह रही थी यही उसके पति हैं ?

नवखणु रथ सोभणमि रे, रयण मंडित सुविसाल ।
हांसला अश्व जिणि जोतर्यो रे, तह लहधिजाय अपार ॥ ५१ ॥
कानेव कुंडल तपि तपि रे, मस्तिक छत्र सोहंति ।
सामला अण सोहामणुरे, सोह राजिल तोरू कंत ॥ ५२ ॥

इस प्रकार रचना में घटनाओं का अच्छा वर्णन किया गया है । अन्त में कवि ने अपने गुरु को स्मरण करते हुए रचना की समाप्ति की है ।

श्री यशकीर्ति सुपसाउलि, ब्रह्म यशोधर भणिसार ।
चलण न छोडउ स्वामी तणा, मुझ भवना दुःख निवार ॥ ६८ ॥
भणसि जिनेसर सांभलि रे, भ[illegible] [illegible] [illegible] अवतार ।
नव निधि तस घरि ऊपजि रे, ते तरसि रे संसार ॥ ६९ ॥

भाषा-गीत की भाषा राजस्थानी है । कुछ शब्दों का प्रयोग देखिये---

गासु'-गाऊंगा (१) कांइ करू-क्या करूं (१ नीकल्या रे-निकला (३) तह्या, ग्रह्या (८) तिहां (२१) नेउर (४३) आपणा (५३) तोरू (तुम्हारा) मोरू (मेरा) (५०) उतावलु (१३) पाठवी (२२)

छन्द--सम्पूर्ण गीत गुडी (गोडी) राग में निबद्ध है ।

८. मल्लिनाथ गीत

डूंगरपुर स्थित दि. जैन मन्दिर में मल्लिनाथ स्वामी की प्रतिमा के स्तवन के रूप में प्रस्तुत गीत लिखा गया है । इसमें उनके पंच कल्याणकों की महिमा का वर्णन किया गया है । गीत में ९ अन्तरे हैं । अन्तिम पाठ निम्न प्रकार है—

ब्रह्म यशोधर वनिविहुं हवि तहम तणुदास रे
गिरिपुर स्वामीय मंडणु श्री संघ पूरवि आस रे ।।४।।

९. पद साहित्य

ब्रह्म यशोधर ने अब तक १८ पद मिल चुके हैं जो विभिन्न राग-रागनियों में निबद्ध है । कवि ने अधिकांश पदों में नेमि राजुल का वर्णन किया है । कहीं राजुल की विरह-वेदना है तो किसी में तोरण द्वार से लौटने की घटना पर क्षोभ प्रगट किया गया है । ऐसा लगता है कि ब्रह्म यशोधर भी भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमदचन्द्र के समान नेमि राजुल कथानक से अत्यधिक प्रभावित थे और उनके विविध रूप पाठकों के सामने रखना चाहते थे । कुछ पदों में भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति की गयी है । एक पद अपने गुरु यशःकीर्ति की प्रशंसा में लिखा गया है ।

१७ वीं एवं १८ वीं शताब्दियों अपने गुरु भट्टारकों का गुण गान करने की प्रथा थी। इन पदों में इतिहास ने कितने ही तथ्य छिपे हुए होते हैं।

राग सबाब में कवि ने कबीरदास के समान ही अपने में संसार की गहनता पर चर्चा की है तथा चौरासी लाख योनियों में यह प्राणी अनेक पंथों एवं धर्मों में भटकता रहता है लेकिन उसे तारनहार कोई नहीं मिलता। इसलिये जिनदेव ही एक मात्र तारनहार है इन्हीं तथ्यों पर आधारित यह पद्य लिखा गया है। पद बहुत छोटा है लेकिन सार गर्भित है।

इस प्रकार ब्रह्म यशोधर का सम्पूर्ण साहित्य अत्यधिक महत्वपूर्ण है। वे अपने समय के समर्थ कवि थे तथा समाज में अत्यधिक लोकप्रिय थे। अपनी छोटी-२ रचनाओं के माध्यम से वे पाठकों में अपनी कृतियों के पठन-पाठन में रुचि पैदा किया करते थे। उन्होंने सब से अधिक नेमि राजुल से सम्बन्धित कृतियां लिखी थीं फिर चाहे वे छोटी हो या बड़ी।

कवि ने अपना पूरा साहित्य राजस्थानी भाषा में लिखा है। राजस्थानी भाषा से उन्हें अधिक लगाव था और उनके पाठक भी इसी भाषा को पसन्द करते थे। वास्तव में उस शताब्दि में होने वाले अधिकांश जैन कवियों ने राजस्थानी भाषा में अपनी रचना निबद्ध करने को प्राथमिकता दी थी।

बलिभद्र चुपई

प्रणमी जिनवर जिनवर रिसह,
जे नाम जुगला धर्म्म निवारणु।
संसार सागर तरण तारण
सारद सामिण वली नवु सुमति सारहु वेग मागु ।
कुंड कुबुधि सवि परिहरु हंस वाहणि तुझ पाय लागु ।
भाव भक्ति पुजा रची सहि गुरु चलण नमेस ।
कर जोडी कवियण कहतु हलधर चरित्र कहेस । १ ।

चुपई

न लहुं व्याकरण न लहु छंद न लहुं अक्षर न लहुं बिंद ।
हुं मूरख मानव मति नही । गीत कवित्त नवि जाणु कही ।। २ ।।
कोइल समरि जिम सहिकार । बप्पहीउ समरि जल धार ।
चक्रवाक रवि समरि जेम । गुरु वाणी हुं समरु तेम ।। ३ ।।
गुरु वचने अक्षर पामीइ । गुरु वचने पातिक वामीइ ।
गुरु वचने मन लहीइ ज्ञान । गुरु वचने घरि नवह निधान ।। ४ ।।

दूहा

सूरज उग्यु तम हरि, जिम जलहर वूठि ताप ।
गुरु वयणें पुण्य पामीइ, छूटि भवंतर पाप ।। ५ ।।
मूरख पणि जे मति लहि, करि कवित अति सार ।
ब्रह्म यशोधर इम कहि ते सहि गुरु उपगार ।। ६ ।।
सो ए गुरु वाणी मनि धरी, कवीयणनि आधार ।
रास कहुं रलीयामणु, अक्षर रयण भंडार ।। ७ ।।

चुपई

अवनीय जंबूदीप वखाण । भरह क्षेत्र तस भितर जाणि ।

सोरठ देश अपूरव कही, अवर देश कोइ ऊपम नही ॥ ८ ॥
नयर अपूरव दीसि घणा, कंचण रयण तणी नही मणा ।
वनि वनि वृक्ष तणु नही पार, रायण पुग अनि सहिकार ॥ ९ ॥
नागबेल खजूरी एल, दाडिम द्राक्ष मंडप घणु केल ।
वाव सरोवर कूप अपार, घरि घरि मंडया सतूकार ॥ १० ॥

द्वारिका नगरी वर्णन

नगर द्वारिका देश मझारि, जाणे इन्द्रपुरी अवतार ।
बार जोयण ते फिरतु वसि, ते देखी जन मन उलसि ॥ ११ ॥
नव खण तेर खणा प्रासाद, हद्द श्रेणी सम लागु वाद ।
कोटीधज तिहां कहीइ घणा, रत्न हेम हीरे नही मणा ॥ १२ ॥
याचक जननि देई मान, हीयडि हरष नही अभिमान ।
सूर सुभट एक दीसि घणा, सज्जन लोक नही दुर्ज्जणा ॥ १३ ॥
जिण भवने धज बहु फरिहरि, शिषर स्वर्ग सु वातज करि ।
हेममूरति पोढी परिमाण, एके रत्न अमूलिक जाणि ॥ १४ ॥
जिन चैत्याले मंडी घणी, दीठिया पथ्यारी बणी ।
धर्मवंत लोके घण पूर, दुःख दालिद्र तिहां नासि दूर ॥ १५ ॥
जिन मंदिर ते पूजा करि, भवह तणां पातिग परिहरि ।
झालिर ढोल भेर भर हरि, वेणां वंस मधुर सरकरि ॥ १६ ॥
नाचि खेला अवला बाल, वा इकांसी मरुज बिसाल ।
सरणाई रव सोहि घणा, धुलि पाप पूरव भव तणा ॥ १७ ॥
पुरी पाखि लगि रुह प्राकार, सोना सहित कोसी ससार ।
च्यार पोल तोरण सह चड़ी, माणिक मोती हीरे जड़ी ॥ १८ ॥
समुद्र सरीषी षाई जाण, अभिनवी इन्द्रपुरी परिमाण ।
उत्तम लोके पूरी खरी, इन्द्रादेशी धनपति करी ॥ १९ ॥

श्रीकृष्ण महिमा

तस पति सोई क्रिशन नरेंद, ग्रह गण माहि जिम पूनिमचंद ।
समद्र परवत मेर गिरीस, छपन कोडि कुल कृष्न अधीश ॥२०॥
बाल पणि मंडया सुर बार, धरयु गोवर्द्धन करि तीणी वारि ।
गोवत्स रख्या कारणि जेण, संख चक्र धनु साध्यां तेण ॥२१॥

काह्नड वेगि पंचालि गउ, कमल नालि वासिग नाथउ ।
एकि एकि पग्र सहस्र पंखड़ी, ते लेई आव्यु एकि घड़ी ।। २२ ।।
नाग सेज विसहर जिणी नडघु, दैत्य दाणव असुर सु भडथु ।
कंस मुष्ट चाणु रह काल' सोई मघसूदन नंद गोवाल ।।२३।।
दानि कल्पवृक्ष जे कही, वर्ण अट्ठारह पोषि सही ।
सूरपणि अरि जीता घणा, लेई दण्ड कीधां आपणा ।। २३/१ ।
रूपि मयण तणु अवतार, सोल सहस याक घणि नारि ।
रुषमणि सु पटराणी आठ, नयने मृग जीता वनि थाट ।। २४।।
रूपि रूयडी सीलि सती, पाप दूरकरि धरमि रती ।
देइ दान जिन पूजा सजि, कृष्ण रायनि अह निशि भजि ।।२५।।
सोनानी परिभलकि देह, दिन दिन वाधि नव नव देह ।
सीइ राणी सु विलसी राज, अनोपम अवर नहीं को आज।।२६।।
माता मंगलछि घरि जास, हेषारव घणा घोडां तास ।
इणी परि वलभि अवनी भूप, अवर राइ नही जास सरूप ।२७।।

दूहा

बलिभद्र प्रशंसा

तस बंधव अति रूयडु, रोहिण जेहनी मात ।
बलिभद्र नामि जाणयो, वसुदेव तेहनु तात ।। २८ ।।
कनक वर्ण सोहि जिसु, सत्य शील तनु वास ।
हेम धार वरसि सदा, ईहण पूरि आस ।। २६ ।।
अरीयण मदगज केशरी, हल आयुध करि सार ।
सुहड सुभट सेवि सदा, गिरूउ गुणह भण्डार ।। ३० ।।
पटराणी तस रेवती, सील सरोमणि देह ।
धर्मधुरा भालि सदा, पति सु अविहड नेह ।। ३१ ।।
सुख सागर भीलि सदा, जासु न लहि काल ।
बे बंधव इणी परि रमि, करि प्रजा प्रतिपाल ।। ३२ ।।

चुपई

गिरिवर गिरूह श्री गिरिनार- समोसरया तिहा नेमिकुमार ।
समवसरण सोहि मंभारण, रच्यु धनदत्ते कहुं वषाण ।। ३३ ।।

समवकरण का प्रभाव

वाहिल फिरता त्रण प्राकार, च्यार पोल सोभण घणसार ।
ठामि ठामि हीरा झलकंति, माणिक रयण पदारथ पंति ॥३४॥
मानर्थंभ धजा परिहरि, स्वर्ग समी जाणे स्पृद्धा करि ।
तेडि भवीयण देइ मान, एतु कहीइ पुण्य प्रधान ॥ ३५ ॥
आव्या सुरपति देव बहूत, करि भक्ति वासव संयुत ।
रयण सिंघासण मांड्यू चंग, बिठा जिनवर अनोपम अंगि ॥३६॥
एके छत्रधरि शिर देव, चुसठि चामर ढालि देव ।
भेरी रव घंटा एक घणा, सहिजी इन्द्र करि लुंच्छणा ॥ ३७ ॥
गुहिरि दुन्दुभि वंश विसाल, नाचि अपछरा बहु विधि ताल ।
वांइ वेणा एक गावि गीत, इणी परिरञ्जि जिणवर चित ॥३८॥
गढ भितरलि कोठा बार, नाट साल वेदी वर सार ।
मोती तणा चुक परि गरि, सची इन्द्र जिन पूजा करि ॥ ३९ ॥
चिहुं दिशि च्यार सरोवर भला, निरमल नीर रमि हंसला ।
हाटक हीरे बंधी पाल, कमलणि कमलणि मधुकर माल ॥४०॥
बाग चमुंमुख बहु आराम, पीइ नीर जिन लेइ विश्राम ।
खेचर सुर नर क्रीड़ा करि, मुगति तणी पयडी संचरि ॥ ४१ ॥
फूल्या वृक्ष फली घण लता, अनेक रूप पंखी सेवता ।
ठामि ठामि कोइल गहि गहि, मधु पलव केतकि महि महि ॥४२॥
जिणवर महिमा न लहुं पार, रतु छोडी तरु फलीया सार ।
माग्या मेघ ते वरसि सदा, दुर्भक्ष्य वात न सांभणे कदा ॥ ४३ ॥

बहा

गाइ तणां जे वाछरू, करि वाघिण सुं खेल ।
ससक समी सीयालणी, हरि कुञ्जर गति गेल ॥४४॥
केकी सु विसहर रमि, नाग नकुल विहुं नेह ।
अवर वात सवि परिहरु, जिणवर अतिसि एह ॥४६॥
सारंगीनि सिंघनो बालक रमलि करंति ।
मांजारीनि हंमलु फरी फरी नेह धरंति ॥४७॥

चुपई

एक दिवस माली वनि गउ, अचरित देखी उभु रह्यु ।
फल्या वृक्ष सवि एकि काल, जीवे वैर तज्यां दुःखजाल ।। ४७ ।।
फरी फरी जोश लागु बन्न, समोसरणि जिन दीठा चनि ।
आव्या जाणी नेमिकुमार, नमस्करी जंपि जयकार ।। ४८ ।।
लई भेट ...
रैवि गिरि जग गुरु आवीया, सभा सहित मिच आवीया ।।४९।।
कृष्ण राय तस वाणी सुणी, हरष वदन हूउ मिहुंघंड धणी ।
आलितोष पंचांग पसाउ, दिशि सनमुख थाई नमीउ राउ ।।५०।।
राइ आदेश भरी रयकीया, छपन कोडि हींयडि हरखीया ।
भव्य जीव आइ धस मसि, करि चौत एक मनमाहि हसि ।।५१।।
पट हस्ती पाखरि परिवरच्यु, जाणे ऐरावण अवतरच्यु ।
घंटा रवना चरण टणकार, विचि विचि घुघर घम घम सार ।।५२।।
मस्तकि सोहि कुंकुम पुन्ज, झरि दान तैं मधुकर गुन्ज ।
बांसि ढाल नेजा फरिहरि, सिणगारी राइ आगिल धरि ।।५३।।
चड्यु भूप मंगलनी पूठ, देइ दान मांगत जन मूठ ।
नयर लोक अंतेउर साथि, धर्मतणि धुरि दीधु हाथि ।। ५४ ।।

दूसरी ढाल । राग सही को ।

समहर सजकरी कृष्ण सांचरिया, छपन कोडि परिवरिया ।।
छत्र तणु शिर उपरि धरिया, राही रुषमणी समसरीया ।।
साहेलडी जिणवर वंदण जाइ, नेमितणा गुण गाइ ।
साहेलडी रे जग गुरु वन्दण जाइ ।। ५५ ।।
ढोलतिवल वणु वाजां गाजि, ससर संबद सबे छाजि ।
गुहिरनाद नीसाण ज गाजि, वेणा वंस विराजि ।सा०।जिण०।५६।
आगलि अपछर नाचि सुरंगा, चामर ढालि चंगा ।
देइय दान गुं धार जिम गंगा, हीयडलि हरष अभंगा ।
।साहेलडी० ।। ५७ ।।

मेगल उपरि चडीउ हो राजा, धरइ मान मन माहि ।
अवर राय मुझ समउ न कोई, नयणडे निम जिन चाहि ।
। साहेल० ।। ५८ ।।

मानथंभ दीठि मद भाजि लहु लहि धजाय ए रूडी ।
परिहरी कुंजर पालु चालि धरइ मान मति थोडी
।। साहेल० ।। ५९ ।।

स[illegible] माहि कृष्ण [illegible] मनि हर्षविचार ।
रयण सिंघासण बिठा दीठा सिवादेवी तणउ मल्हार
।। साहेल० ।। ६० ।।

समुद्रविजय ए अवर बहु राजा वसुदेव बलिभद्र हरषि ।
करीय प्रदक्षण कृष्ण सुं नमीया नयनडे नेमि जिन नरखि
।। साहेल० ।। ६१ ।।

वस्तु

हरषीया यादव यादव मनह आणंदि
पुरुषोत्तम पूजा रचि नेमिनाथ चलणे निरोपम
जल चंदन अक्षत करी सार पुष्प चरु अनोपम
दीप धूप सवि फलघणां रचीय पूज घन हाथ ।
कर जोडी करि वीनती तु बलिभद्र बंधव साथ ।। ६२ ।।

चुपई

स्तवन करि बे बंधव सार, जेठउ बलिभद्र अनुज मोरार ।
करसंपुट जोडी अंजुली, नेमिनाथ सनमुख संभली ।। ६३ ।।
भवीयण हृदयकमल नु सूर, जांइ दुःख तुम्ह नामि दूर ।
धर्म्मसागर नु सोहि चन्द, ज्ञान कर्ण इव वरसि इंदु ।। ६४ ।।
तुम्ह स्वामि सेवि एक घडी, नरग पंथि तस भोगल जडी ।
वाइ वेगि जिम बादल जाइ, तिम तुम्ह नामि पाप पलाइ ।। ६५ ।।
तोरा गुण नाथ अनंता कह्या, त्रिभुवन माहि घणा गहि गह्या ।
ते सुर गुरु बोल्या नवि जाइ, अल्प बुधि मि केम कहाइ ।। ६६ ।।

बलिभद्र चुपई

नेमनाथ जी अनुमति लही, बल केशव बे बिठा सही ।
धर्म्मोदेश कह्या जिन तणा, खचर अमर नर हरख्या घणा
॥ ६७ ॥

एके दीक्षा निरमल धरी, एके राग रोष परिहरी ।
एके व्रत बारि सम चरी, भवसागर इम एके तरी ॥ ६८ ॥

दूहा

प्रस्ताव लही जिणवर प्रति, पूछि हलधर वात ।
देवे वासी द्वारिका, तेतु अति हि विख्यात ॥ ६९ ॥
त्रिहुं खंड केरु राजीउ, सुर नर सेवि वास ।
सोइ नगरीनि कृष्ण नु, कीणी परिहोसि नास ॥ ७० ॥
सीरी वाणी संभलि, बोलि नेमि रसाल ।
पूरब भवि अक्षर लख्या, ते तिम थाइ श्राल ॥ ७१ ॥

चुपई

नेमिनाथ द्वारा भविष्यवाणी

द्वीपायन मुनिवर सार, ते करसि नगरी संघार ।
मद्य भांड जे नामि कही, तेह थकी वली बलसि सही ॥ ७२ ॥
पौर लोक सवि जलसि जसि, बे बंधव नीकलसु तिसि ।
तह्य सहोदर जराकुमार, तेहनि हाथि मरि मोरार ॥ ७३ ॥
बार वरस पुरि जे तलि, ए कारण होसि ते तलि ।
जिणवर वाणि अमीय समान, सुणीय कुमार तव
चाल्यु रानि ॥७४॥

कृष्ण दीपायन जे रषि राय, मुकलाविनि पर पंथ जाइ ।
बार संवछर पुरा थाइ, नगर द्वारिका आवु राइ ॥ ७५ ॥
ए संसार असार ज कही, धन यौवन ते थरता नही ।
कुटंब सरीर सहू पंपाल, ममता छोडी धर्म्म संभाल ॥ ७६ ॥
पजून संबुनि भानकुमार, ते यादव कुल कहीइ सार ।
लीधो छोडसु सवि परिवार, पंच महाव्रत लीधु भार ॥ ७७ ॥
कृष्ण नारि जे आठि कही, सजनराइ मोकलावि सही ।

अह्म आदेश देउ हवि नाथ, राजमतीनु लीधु साथ ।। ७८ ।।
वसुदेव नंदन विलखुथई, नमीय नेमि निज मंदिर गउ ।

द्वारिका दहन

बार बरसनी अविधज कही, दिन सवे पूग आवी सही ।। ७९ ।।
तरिण अवसरि आव्यु रषि राय, लेईय ध्यान ते रह्य‍ु मन माहि ।
अनेक कुमर ते यादव तणा, धनुष धरी रमवाध्या घणा ।।८० ।।
वनखंड परवत हींडिमाल, वाजि लूय तप्या ततकाल ।
जोतां नीर न लाभि किहां, अपेय थान दीठां ते तिहां ।। ८१ ।।
तिरिण अवसर ते पीधु नीर, विकल रूप ते थया शरीर ।
ते परवत था पाछा वलि, एकि विसि एक धरणी ढलि ।। ८२ ।।
एक नाचि एक गाइ गीत, एक रोइ एक हरषि चित्त ।
एक नासि एक दंडलि धरि, एक सूइ एक क्रीडा करि ।। ८३ ।।
इरिण परि नगरी आवि जिसि, द्वीपायन मुनि दीठु तिसि ।
कोप करीनि ताडि ताम, देइ गाल वली लेई नाम ।। ८४ ।।
पाप कर्म्म ते करि कुमार, पुहुता द्वारिका नगर मझारि ।
केशव आगिल कही तीणि वात, द्वीपायन अह्म ताड्यु तात ।। ८५ ।।

दूहा

कुमर ज वाणि संभली, केशव धरि अणाहि ।
अविहड अक्षर जे लख्या, ते किम पाछा थाइ ।। ८६ ।।

चुपई

केशव हलधर बे बन जाइ, कर जोडी मुनि लागा पाइ ।
दीन वचन बोलि अति घणा, क्षमु साधु कहि दया मणा ।। ८७ ।।
कार संज्ञा जाणी तिरिण राइ, अति दुःख आणी नगरी जाइ ।
अगिन कोप तब दीठु जइ' हलधर कृष्ण उपाय करय ।।८८ ।।
सागर वाल्यु नयरी माहि, तपि तेल जिम थडहड थाइ ।
नयर लोकते करि विलाप, पुणय भवनु प्रगट्यु पाप ।। ८९ ।।
एक बलतां बुंबार व करि, बालक लेइ एक नगरी फिरि ।
एक कहे ऊगायस माइ, एक दुख काया सह्यु न जाइ ।। ९० ।।
एक मोह्या धन धरती धरि, एक लक्ष्मी रखवालां करि ।
क्षमा एक अणसण आचरि, एके एक क्षमापन करि ।। ९१ ।।

नयर द्वारिका दीठु नास, हलधर केशव छोड़ी मास।
लेई तात जब गोपर गया, अडीय पाल तब उभा रह्या ॥ ९२ ॥

दूहा

देवे वाणी उच्चरी, कांइ भोला सारंग पाणि।
जाणी जिणवर जे कह्यु, ते किम हुइ अप्रमाण ॥ ९३ ॥

तजीय तात जब नीकल्या, सबल सहोदर वीर।
केशव विलखु इम भणि, क्षण एक पडपुवीर ॥ ९४ ॥

तीसरी ढाल दमयंतीनी

द्वारिकां दहन देवी करी, सखी वन खंड चालि रे, चालि रे
शालि दुख दोहिल घणीए ॥ ९५ ॥

मात तात सजन घणा सखी सपरिवार रे।
परिवार निसार सवे चिबटी गयां ए ॥ ९६ ॥
लक्षमीय मेल्ही भले गणी सखी रयण भंडार रे।
भडार निसार सोवण सवे तिहां रह्या ए ॥ ९७ ॥
पवन वेग तोरंगमा सखी मेगल माता रे।
मातानि विख्यात अंजन गिरि जिसाए ॥ ९८ ॥
रथवारू रलीयामणा सखी बहूपण सोहता रे।
सोहता रे निमोहता मन सविविह लीया रे ॥ ९९ ॥
नव नव नेह नारी तणा सखी शशिहर वयणी रे।
वयणीनि मृगनयणी मेहली गया ए ॥ १०० ॥
अगि आभूषण आवरता सखी वाकय वस्त्र रे।
वस्त्रनि शस्त्र रह्यां सनेक रतणां ए ॥ १०१ ॥
हय गज रथ आरोहता सखी सबिका संयुती रे।
पूती ते पहुती पायन पाणही ए ॥ १०२ ॥
रदन करि पगलां भरि सखी क्षण क्षण झूरि रे।
झूरिनि पूरि दिन ए दुख तणा ए ॥ १०३ ॥
कौशांब वन माहि सांचरिवे सुभट सुजाण रे।
जाणनि प्राण तणु संस हूउ ए ॥ १०४ ॥

केशव विलषु इस भाणि मुझ पावउ नीर रे ।
नीरनि वीरा वेगी माणीइ ए ।। १०५ ।।
वचन मनोहर उच्चरी सुणु माधव वीर रे ।
नीर हो माणु वडतलिवीसमु ए ।। १०६ ।।

दूहा

नीरज लेवा संचरयु, मनहुंन मेहिल माण ।
सुड करि सूतु सही, वड तलि सारंग पाण ।। १०७ ।।

चुपई

जरा कुमर जे आगि कह्यु, बार वरसि पहिलु वनि गयउ ।
लक्षु निलाड विधाता जेह, तिणि वनि कुमर पहूतु तेह ।।१०८।।
कृष्ण पाइ तव पद्मज दीठ, जाणे कोइ वनेचर वैठ ।
आगि लक्षुं ते करि सुजाण, धरीय धनुष तव पंच्युं बाण ।।१०९।।
करीय रोसनि मर्म जाम, लाग्युं पगि मनि चमक्यु ताम ।
जाग्यु कृष्ण ते हा हा करी, उपरि कुमर गउ संचारी ।। ११० ।।
धरि दुःख मनि कूटि होउं, धिग् धिग् दैव तिएसुं कीउं ।
पाप तिमर करी हूं उहूं अंध, करयुं कुकर्म्म मि हणीउ बंधु ।।१११।।
कहि कृष्ण सुणि जरा कुमार, मूढपाणि मम बोलिसमार ।

कर्मों की गति

संसारतणी गति विषमी होइ, हीयडा मांहि विचारी जोइ ।।११२।।
करमि रामचन्द्र वनि गउ, करमि सीता हरण ज भउ ।
करमि रावण राजजटली, करीमि लंक विभीषण फली ।। ११३।।
हरचंद राजा साहस धीर, करमि अधम घरि आण्युं नीर ।
करमि नल नर चूकु राज, दमयंती वनि कीधी त्याज ।। ११४ ।।
राय युधिष्टर वाचा सार सूरवीर रण चढि झूझार ।
द्यूत क्रीडा ते करमि करी, करमि अवनी कौरव हरी ।। ११५ ।।
करमि ऋद्धि वृधि पामि बहु, एके निरधन करमि सहु ।
करम करि ते निश्चि होइ, करम कारण नवि छूटि कोइ ।। ११६।।
उठउ वच्छ मत लाउ षेव, जब लगि नावि बलभद्र देव ।
कौस्तुभ मणि आली समझाइ, दक्षण मथुरां वेगु जाइ ।। ११७ ।।

पूरव बीतग जाइ कहे, राई युधिष्ठर पासि रहे ।
मोकलाबीनि गउ सुजाण, तब लगि कृष्ण छंड्या प्राण ॥ ११८ ॥
हलधर वन माहि जोइ वारि, गिरी कंदरनु न लहि पार ।
तोह तणु तणि दीठु गाम, कीउं नीर [illegible] राम ॥ ११९ ॥
हीयड़ा माहि पिरघु अचिछ, बंधव पाइ पीउं पाछिछ ।
कमल पत्र तब दुंदु कीउ, भरीय उदक पाछु वालीउ ॥ १२० ॥
पाणी पासि करी आवीउ, सुललित वाणी बोलावीउ ।
ऊठउ बंधव साहस धीर, मुखह पषाली पीउ नीर ॥ १२१ ॥
करि साद पुण बोलि नही, जाण्यु कृष्ण रिसाणा सही ।
आगि सहोदर मकरि मणहि, दुख सागर पडतांदि बाहि ॥ १२२ ॥
रैवि रमणते चिंति इसु, कृष्ण न उठि कारण किसुं ।
मुख छेवर ते पाछु कीउ, सासन देषिवि लघु थीउ ॥ १२३ ॥

दहा

बदन कमल सीचि सही, कंठि न जाइ नीर ।
तनु पोउ बंधव तणु, कुणि वनि पंडव घाउ बीर ॥ १२४ ॥
बांहि करी बिठु कीउ, मुखह निहालि सेह ।
एकाकी मेहली गउ तुं देवि दीधु छेह ॥ १२५ ॥
हा हा कार करी घणुं, झूरि बलिभद्र भाइ ।
वाइ अंदोल्यु तरु पडि, तिम धरणी गलि थाइ ॥ १२६ ॥
बे बंधव अवनी तल्या, अवरन कोइ सहाइ ।
वन पवनि जाण्यु सही, तु हलधर मेल्हि लषाइ ॥ १२७ ॥

ढाल

बलिभद्र का विलाप

विलषि, वीरा हुं एकलु वनि रहिणु न आइ ।
तुझ विण घड़ी एक पापसी वरसा सु थाइ ॥ १२८ ॥
बंधव बोलदि तुझ विण रहिण न जाइ ।
बंधव बोलदि मुदु मंसीराइ बंधव बोलदि ॥ १२९ ॥
जल विण किम रहि माछलु तिम तुझ विणु बंध ।
विरीइ वनडिउ सासीउ साल्या प्रसलारे संघ ॥ १३० ॥

परिभवि कि मुनि ह्य्याहु बोल्या कि अपवाद ।
दामोदर दुख देई गउ, रोइ सरलि साद ।। १३१ ।।
किसर फोडिमि पालडी, किउ थाप्या अघाट ।
श्रीरंग सब पेषुं सही, वसति उठीरे वाट ।। १३२ ।।
सतीय शृंगार कि अपहर्‌या, गुरु जनम लीयो रे मान ।
किजिन पूजामि परिहरी, वछवि हिल्यु सुंरानि ।। १३३ ।।
वनदेव तिविरणि कहुं, सुण वह रे अमाण ।
सरणि होतु तह्म तणि, कुणि लीया रे पराण ।। १३४ ।।
ऊलंभा कही इन किहनी, किहि सुं कीजिन रोस ।
कीधु कराम आपणि, दैवह दीजि न दोस ।। १३५ ।।
रविकर कहुं सुणु वातडी, सुणु निसपति चंद ।
विरीगउ किणी वाटडी, जीणि हण्यु रे गोविंद ।। १३६ ।।

दूहा

रे हीयडा तुझनि कहुं रखडि किमिम रोइ ।
बंधव मार्‌यु आपणु, सोइ अरीयण वनि जोइ ।। १३७ ।।
मोहनी कमि घणु मोहीउ, हृदय कमल प्यु मंघ ।
दक्षिण दिश प्रति संचरितु, केशव कीधु कंधि ।। १३८ ।।
अन्नज आणि अति भला, वनफल विविध विशाल ।
भोजन करु भाई भणि तु, भरी करीं मूकि थाल ।। १३९ ।।
दिन प्रति इम करतां हूया, हलधरनि षट्‌मास ।
मोह थकी माया करितु, नवि छोडि सब पास ।। १४० ।।
इन्द्र कहि अमरह प्रति, ज्ञान तणि प्रयोग ।
बलभद्र मरसि मोहीउ, तु सहिसि धर्म वियोग ।। १४१ ।।

चुपई

इन्द्र द्वारा प्रतिबोध

इन्द्र कहि तह्मे जाउ मही, प्रतिबोधु हलधर तिहा रही ।
चाल्या सुरसहि लही आदेस, मवनीय रूप करिय असेस ।। १४२ ।।

असुर मली ब्रुधी कीधी नवी, पथर उपरि पोयण ठवी ।
सींचि नीर कमल निताम, तिणि अवसरि तिहां पहुतु राम
॥ १४३ ॥

कहि बलिभद्र तह्मे भोला थाइ, पथर उपरि मूल न जाइ ।
सुणु कुंयर ए मूड जागसि, तु पथरि पोयण लागसि ॥ १४४ ॥
करीय रोस आवु संचरि, वेलू लेई एक घाणी भरि ।
उभु रही बल पूछि वात, वेलू पीलु सुण हो भ्रात ॥ १४५ ॥
शिक्षा पीक्षण स्नेह न होइ, मूरख होइ विचारी जोइ ।
वेलू ताडि तेल न तोइ, मूउ मडु नवि जीवि कोइ ॥ १४६ ॥
रोस करी पगआभरि, असुर उपाय अनेक करि ।
विषनु वृक्ष एकाति मही, अमृत फल कहि लागि सही ॥ १४७ ॥
सीरी कहि मम बोलि असार, विष अमृत किम होइ गमार ।
विष अमृत नवि हुइ ताम, मुउ मडु किम जीवि राम ॥ १४८ ॥
बलिभद्र मछर मनि परिहरि, हीयडा माहि विमासणि करि ।
अमर कहि साचु य सुजाण, मुइ मडि नवि आवि प्राण ॥ १४९ ॥
अज्ञान पणि शब वह्यु सरीर, दहन कहं हवि केशव वीर ।
अदह मुंडहु पामु जिहां, कान्हड काया जालु तिहां ॥ १५० ॥
शव लेई मूक्यु पृथ्वी जाम, धरणी बोलि सुणि हो राम ।
दहन करे वंचिति ताम, अनेक वार बाल्यु इणि ठाम ॥ १५१ ॥
तु जिहां जिहां जाई उभु रहि, तिहां तिहां अवनी अधिकु कहि ।
परवत माहि पेथी वाट, चइच् तुंगेश्वर विषमाघाट ॥ १५२ ॥

दूहा

संस्कारि औरंनि, देखी दुढंर ठाइ ।
अनुप्रेक्ष्या बारि भली, तु चिंति हलधर राइ ॥ १५३ ॥
हीयडा सुं हरषि भल्यु, कहिम करेश मोह अयाण ।
मोह थकी जे नर मूया, ते पाम्या दुख खाणि ॥ १५४ ॥
वली वली हुं तुझ सुं कहुं, रहे चित्त निज ठाम ।
धर्म अहिंसा सुं रमि सत्तु, सरसि तुझ काम ॥ १५५ ॥

पंच महाव्रत परिवरया, पंच सुमति सुविसाल ।
संसार तणा संग परिटर्या, तु मुक्यू मायाजाल
॥ १५६ ॥

चुपई

तप साधना

पंचेन्द्री नि क्यार कषाइ, मयण मल्ल सु मुंज्यु ठाइ ।
लक्ष चुरासी समचित करी, क्षमा खडग जीणि करि धरी
॥ १५७ ॥
मद मैगल जे आठइ कही, तप केशरी विदार्या सही ।
मोह मछर ग्रहि विषनाम, वैनतेय जिम मंज्यु ठाम
॥ १५८ ॥
मन थी माया कीधी दूर, समता रस घणु भीलि पूर ।
क्रोध लोभ बे बोधी जेह, संतोष सेल गही कीधा छेह
॥ १५९ ॥
जिणवर दीक्ष्या लाग्यु वास, हलधर ध्यान रह्या षट् मास ।
काया स्थिति करवा कारणि, बल मुनिवर उत्तरि पारणि
॥ १६० ॥
चिंता पुर पुहुचि रषिराय, ईर्यापथ सोधंतु जाइ ।
रूप तणु नवि लाभि पार, पगि पगि ऊभी नरषि नारि
॥ १६१ ॥
एक कहि ए सुरपति होइ, एक कहि ए नल वर सोइ ।
एक कहि ए नशपति चंद्र, एक कहि ग्रहिपति नागेन्द्र ॥ १६२ ॥
एक कहि सावित्री स्वामि, एक कहि सीता पति राम ।
एक कहि गिरजा पति ताम, एक कहि ए रति पति काम
॥ १६३ ॥
निरमल चित बोलि एक नार, सुणु सखी कहुं तह्म वचन विचार ।
पूरव भवि पुण्य कीधु कोइ, तु ग्रह्म इसु बंधव बेटु होइ ॥१६४॥
एक नारि मनि धरि विकार, ए हवु नरही हणि संसार ।
तु मानव भव कहीइ सार, निश्चि लहीइ ए भरतार ॥ १६५ ॥

दूहा

यति मंत्री मुनिवर प्रति, मूकि मुक्तर नीसास ।
कुंभ बरांसि कामनि, दिइ बालक गलि पास ॥ १६६ ॥
हलधर करुणा हीअ धरी, देखी बालक फंद ।
मुनिवर कहि सुणि कामनी, हृदय कमल थई अंध
॥ १६७ ॥

चपई

मि देख्यु तुझ रूप असंभ, मोरुं चित्त थंम्यु जिम थंभ ।
सुणि हो स्वामी कारण तेउ, मोह थकी नवि जाण्यु भेउ
॥ १६८ ॥
तव मुनिवर पाम्यु वैराग, नयर माहि नही जावा लाग ।
अन्न तणु तिणि कीधु त्याग, पग पग जोइ परवत भाग ॥ १६९ ॥
चडयु तुंगेश्वर परवत शृंगि, लीया नाम मन सुधि अभंग ।
पिठु गिरिवर किंदर जाइ, ध्यान धरी बिठु रिषिराइ ॥ १७० ॥
तृषा काल वृक्ष मूले रहि, दंसमसक परीसा बहु सहि ।
वरसि मेघनि वाजि वाय, शृंगि उघाडुछि यतिराय ॥ १७१ ॥
सीतकाल सी वाजि बहू, हेम तणा भर बहुना सहू ।
ठौरि नदीनि बालि रान, तिम तिम मुनिवर लाग्यु ध्यान
॥ १७२ ॥
उह्नालि लू उड्ही वाय, तपन ताप तनु सह्यु न जाय ।
द्वादश दमह परीसह कह्या, तीह तणी परि सुधा सह्या ॥ १७३ ॥
उष्ण शीत वृष अल्लि काल, शरीर आदि सुख तज्युं रंगाल ।
ध्यान अगनि तप साध्या सार, कर्म काष्ट जिणि दह्या विकार
॥ १७४ ॥
संयम साध कीउं धर्मध्यान, तजीय तनु गउ अमर बिमान ।
स्वर पंचमि जाई स्थिति करी, अमर वधू जिणि लीलांवरी
॥ १७५ ॥

जय जय कार करि बहु देव, अह् निशि करि तह्म पाय सेव ।
वाइ मादल वंश कंसाल, नाचि अपछर बहु विधि ताल ।। १७६ ।।
जरा न आवि तिहां ते कदा, नवयौवन सुखसेवि सदा ।
कनक तेज जिमि झलकि काय, परिपूरण सवि कहीइ आयु
।। १७७ ।।
आधि व्याधि नवि पामि किसी, निरमल देह अमर तिहां तिसी ।
मनवांछित फल देव मझरि, ते सहू धर्मतणु उपगार ।। १७८ ।।
पुरवना तपतणि प्रयोग, अमरी सरसावससि भोग ।
ब्रह्म यसोधर दाखि कही, ते तु पुण्यि पदवी लही ।। १७९ ।।
चुथि काल तीर्थंकर सार, भवतरसि सोइ भरह मझारि ।
ध्यान करीनि मनरोधसि, लहीय ज्ञान भवीयण बोधसि ।। १८० ।।
घाति कर्मनु करीय विणास, मुगति क्षेत्र जाई करसि वास ।
धर्मतणां फल एहू ज जाणि, धर्म करंता म करु काण ।। १८१ ।।

दूहा

धरमि धन बहु संपजि, राजा रयण भंडार ।
धरमि जस महीयल फिरि, उत्तम कुल अवतार ।। १८२ ।।
धरमि मनचींत्यु फलि, दूरदेशन्तर जेह ।
हय गज रथ घिरि नित वसि, धर्मतणां फल एह ।। १८३ ।।
धरमि नर महिमा हुइ, धरमि लहीइ ज्ञान ।
धरमि सुर सेवा करि, धरमि दीजि दान ।। १८४ ।।
धर्मतणा गुण बहु अछि, ते बोल्या किम जाइ ।
चुगिफेरु टालसि जे, धुरि धर्म दयाय ।। १८५ ।।

प्रशस्ति

श्री रामसेन अनुक्रमि हुया, यसकीरति गुरु जाणि ।
श्री विजसेन पदि थापीया, महिमा मेर समाण ।। १८६ ।।
तास सख्य इम उच्चरि, ब्रह्म यसोधर जेह ।
भूमंडलि दणीयर तपि, तारहु रास चिर एह ।। १८७ ।।

संवत पनर पंच्यासीइ, स्कंध नयर मभारि ।

भवणि अजित जिनवरतणी, ए गुण गाया सार ।। १८८ ।।

वस्तु बंध

भणि भवीयण भवीयण चरित, ए सार हरष करी

हलधर तणुं हीया माहि सुणि ज्ञान आणीय

नरभव सुख सेवू अनुभवी सरग रिधि बहु लहि असमाणीय

देवी सुर सेवा करि, इन्द्र तणि अवतार ।

भुगति रमणि अनुक्रमि वरि जिहां सौख्य तण भंडार ।। १८९ ।।

इति बलिभद्र चुपई ।।

विजयकीर्त्ति गीत

सरसति सामिणि चलणोहुं लागुं य मांगुय मति अति निरमलीए

गायसुं यतीवर विजयकीर्त्ति गुरवर वर

आलु रे माता भारती ए चडातु ।।

वेगि वर वर आलि वाणी हंस वाहिणी भामिनी ।।

करिहि कमंडलु वेण पुस्तक जाप जपति तुं स्वामिनी ।

असुर सुर नर खचर दानव पाय पंकज नुति करि ।

भाव भगति मनह रंकति अनेक योगी अणुसरि ।।

रायल कवीयण वि दुव वाक चलण तोरे नित नुलि ।

दिइ विद्या विवेक वाणी लेहनो संकट टलि ।

कमल केतुकि कुंद करणी पूजा करी करूं आरती ।

करह जोडी पाय लागु दिउ वर वर भारती ।। १ ।।

भारती तूठीय अक्षर आलए मोरूं मन चालिरे गुरु चलणे सही

सहि गुरु स्वामीय तणि परसादिय वाछिय काज केहुं नही ए ।।च.।।

वादिय काजि केहु नही रे गाइसुं गुरु राय

एक चिति मकह सुधि होइ घरी बहु भाउ ।

बाला पणि बुधि ऊपनी चारित्र लेवा चंग ।

श्री सकलकीरति केरीय वाणी सुणी हुदि हूउ रंग ।

सुणी हृदि हूउ रंग स्यड्ड ज्ञान ध्यान धुरा धरि ।

पंच महाव्रय प्रबल प्रौढां लेहु लेवा चित करि ।

ससार एह असार जाणी संग सघला परिहरि ।

हेलांहु मयण हराबीउ संयम श्री मुनिवर वरि ।। २ ।।

मुनिवर विश्वसेन संहयि आपए संयम आपण स्यडुं ए ।

पंच महाव्रत पंच सुमति अण गुपति सहित मुनि ऊजलु ए ।।च०।।

उजलउ मुनिवर सदा सोहि उपमा गौतम सार ।

जंबूय कुमर ज अवतरयु जाणे लेवा चारित्र भार ।

अनेक वादी विकट कविजण गुंजता गजराय ।
सांहनी परि सबल सुं फलि भंजीया भडवाइ ।
आठिय मद जे कर्म तिलां प्रबल नाग प्रचंड ।
सुपर्ण नीपरि रूडपि लीया कायां ते सत खंड ।
काम क्रोधह मान माया मोह रीख्यु जेह ।
बावीस परीषह जीपतु धरीय निरमल देह ।। ३ ।।
निरमल देहछि एह रवि रायहि माता रंगीय उयरि उपनुए ।
साह धीमिग सुत कुल अजू याणए ।
अनेक राजा चलणे नमिए ।। चढाउ ।।
अनेक राजा चलण सेवि मालवी मेवाड ।
गुजर सोरठ सिधु सहितिअ अनेक भड भूपाल ।
दषण मरहठ चीण कुंकण पूरवि नाम प्रसिद्ध ।
छत्रीस लक्षण कला बहुतरि अनेक विद्या रिधि ।
आगम वेद सिद्धान्त व्याकरण भाषि भवीयण सार ।
नाटक छंद प्रमाण बूझि नित जपि नवकार ।
श्री काष्ठ संघ कुल तिलु रे यती सरोमणि सार ।
श्री विजयकीरति गिरूड गणधर श्री संघ करि जयकार ।। ४ ।।

इति श्री विजयकीर्त्ति गीत ।।

वासुपूज्य गीत

राग-कामोद धन्यासा

सगुण सलूणु वासपूज जिन सोहि रे ।
भव भय भंजन जन मन रंजन भवीयण वा मन मोहि रे ।।
भावु साहेलडी वेगि वारमलावु रे ।
हंसता रमतां जिन हरि जावु वासुपूज
गुण गावु रे ।। भावु ।। १ ।।
नरमल जलना कुंभ जिनहरि वालु रे ।
स्वामीनि तनु तेह ज ढालु मनना पाप पखालुं रे ।। भावु ।। २ ।।

चंदन केशर कपूर घसावु रे।
जेहनि नाभि कुसुम फुलावु आंगी अंगि रचावु रे।। आवु ।। ३ ।।
सालि सुगंधी तेहना तंदुल चारू रे।
जिनजी आगलि पुंज करीजि आलि निज गुण
सारू रे ।। आव ।। ४ ।।

नेउल वालु फुल सरीनांहारू रे।
स्वामी निशि निशि पूजा कीजि देह भवचा
पारू रे ।। आवु ।। ५ ।।

मोतीया लाडू वटक विशालू रेवा फीणि,
अति घणा फीणी घेवर रसालू रे ।। आवु ।। ६ ।।
लड्डू थानि पूरी सोम्रण घालू रे,
जिनजी आगिल पूजा कीजि स्वामी संकट टालू रे ।। आवु ।। ७ ।।
रत्नयोति जिम आरती अतिहि उत्तंगू रे,
सुगति तणा गुण सेवा कारणि दीवा करू
सुचंगू रे ।। आवु ।। ८ ।।

सघर धूप जे कृष्णागर वर सारू रे,
जिनजी आगिल तेह दहीजि टालि कर्म विकारू रे
।। आव० ।। ९ ।।

करणां चारू सोपारी नव सारू रे,
श्रीफल सरसी पूजा कीजि लहीइ सुख अपारू रे
।। आवु० ।। १० ।।

अष्टप्रकारी जिनवर पूज करेसि रे,
भावि भक्ति लक्ष्मी सक्ति संसार तरेसि रे ।। आवु० ।। ११ ।।
नयर वंशवाला मंडण नु स्वामी रे।
ब्रह्म यसोधर अतिघणु वीनवि देयो तह्म गुणग्राम रे
।। आवु० ।। १२ ।।

इति वासुपूज्य गीत ।।

वैराग्य : गीत

राग धन्यासी

संसार सागर एह गहन छि रे
भमिउ भमिउ चुगि जाण जिणवर रे ।।
परमपुरुष एक तऊ लध्यु रे
जिम छुटुं नरबाण स्वामी रे ।।
त्रिभुवन तारण तुं वडली रे,
तारु तारु गहन संसार जिणवर रे ।।
समरथ नाणी निमि मणसरच्यु रे,
जनम मरण दुखटाल स्वामी रे समरथ ।। १ ।।
लाख चुरासी हिं [illegible] रे
वसीउ वसीउ बार बहुत रे । जिणवर रे ।
धरम न कीधुं एक दया धरीरे ।
पाप पटल पंकि खूत, स्वामी जिणवर रे ।। २ ।।
असन परिणयमि अतिघणां रे ।
कीधी कीधी जीवविणास जिणवर रे ।
पर नारीय लंपट धकिरे पाम्यु पाम्यु नरयावास स्वामी
जिणवर रे ।। ३ ।।
तृष्णा नदीइ प्राणी ताणीउ रे
कीधा कीधा अतिघणा द्रोह, जिणवर रे ।
च्यारे कषाय जीव गलि धर्यु रे
राल्यु राल्यु दुरगति खोह, स्वामी जिणनर रे । ४ ।
पांचे इन्द्रीए प्राणी परिभम्यु रे
मयण धूताकमली माहि, जिणवर रे ।
पंथि चलाव्यु ए पातिग तणि ए ।
समरथ बाहरि नुं बाइ, स्वामी जिणवर रे ।। ५ ।।
पुन्य पसां इमि तुं पामीउ रे,
सफल जनम हूउ आज, जिणवर रे ।
ब्रह्म यसोधर हरषि इम कहि रे,
अवर नही मुझ काज, स्वामी रे जिणवर रे ।। ६ ।।

इति वैराग्य गीत

नेमिनाथ गीत

राग गुडी

सारद सामणि वीनवु' रे, माग्यु' एक पसाउ ।
दिउ वाणी ब्रह्म निरमली रे, गासु' नेम जिनराउ ।
साभला वण वीनवि राजिल नारि पूरव भव नेहु संभारि ।
यादव जीवी नवि राजिल नारि मुझ कांइ कर निरधारि ।
दयाल राय वीनवि राजिल नारि ॥ १ ॥
बसंत रमेवा कारणि रे पुहुता वनह मझारि ।
सोल सहस्र गोपांगना रे सरसा नेमि मोरारि । साम ॥ २ ॥
वाला केरा मांडवा रे सुरतर कुंकम पुंज ।
केसूय मरूउ मोगरू रे पाडिल किरणी कुंज । साम ॥ ३ ॥
चंपक बेउल वुलसरी रे तेह तणां कंठि हार ।
सिर घालि जासूलडां रे कमले ताडि कृष्ण नारि । साम ॥ ४ ॥
चंदन केशर घसि करी रे वापीय पूरी सार ।
गलयंत्र सुं वली छांटणां रे रमिते विविध प्रकार । साम ॥ ५ ॥
क्रीडा करी नेम नीकल्या रे वापीय तीरि जाणि ।
भावेज सुं तव इम भण्यु' रे पोतिनी चोउ माणि । साम ॥ ६ ॥
नेमि वयण सुणी करी रे जांबुवती धरि मान ।
ए वितु' ग्रह्मनि न दीजीइ रे, देउर नही तुह्म सान । साम ॥ ७ ॥
उरग सेयां सुं तह्मे विसकरी रे पूरच्यु पंचायण ।
हे वहरणि विति ग्रह्मनि न आदरि रे गोपी केरु देव । सा० ॥ ८ ॥
भ्रेपणु' देवाकारणि वली अछि तुझ आणि ।
इम जाणु नरवाहु सिरे तु परणु नेमनाथ । सा० ॥ ६ ॥
जांबुवती वयण सुणी रे कोपि चउ रे कुमार ।
मेगलनी परिमल पतु रे पुहुतु आयुध द्वारि । सा० ॥ १० ॥
नागसेया जाई पुढीउ रे पुरच्यु पंचायण हेव ।
तेहनि सब्दि धरा धडहडी रे चमक्यु केशवदेव । सा० ॥ ११ ॥
मुझ उपरि धरि आवीउ रे दैत्य दाणव नर राउ ।
महारु संख कुणि पूरीउ रे तेहनु' फेडु' हुं ठाव । सा० ॥ १२ ॥

कृष्णपुलि उतावलु रे आयुध साल मझारि ।
देखीय ग्राक्रम नेमनु रे भाखु थयउ अपार । सा० ॥ १३ ॥
अबला वयण सुणी करी नेम तें मु' केहु रोस ।
उरग थाइ ह्वइ आकुलु रे एसु' केहु दोस । सा० ॥ १४ ॥
कष्णइ नेम संतोषीया रे पुहुता निज निज गेह ।
बलिभद्र सु' आलोचीउं रे अह्म राज हरेसि एह । सा० ॥ १५ ॥
समुद्र विजय राणां मंदिरे रे कान्हड पहुता जाइ ।
प्रणमीय कहि कार्कीयनि रे करू नेमि वीवाह हो । सा० ॥ १६ ॥
शिव या कहि कृष्ण सांभलु रे तुंछि अह्म कुलि धीर ।
तिच्छति अह्म चिंता केही रे परणावे ताहा व वीर
। सा० ॥ १७ ॥
उग्रसेन राया मंदिरे रे पहुता देव मोरारि ।
धी परणावु नेमनि रे नेगिम लाउ वार । सा० ॥ १८ ॥
यादव ना कुल नंदनि रे लग्न लीउं तिणी वारि ।
जूनिगढि द्वारामती रे उत्सव बहुत अपार । सा० ॥ १९ ॥
घरि घरि गुडीय उच्छलि रे घिरि घिरि मंगलाचार ।
तलीयां तोरण ऊभीयां रे गीत गाइ अज्ञ दसार । सा० ॥ २० ॥
मोटा मंडप तिहां रच्या रे थांभ कनक केरा सार ।
वेल भरी पर वालडेरे रयणमि पोल पगार । सा० ॥ २१ ॥
कुंकुम पत्री पाठवी रे नृप आवि अति सार ।
दक्षिण मरहठ मालवी रे कुंकण कंनड पाउ । सा० ॥ २२ ॥
गूजर मंडल सोरठीया रे सिंधु प्रवाल देश ।
गोपाचल नु राजीउ रे ढीली आदि नरेस । सा० ॥ २३ ॥
मलबारी मारूयाडना रे खुरसाणी सुविईस ।
वागडीउ दल मज करी रे लाड गउडना धीस । सा० ॥ २४ ॥
बंगनि वंग तिलंगीया रे उर मेवाडु राय ।
भाद महरमम चीणना रे द्वारावती सहू जाइ । सा० ॥ २५ ॥
धारिक थडडी चारुली केला अषोड बदाम ।
थांडि सु' रायण भली रे श्रीफल खरजूर जाणि । सा० ॥ २६ ॥

पकवान नीपजि नित नवां रे मांडी मुरकी सेव ।
खाजां षाजलडी दहीथरां रे फेवर घेवर हेव । ।। २७ ।।
मोतीया लाडू मगतप्यारे सेवईया अति सार ।
काकरी पापड सूषीया रे साकिरि मिश्रित सार । सा० ।। २८ ।।
सालीया तंदुल रूयडा रे उज्वल अखंड अपार ।
मुग मंडोरा अति भला रे घृत अखंडी धार । सा० ।। २६ ।।
विवध वानीनां सालनां मूकि यादव नारि ।
कर्पूरि आरयु करं वलु रे छोल प्रीसि एक सार । सा० ।। ३० ।।
वारयां नीर अति निर्मला रे जाणे जे सु'गंग ।
चलूय करावि यादव पोषिता देसलीय आलि एक चंग
। सा० ।। ३१ ।।
उज्वल वस्त्रश कोमलां रे करे ते लु'छन कारंति ।
पान सोपारी चेउलां रे कपूरि सु' आणी धरंत । सा० ।। ३२ ।।
चंदन करपूर केसरि रे भरीय कंचोली एक जाइ ।
यावव करि वली छांटया रे हीयडलि हरष अपार । सा० ।। ३३ ।।
भान पजूनि सु' बलिभद्र रे नेमनि करि सिणगार ।
पु'पत्तरि शिरि सोभतु रे काने कुंडल गलि हार । सा० ।। ३४ ।।
मस्तकि सोहि रूडु' नवग्रहु रे बाहि बाजू बंध सार ।
आंगलीए रूडी मु'द्रडी रे पहिरघु सवि सिणगार । सा० ।। ३५ ।।
गोपीयपति तव इम भणि रे देवमलाउ वार ।
धव धव तेम्हु' सटपटि रे यादव लेइ सिणगार । सा० ।। ३६ ।।
राही रूपाणि चंदावली रे रुक्मिण केसव नारी ।
शिवा देवी माता मनि रली रे पु'पि नेमिकुमार । सा० ।। ३७ ।।
गय गुडघा हय पाखरघा रे रथे कीया सिणगार ।
पायक चालि मनिरली रे जानत लाभि पार । सा० ।। ३८ ।।
वाजित्र वाजि अति घणां रे ढोल तिवल कसाल ।
भेरीय संख सोहामणा रे गाजि नीसाण अपार । सा० ।। ३६ ।।
नेम जिन रथि आरोहीया रे होउ जय जयकार ।
याचक जननि मनि मनि रली रे आपिय सोवण सार
। सा० ।। ४० ।।

सारथीइ रथ खेडीउ आही मीनी जाइ ।
भावीयभरव कलकले रे यमणु राजा थाइ । सा० ॥ ४१ ॥
बारु उतारि एक कामनी रे पात्र नाचि अति चंग ।
घप-मप-मद्दल रण कीउं रे बेरणा ताल सुरंग ॥ सा ॥ ४२ ॥
हय गय रथ सवि सांचरि रे वेहि स्राउ रे प्रकास ।
पाताल नु रायसल संत्यु रे वनिता देइ एक भास ॥ ४३ ॥
लगन नु दिन जब आवीउ रे रायमि करि सिरणगार ।
याद रहूली कांचली रे पहिरणि फाली सार ॥ सा ॥ ४४ ॥
पायेय नेउर रणझणि रे घूघरी नु घमकार ।
कटियंत्र सोहि रूडी मेखला रे झूमणु झलकि सार ॥ ४५ ॥ सा ॥
रत्नजडित रूडी मुद्रिका रे करीयल चूडी तार ।
बाहि बिठा रूडा बहिरया रे हीयडोलि नवलख हार
॥ सा ॥ ४६ ॥
कोटिय टोडर रूयडु रे श्रवणे झलकि झाल ।
नल विट टीलु तप तवि रे घीटली घटकि चालि ॥ सा ॥ ४७ ॥
वांकीय भमरि सोहामणी रे नयणे काजल रेह ।
कामिघनु जाण ताडी उरे नर मन पाडवा एह ॥ सा ॥ ४८ ॥
हीरे जडी रूडी राखडी रे वेणीय दंड उलारि ।
मयणि पन्नग जाणे पासीउ रे गोफणु लहिकि सार
॥ सा ॥ ४९ ॥
मस्तकि मुगट सोहामणु रे सिहिथि सींदूर पूर ।
चोउ चंदन रूडां फूलडां रे पान बीडीय प्रमूल ॥ सा ॥ ५० ॥
सवि सिरणगार साजी करी रे उपरि उडीय धाट ।
धवल देइ वर कामनी रे जय जय बोलि भाट ॥ सा ॥ ५१ ॥

नेमि की बारात

सखी ये राजिल परवरी रे मालीइ पुहुती जाम ।
गुण चडी ओइ चालीए रे कहु सखी केहु मोह स्वाम
॥ सा ॥ ५२ ॥
नंव घणु रथ सोवणमि रे रयण मंडित सुविसाल ।
हींसला अस्व जिणि ओतर्या रे लहलहि धजाय अपार
॥ सा ॥ ५३ ॥

कानेय कुंडल तप तपि रे मस्तिक छत्र सोहंति ।
सामला वरण सोहामणु रे सोइ राजिल तीह कंत ॥ सा ॥ ५४ ॥
आपणा कंतनि निरखता रे हीयडलि हरष न माइ ।
आग पालीमि जिनतणी रे पाम्यु एहवु नाह ॥ सा ॥ ५५ ॥
कान्हडि कूड कपट करीरे जीवे भराव्या वाड ।
तोरणि जब वर आवीउ रे पसूडे करीय रोहाड ॥ सा ॥ ५६ ॥
नेमि सारथी पूछीउ रे ए जीव विलविकाइ ।
पसूय बंधेसि उग्रसेन रे यादव गुरव थाइ ॥ ५७ ॥ सा ॥
करुणा वाणी जव सांभलि रे सारथी तु अवधार ।
धिग धिग पडु इणि परणिवेरे नहीं करुं लाख संधार
॥ सा ॥ ५८ ॥

जिनजी बंधन काटीया रे पसूयां मेहल्यां रानि ।
रथवाली वेगि वल्यु रे पुहुतु सहसा मन्न ॥ सा ॥ ५९ ॥

राजुल का विलाप

तव राजिल विलपी हुई रे कहु सखी कवण विनाण ।
केहा अवगुण मि कीया रे चली गउ नाह सुजाण ॥ सा ॥ ६० ॥
तव राजिल धरणी ढली रे सीतल करि उपचार ।
वाय वालि वर वींजिणे रे चेत वाल्यु तीणीवार ॥ सा ॥ ६१ ॥
नेम पूठियाली पुलि रे प्रीउ प्रीउ करती जाइ ।
नव भव केरी आगि प्रीतडी रे कोइ वासु मोह नाह ॥ सा ॥ ६२ ॥
कंकण फोडि करतणा रे रमण मइ भोडि हार ।
काजल लूहिलु हणेरे राजि न गोहर सार ॥ सा ॥ ६३ ॥
संसार संग सवि परिहरी रे होउ बाल ब्रह्मचार ।
मुगतिनु पंथ जिणि आदर्यु रे लीधु संयम भार ॥ सा ॥ ६४ ॥
राजिल राणी झूरती रे जाई मली नेमि पास ।
स्वामीइ संयम आलीउं रे रयणामि गलि जास ॥ सा ॥ ६५ ॥
गिरि गिरिनारि जाई चडयु रे आदर्यु सुलसुध्यान ।
घाति करम सवि चूरीयां रे उपनुं केवल ज्ञान ॥ सा ॥ ६६ ॥
इन्द्रासन तव कांपीउं रे नेम नि प्रगट्युं ग्यान ।
सुर नर पन्नग आवीया रे रच्युं समोस्रण ताम ॥ सा ॥ ६७ ॥

ज्ञान महोछव नीपनु रे जय-जय रव हौउ जाम ।
सुर नर पन्नग रमी करी रे पुहुता निज निज ठाम ।। सा ।। ३८ ।।
देशवदेश संबोधीया रे चली आव्या गिरिनार ।
काया कुटीरज परिहरी रे मुगति होउ भरतार ।। सा ।। ६९ ।।
श्री यसकीरति सुपसाउलि ब्रह्म यसोधर भणि सार ।
चलण न छोडउं स्वामी तह्म तणा मुझ भवचां दुःख निवार
।। सा ।। ७० ।।
भणसि जे नर सांभलि रे धन धन ते अवतार ।
नवनिधि तस घर उपजि रे ते तरसि संसार ।। सामला ।। ७१ ।।
इति नेमिनाथ गीत समाप्तः

नेमिनाथ गीत
राग सोरठा

नेम जी आवु न घरे घरे, बाटडीयां जोइ सिवया माडली रे ।
तुं तु चतुरां देविदयाल रथ रे वाली रेवि गिरि गउ रे ।
नेमजी आवु न घरे । १ ।
कपट करीय मोरारि नेम रे कारणि रायमि काई वरी रे ।
मलीयान अपार अपार, जूना रे गढ अखी सामला रे ।रूडा नेमि. । २
तोरणि आयु वर नेमि २ पसूडा रे करुणामइ तिहां रडि रे ।
दया धरी दीनदयाल छोडी रे सहसावन व्रति सांचर्या रे ।
नेमजी । ३ ।
उग्रसेन धी ताम, कारण रे जाणी नेमनि वीनवि रे ।
नव भव तु भरतार, धरमि रे देव दया करू रे । नेमजी । ४ ।
रायमि गई गिरिनार २ नेम रे चलणि तप आचर्यु रे ।
भव सागर मुझ तार २ ब्रह्म यसोधर इम वीनवि रे ।
नेमजी आ० । ५ ।

मल्लिनाथ गीत

सरसति स्वामिण वीनवुं मागुं एक पसाउ रे ।
तह्म परसादि गाइसुं रूयडा जिणवर राउ रे ।

(३)

प्रणमु नेमिकुमार सार जिणि संयम धरउ ।
प्रणमु नेमिकुमार मयण समरंगणि वरउ ।
प्रणमु नेमिकुमार तजीय जिणि राजलि राणी ।
प्रणमु नेमिकुमार कर्म आठह् अंति आणी ।
प्रणमतां जनमि आठि अहर मुगति नारि जेह् चित वसी ।
ब्रह्म यशोधर इम कहि तेह् पाप पंक जाइलसी ।। १ ।।

(४)

करु धर्म्म एक सार वार मम लाउ प्राणी ।
वली समरु नवकार भाव ते मन माहि् प्राणी ।
सेवु अरिहंत आदि वाद भांजि भव केरा ।
दया करी दिउ दान ज्ञान पामु बहुतेरा ।
मन वच काया वसि करी आपणपुं इम तारीइ ।
ब्रह्म यशोधर इम भणि जिम नरय तणां दुख वारीइ ।।१।।
पुहुवि परगट पास जास वासुग फणि सोहि् ।
कमठ उत्तारय, नाद देव मानव मन मोहि् ।
डाकिणि शाकिणि भूत वेमि वितर भय पालि ।
अतिसय अधिक अपार मनहवंछित वर आलि ।
सेवुज स्वाम मूरति सकल अकल रूप आनंद करि ।
ब्रह्म यशोधर इम भणि ते सेवतां स्वामि कालिद्र हरि ।।२।।

(५)

राग केदार

पसूडां तोरणि परिहरी, रायमि जीणी परिहरी ।
परिहरि विषयाकेरी वेलडी जी ।। १ ।।
मयणराउ जिणि मोडीय, बाल्यु रथडु मोडीय ।
मोडीय मोह माया अंगि आवंता जी ।। २ ।।
उग्रसेन मनवा लिहो तेहज मन नवि वालि हो ।
वालि हो मनडु ए मुगति भणी जी ।। ३ ।।
सुर नर मलीया केवडा नेमि गुण गाइ केवडा ।
केवडा गिरिनारी उत्सव करिजी ।। ४ ।।

नेमि संयम पामीयां, केवल रमणी पामीयो ।
पामीयां सिद्धवधू त्रिभुवन पतीजी ॥ ५ ॥
यादव ना गुण बोलि हो ब्रह्म यसोधर बोलि हो ।
बोलि हो सिवसुख आपु सामला जी ॥ ६ ॥

इति नेमिगीतं

(६)

राग सामेरी

नेमि निरंजन नाथ निरोपम तोरणि पसुडां निहाली री ।
सयल जीवदया बंधन टाली चाल्यु त्यधु वाली री ।
बोलंती राणी रायमि नेमि पुहुतु गढ गिरिनारी ।
मुगति रमणि तणि रंगि रातु पूरव प्रीत विसारी री । बोलं ॥१॥
[illegible] संयम नेमि आली री ।
पंच महाव्रत दुर्द्धर झाली विषय तणी सुख पाली री
बोलं ॥ २ ॥
सामला वर्ण सेवक सुख कर्त्ता काम कुंजर मद हर्त्तारी ।
ब्रह्म यसोधर नु स्वामी समरथ अविचल पद
सोइ वर्त्तारी ॥ बोलंती ॥ ३ ॥

(७)

राग प्रभाती

मूरति मोहण वेल भणी जि, अवर उपम्म कहु कुण दीजि ।
यादु भवीयण पास पूजी जि, मानव भव फल निश्चिली । प्रा । १ ।
चंदन केसर घणां घसी जि, मंगीय अंगी मलगिरि रची जी
। प्रा । २ ।
चंपक वेल वुल सरीरे चालु, कुंद किरणी करी भव भय-टालु
। प्रा । ३ ।
धरणि पयो मया सेवा सारि, पतीपवि पन्न प्रावंतडां वारि
। प्रा । ४ ।
ब्रह्म यसोधर कहि सिर नामी, सिव सुख दाता नेमीसुमि स्वामी
। प्रा । ५ ।

(८)

राग प्रभाती

पसूडां कारणि परहर्यु रे राजिल सरसु राज ।
सयल सजन मोकलावी चाल्यु करवा आतम काज ।
बाई रे शिवा देवी कहि माहरु ।

सामलीउ रे वरिषा अनि किम रहिसि
अंगि उघाडु एकलडु रे सीता तप किम सहिसि । शि । १ ।
गढ़ गिरिनार जाई तप मंड्यु, मयण राउ जिणि दंड्यु ।
मोह मच्छर मद हेलां घंड्यु, सविहि परिग्रह छांड्यु । शि । २ ।
ध्यान अनल परगट जिणि पूरी, कर्म काष्ट सव चूरी ।
ब्रह्म यशोधर कहि शिर नामी, मुगति गाहि तेणि पामी जाई

(९)

राग गुडी

सकल मूरति ए सोहामणु स्वामीय श्री पास जिणंद रे ।
परम सायर सोहि चंद्रमा दीठडि रे हुइय आणंद रे ।
आवु आवु भवीयण भेटवा, दाबुजीछि देवदयाल रे ।
भाव भगति सु पूजा रचु गीत नृत्य करु अबला बाल रे

। आवु । १ ।
अश्वसेन रायां अंगो अमी नयर वाणारसी वास रे ।
वम्मा देवी राणी उयरि उपनु सेवकनी पूरवि आस रे

। आवु । २ ।
नयर जीराउलि मंडणु नाम सुर नर वहि आण रे । आवु । ३ ।
जिनवर कहीइ मेंवीसमु मोड्यु कमठ चुमाण रे ।
श्री विजय कीरति गुरु पाय नमी अवरन मागउं देव रे

। आवु । ४ ।
ब्रह्म यसोधर हरषि वीनवि भवि भवि तह्म पाय सेव रे

। आवु । ५ ।

(१०)

राग आसाउरी

समुद्र विजय सुत यादव राजा, तोरणि आया करी दिवाजा ।

बांहिडी साहि सुणु समरथ सांई, अवरनाथ हुं न मागुं कांई

। बांहि । १ ।

हिरण रोझ सवि संबर पेषी, पसूय छोडी नागी गढ उवेषी

। बांहि । २ ।

विरह वियापी राजिल नारि, नेमनाथ मेरे जीवन आधार

। बांहि । ३ ।

रैवि गिरि श्री नेम तप करीयु, यसोधर ब्रह्म तु स्वामी

मुगति वरीउ । बांहि । ४ ।

(११)

राग सोरठा

गढ जूनु अस तलहटी रे लाई गिरिसवां माहि सार ।

जेह सिर स्वामि समोसर्‍या लाई राजमती भरतार ।

हो नेमजी सेवकनी करे सार ।

तोरा गुणह न लाभुं पार तुं त्रिभुवन तारण हार ।नेम० । १ ।

शिषर पांचि सोहि भलां रे लाइ रेवैया केरि श्रृंग ।

स्वाम पूजन विनायक रे अलगा सहिर अंबाई उतंग हो

। नेम० । २ ।

अस पाजि पग मांझ तारे लाई हीयडो लि अतिहि आणंद ।

गयंदमि कुंड अंग क्षाली रे लाई पूजिवु नेमि जिणंद

। हो नेम० । ३ ।

मानव भवजु पामीउ रे लाई सफल करु रे संसार ।

ब्रह्म यसोधर इम कहि रे लाई सामलु सुख दातार ।

हो नेम० । ४ ।

(१२)

राग धन्यासी

यान लेई नेमि तोरणि आउ, पसू छोडी गउ गिरिनार ।

अब कब आविगु रे, इम बीनवि राजिल नारि ।

नेमि कब आविगु रे । अब० । १ ।

हुं एकलडी निरधार नाह कब आविगु रे ।

मेरे प्राण जीवन आधार अब कब आविगु रे ।

समुद्र विजय सबया नंदन यादव कुल सिणगार । अब० । २ ।
ऊजलि गिरि तप लेई जिन सीधु पाम्यु सिवपुर वास । अब० । ३ ।
ब्रह्म यसोधर वली वली वीनवि दुखदहन चलणे राष
। अब० । ४ ।

(१३)

राग सबाब

संसार सागर गहन अपारा ।
लाख रे चुराशी माहि मंदिर विहारा ।
चेत रे प्राणी सुणु जिनवाणी, ध्याउ एक परम पुरष
मनि प्राणी । चे० । १ ।
पंच वरण तु फिरि फिरि आउ, तारण धरमति एक न
पाउ । चे० । २ ।
मरण जनमन दोहिली लाधु, तु हवि जीवडा आतम
साधु । चे० । ३ ।
तारण वेवली तु जिनदेवा, यसोधर ब्रह्म करि तुम
पाय सेवा । चे० । ४ ।

(१४)

राग सोरठा

वागवाणी वर मागु माता दि मुझ अविरल वाणी ।
यसकीरति गुरु गाउ गिरिया, महिमा मेर समाणी ।।
आवु आवु रे भवीयण मनि रली रे
चाउल रयणे चुक पूराबु सहि गुरु चलण वधावु । आवु ।। १ ।।
सोमकीरति गुरु केरी वाणी, बानपणि मनि आणी रे ।
संसार ए असण भंगुर जाणी, चारित्र सु मति माणी रे ।। २ ।। आवु ।।
पंच महाव्रत कुंवर धरीया, क्षमा षडग अणसरीया रे ।
काम क्रोध माया मद मछर, दूरि सवि परिहरीया रे ।। ३ ।। आवु ।।
अभिनवु गौतम शिषि अवतरीउ, थूल भद्र जिम सोहि रे ।
चिद्रूप चिंतन करि निरंतर, वाणी यजन मन मोहि रे ।। ४ ।। आवु ।।
माता लीलादे ऊमरि उपनु, साहु वीरा मल्हार रे ।

काष्ठ संघ दिन कर जिम सोहि नंदीतट गच्छ सिणगार रे

॥ ५ ॥ आबु ॥

देश विदेश विख्यात विभूषण, सार तत्त्व गुण आणि रे।

रामसेन कुलदीपक उदय, सकल सिद्धांत वखाणि रे ॥ ६ ॥ आबु ॥

श्री सोमकीर्ति गुरु पाट धोरीसर सोल कला जिसु चंद्र रे।

ब्रह्म यशोधर इणी परि वीनवि श्री संघ करि आणंदू रे ॥ ७ ॥ आबु ॥

(१५)

राग सोरठा

गढ जूनु जस तलहटी रे लाई गिरि सवां माहि सार।

जेह सिर स्वामि समोसर्या रे लाई राजमती भरतार।

हो नेमजी सेवक नी करे सहाय।

तोरा गुणह न लाभुं पार, तुं तु त्रिभुवन तारण हार

॥ १ ॥ हो नेमजी ॥

शिखर पांचि सोहि भला रे लाई रेवैया केरि शृंग।

स्वाम पूजन विनायकरे अलूणा सहिर अंबाई उत्तंग ॥ २ ॥ हो नेमजी ॥

जस पाजि पाग मांक्ति तारे लाइ हीयडोलि अतिहि आणंद।

गयंदमि कुंड अगथाली रे लाई पूजिनू नेमि जिणंद ॥ ३ ॥ हो नेमजी ॥

मानव भव जु पामीउ रे लाई सफल करू रे संसार।

ब्रह्म यशोधर इम कहि रे लाई, सामलु सुखदातार ॥ ४ ॥ हो नेमजी ॥

(१६)

राग धन्यासी

प्रीतडी रे पाली राजिल इम कहिरे।

हीय डोलि हरस न माइ घरि घरि गूडी जूनिगढि

उछली रे।

घस्यु रे नीसाणे घाइ ॥ प्रीतडी० ॥ १ ॥

छपन कोडि यादव मिल्या रे।

रथ रे घोडा नहीं पार।

पेहडीयां रे घेर विछाईउ रे।

पुहुतलारे तोरण बार ॥ प्रीतडी० ॥ १ ॥

सोल रे शृंगार रायगि अंगि करीरे ।

सखीए पर वरी सार ।

गुखरे चडीनि जोइ राणी वालीए रे ।

नव भव नेह रे भरतार ।। प्रीतडी० ।। २ ।।

गुहिर गुफराङ्गु जीवे माडी नेमजी रे सुणी देई कान ।

परिहरी चाल्यु राणी रायमि मेल्हीडां परतीं हो ते रानि ।

प्रीतडी रे पालु पेला भवतणी रे ।

अबला म मेल्ह, रे निरधार ।

रथडु रे वाली देव दया करु रे ।

भवि भवि तु भरतार ।। प्रीतडी० ।। ३ ।।

दुखरे दहन श्री गिरिवर गउ रे ।

रायमि करि रे विलाप ।

ओढि रे नगोवर बाजू बंध बहिरषारें ।

प्रीछवि रे उग्रसेन बाप ।। प्रीतडी० ।। ४ ।।

नेमरे चलणे तप मांडीउ रे ।

छांडीउ रे काम विकार ।

ब्रह्म रे यसोधर इम वीनवि रे ।

त्रिभुवन तारण मुझ तार ।। प्रीतडी० ।। ५ ।।

(१७)

राग धर्मस

श्रंगि है अनोपम वेष रे करी उग्रसेन घरि आय राजिल वरी ।

बोलि बोलि रे राणी राजमती ।

नवह भवंतर नेह तजीनि दयामि नेमि थया यती ।। बोलि ।। १ ।।

छपन कोड यादव दल रे साजी,

बार कोडि साढी वाजित्र वाजी ।। बोलि ।। २ ।।

अति रे उछाह नेमि तोरणि गया,

पसूडां पोकार सुणी ऊभारे रह्या ।। बोलि ।। ३ ।।

नेमजी कहि रे ईणो कवण काज ।

परण्यां गुख तह्मनि यादव राज ।। बोलि ।। ४ ।।

सुण रे सारथी तह्मि कहुं रे आप ।
अपर जीवकेरु अनंत पाप ।। बोलि ।। ५ ।।
सुख बइठी राजिल जोइ रे आली ।
पसूहा बंधन छोडी गउ रथ वाली ।। बोलि ।। ६ ।।
पूरव प्रीतडीमां स्वामी मन पवा ।
दुर्जन ना बोल तह्मे मन थी टालु ।। बोलि ।। ७ ।।
राजिलि नेमि पामी जाई गिरनार ।
ब्रह्म रे यशोधर कहि संसार ।। बोलि ।। ८ ।।

(१८)
राग कालेरु

चेतु लोई २" थिर म कहु दया दान
जे उदय आरोही सिवपुर जामि सोई ।चेतु।१।।
चंचल धन तनु चंचल जाणु यौवन चंचल माणु रे ।
बीज तेज जिम क्षण एक दीसि हीयडि अस्थिर आणु रे ।।चेतु।।२।।
बंधव पुत्र कलित्रज कहि ना पितर माइ परिवारा रे
अबंरि अभ्र पटज जिम दीसि अथिर एह संसारा रे ।।चेतु।।३।।
लंक राइ जे रावण राणु नल नहुष परिमाणु रे ।
अवर राइ वर कोई न रहीया हूया होसि जे जाणु रे ।।चेतु।।४।।
ज्ञान दृष्टि तह्मे जोउ विचारी परिहुस धन परनारी रे ।
ब्रह्म यशोधर ए गुण दाखि तेहनि समरथ सरणि राखि रे ।।५।।

नामानुक्रमणिका

नाम	पृ. सं.
अश्वसेन	२५
अमरकीर्ति	२५
अमृत महादेवी	४३
अजितनाथ	१६६
अनन्तकीर्ति	८२
अभयमति	६३
अभयरुच	६३
अनन्तवासं	२
आदित्यसेन	८१
आदिनाथ स्वामी	५, २६, ८०
उभयकीर्ति	२५, ८३
उदयसेन	२५, ८२
उपाध्याय संवेग सुन्दर	२
कनककीर्ति	२५
कल्याणकीर्ति	६४
कबीरदास	२
कनकप्रभसूरि	२
कनकसेन	८१
काऊ	६
कीर्तिध्वज	५८
कीर्तिधर	६४, ६५
कृष्णदास	४, १०
कुमारसेन	२५, ८३
कुमुदचन्द्र	१७५
कुलभूषण	८१, १२५
कुलवनशेख	२
कुन्दनलाल	६३
कुन्दकुदाल	८३
केगामती	१३०
कैलास	७६
केशवसेन	८१
कैशक	१५, ४२, ६३
साहू खेमारा भांझू	७
गंगसेन	७६
गंगा	५४
गारवदास	१
गांधी भूपा	६
गुरुनानक	२
गुणसेन	८२
गुणचन्द्र	१५८
गुणकीर्ति	१, २, ८१, १२०, १२२, १२८, १५६

नाम	पृ. सं.	नाम	पृ. सं.
गुणदेव	२५, ८२	जिनसेन	२५, ८३
गूजर	१९५	जिनदास	२, ४, ९४, १२०
गोजसेन	७६		१२१, १२८, १२६
धर्मदास	१२०	जोहरापुरकर	४
धनश्री	१५४	ठक्कुरसी	१
धर्मसेन	३, २५, ८६	महाकवि तुलसीदास	१२६
चरणदास	२	दशरथ	१३०
चन्द्रसेन	८१	देशभूषण	१२५
चन्द्रमति	१४, ४१, ६२, ६६	देवकीर्ति	८१
चन्द्रावति	१६	देवभूषण	२५, ८२
चतुरुमल	१	देवेन्द्रकीर्ति	१७१
चारुसेन	२५	नंदासुनन्दा	९०
चारुकीर्ति	२५	ब्र. नाना	६
चारुदत्त	१५८	नागसेन	७६
चारित्रसेन	८१	नाभिराय	८९, ९४
छीहल	१	नेमसेन	७९, ८०, ८१
जयसेन	२५, ८२	नेमिदास	१२०
जयकीर्ति	२५, ८३	भ. नेमिनाथ	१६५, १६६,
जसोधर	६२, ६६		१७३, १९८
जसोमति	४३, ५३	नोपसेन	७६
जंबूस्वामी	७४	पद्मकीर्ति	२५, ८१ ८३

नाम	पृ. सं.	नाम	पृ. सं.
पद्मसेन	८३	भ. मल्लिनाथ	१७५, २०४
पद्मावती	७९	मल्लिदास	१२०
भ. पार्श्वनाथ	६	महाकवि सिंह	१५७
पुरुषोत्तम	२	रानी मल्हिदेवी	९४
बलिभद्र	१७७	वाचक मतिशेखर	२
बहलोल लोदी	४	मारसेन	८१
बुधराज	१	मारदत्त	१३, ३४
भवसेन	२५	मालव	१७३
भवकीर्ति	२५, ८३	मिश्र बन्धुविनोद	१, २
भट्ट	८०	मेरुकीर्ति	८२
भानुकीर्ति	२५	मेरसेन	८१
भीमसेन	२ ८, २५, ८६	मेघसेन	८१
भुवनकीर्ति	२५, २६, ८४	मृगावती	२
भूषण	४	यशःकीर्ति	१, २, ८१, १५७, १५८, १६०, १६१, १६३, १६४, १९२
मल्लसेन	२५, ८३		
महेन्द्रसेन	८१		
महमूद	२६	यशोधर	१, २, ७, ११, १४, १५, १६, ४२, ६६, ९३, १२१, १६४, १६५, १७२, १७७, १९२, १९७, २०३
मल्लसेनाचार्य	८३		
मनोहर	१२०		
मल्लकीर्ति	८१		
मनदकीर्ति	८२		

नाम	पृ. सं.	नाम	पृ. सं.
	२०५, २०६, २१०	लक्ष्मसेन	२५, २७, ८५, ८६
	२११	लक्ष्मीचन्द चाँदवाड़	१७१
यशोमति	१५, ४५, ६२, ६४		
योगी	१६१	ललितकीर्ति	८२
रत्नकीर्ति	२५, २६, ८२, १७५	लोककीर्ति	२५
रयणकीर्ति	८५	वरदत्त	५८
रइधू	६४		
रविकीर्ति	२५	वासुपूज्य स्वामी	१६६, १७२,
रविषेणाचार्य	१२२		१६६
रामकीर्ति	८३, १५७, १५८	वासवसेन	२५, २६, ८१
राजकीर्ति	२५	विजयकीर्ति	२५, ८१, ८३,
रामसेन	८, ६, ७६, ७७		१६४, १६५, १७१,
	७८, ८१, १६४, १६२		१७२, १६४, १६५
रामचन्द्र शुक्ल	१	विजयसेन	८१, १५८, १६४
रामचन्द्र सूरि	२		१६२
		विमलकीर्ति	८२, १५७
		विशालकीर्ति	२५, ८२
रुकमणी	१०	विश्वसेन	२५, ८२
रुद्रा	६	विश्वनन्दि	२५
रैदास	२	वीरसेन	५, ६, ७, ८१
लक्ष्मीसेन	६	शान्तिदास	१२०

नाम	पृ. सं.
शान्तिनाथ स्वामी	४, ८६
शीतलनाथ स्वामी	५, ७, ११, १२, १३
शुभचन्द्र	११, १७१
शुभकीर्ति	२५
सकलभूषण	१७१
सकलकीर्ति	११, १५८, १६४, १७२, १६४
सहदेवी	९८
संभवनाथ	७, १५८
सहस्रकीर्ति	८१
सांगू	१, २, १०, ९३, ९४, १०४
सुदत्ताचार्य	१७
महाकवि स्वयंभू	१२२, २६, ९२
सुरसेन	२५
सुमति	१३०

नाम	पृ. सं.
सोमकीर्ति	१, २, ३, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, २५, २६, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ७३, ८१, ८६, ९१, ९३, १२१, १६४, १६५, २११
सोमदेव	१३, २६ ९२, १५७
संयमसेन	२५
सहस्रसेन	८१
सुकोसलराय	९३, ११९
हरिषेण	९७
हरसेन	८१
हरिराम	२
श्रुतकीर्ति	८१
श्रीकीर्ति	२५, ८३
श्रेयांस	७, ९०

नाम	पृ. सं.	नाम	पृ. सं.
श्री शान्ति	७८	उपाध्यायज्ञानसागर	२
त्रिलोचनदास	२	ज्ञानभूषण	११, १७१
त्रिभुवनकीर्ति	८१	ज्ञानदास	१२८, १५६
त्रिलोककीर्ति	२५	ऋषभनाथ	२७, ६१, ६४

ग्रंथानुक्रमणिका

अष्टाह्निका व्रत कथा	६, १०	पज्जुण्णचरिउ	१५७
आदिनाथ विनती	१, २६, ६१	पद साहित्य	१७५
गीता भानुप्रकाश	२	प्रद्युम्न चरित्र	८, १०
गुरुनामावलि	६, २६, ३३, ७४, ८३	पाण्डव पुराण	१५७
धर्मविवेक	२	बलिभद्र चुपई	१६६, १६७, १७७
धर्मपरीक्षा	१५८	मल्लिगीत	६, ३०, ३३
चिन्तामणी पार्श्वनाथ जयमाल	६, ३२, ३३, ६२	मल्लिनाथ गीत	१६६, १७५, २०३
चौबिस तीर्थंकर भावना	१६१	मृगावली	२
जसहर चरिउ	१२	यशोधर चरित्र	८, १०, १३
जगत सुन्दरी प्रयोगमाला	१५७	यशोधर रास	६, १२, १३, १३, ३४, ७३
जिणरत्तिहा	१५७	यशस्तिलक चम्पू	१२
नेमिनाथ गीत	१५६, १६६, १७३, १९८, २०३	योगीवाणी	१६१

नाम	पृ. सं.	नाम	पृ. सं.
राजर्षि चरित	२	वैराग्य गीत	१६६, १७१,
रामसीतारास	१२०, १२१,		१६७
	१३०, १५६,	सप्त व्यसन कथा	४
रामरास	१२०	सप्तव्यसन कथा समुच्चय	८
राजस्थान के जैन सन्त	१२०	समवसरण पूजा	६, १०
रिषभनाथ	६, २९, ३३	सारसिखामन रास	२
की धूली	८७, ९१	सुकोशलराय	९३, ९४,
बृहत्कथाकोश	९३	चुपई	१०४, ११६
वासुपूज्य गीत	१६६, १७२	हरिवंश पुराण	१५७
	१६५	त्रेपनक्रियागीत	६, २८, ३३
विजयकीर्त्ति गीत	१७१, १६४	श्रीपालरास	२
		(ज्ञानसागर)	

नगर, ग्राम एवं प्रदेशानुक्रमणिका

अंगदेश	१००, १०६	उजैणी-उजैनी	१६, ४१, ४३
अरुणग्राम	११२		५३, ५६, ५८;
अष्टपद	१०२, १०४		६२, ६३
अयोध्या	९४, १०४, १०५	उदयपुर	५
	१०८, ११३,	कुंकणनि	९७
	१२५, ५१३	कुंडलपुर	९७
अहमदाबाद	६	करणाट/कर्नाटक	५३, ९७,
आमेर	६		१०२, १०८

नाम	पृ. सं.
करहाटक	५३
कोंकण	६७, १००
कोशल	८७
खरासरण	६७, १००, १०४
गउड	१७२
गूजर देश	६७, १७३
गुजरात	४, ७, ११, ८७,
	१०२
गिरिपुर	१६५
गुडलीनगर	११, १२
गोपाचल	१०८, १६३
चम्पापुर	१००, १०६
चित्रकोट	७४
चीतुडगढ	१२२, १२४, १४०
चीण	१००, १०४
जयपुर	५, ६, १३, १५७
जम्बुद्वीप	१३, ३४, १०४
	१७७
जयसिंहपुरा खोर	५
जाउर	७४
जोधपुर	२
डूंगरपुर	५, ६, ४८, १५८
	१७५
ढीली	१७३

नाम	पृ. सं.
देहली	४
धुलेव	१५८
नागौर	१५८
नालछिपाटण	१४०
पावापुर	१००, १०४,
पोयणपुर	१००
प्रह्लादनगर	७
बंगदेश-बंगाल	१००, १०४
बंसपाल	१७२
बागड़	६
बांसवाड़ा	१६५
मगध	१००
मथुरा	७५, १३१, १०८,
	१५५
मरहठ, महाराष्ट्र	६७, १०२
	१७३
मरुस्थली	६७, १००
मालव	४६, १७३
मारवाड़	६७, १०६
मुलतान,	६७, १००, १०२
	१०६
मेवाड़ मेदपाट	११, ७६, ६७
	१०६
मोष देश	३४
रणथम्भोर	१३

नाम	पृ. सं	नाम	पृ. सं.
राजपुर	१३, ३४	साकेता	१३०
राजस्थान	५, ७, ६, ७६	सांगानेर	६
रामपुरी	१४१	सूरपुर	५
राजग्रही	१०४	सोजित्रा	४, ७, ३६, ८६
रेवासा	१५८	सोमपुर	१२५
लाड देश	६७, १७३	हथिणाउर	१०, ६८ १००
[illegible]	१२२, १४१		१०१